॥ ॐ ॥

जैन स्तोत्र पूजा पाठ संग्रह

[दैनिक एवं पर्व के दिनों मे करने योग्य
सभी पूजाओ व पाठों का संग्रह]

प्रकाशक

वीर पुस्तक भण्डार
मनिहारो का रास्ता, जयपुर-३
(राजस्थान)

हरिश चन्द्र ठोलिया
15, नवजीवन उपवन,
मोती डूंगरी रोड, जयपुर-4

परिवर्धित संस्करण

मूल्य रु० १६-००

प्राप्ति- [illegible] दर्शन के[illegible]
जयपुर

प्राप्ति स्थान —

वीर पुस्तक भण्डार

मनिहारों का रास्ता, जयपुर–३ (राज०)

[फोन ७३५२५, निवास ७६६६७]



वीर पुस्तक मन्दिर

श्री महावीरजी, जिला–सवाई माधोपुर

(राजस्थान)

मुद्रक —

श्री वीर प्रेस

मनिहारों का रास्ता, जयपुर–३

कृपया संशोधन करके पढ़ें ।

पृष्ठ १५०—पंक्ति १४ वी में धूप की जगह दीप पढ़ें उसके बाद पढ़े

दश विधि ले धूप बनाय, तामे गंध मिला ।

तुम सन्मुख खेऊ आय, आठो कर्म जला ॥ चादन० ॥ धूप ॥

पृष्ठ १५१—पंक्ति २० वी के बाद पढ़ें ।

ॐ ह्रीं महावीर जिनाय वैशाखशुक्लादशम्या केवलज्ञानप्राप्तायार्घ्यं ।

कार्तिक जु अमावश कृष्ण, पावापुर ठाही ।

भयो तीनलोक मे हर्ष, पहुँके शिव माही ॥ चादन० ॥

विषय-सूची

विषय-सूची

शास्त्रस्वाध्याय का प्रारम्भिक मंगलाचरण

ओंकारं बिन्दुसयुक्तं, नित्य ध्यायन्ति योगिन ।
कामदं मोक्षद चैव, ओंकाराय नमो नमः ।।१।।
अविरल-शब्द-घनौघ-प्रक्षालित-सकल-भूतल-मल-कलङ्का ।
मुनिभिरुपासित-तीर्था, सरस्वती हरतु नो दुरितान् ।।२।।
अज्ञान-तिमिरान्धाना ज्ञानाञ्जन-शलाकया ।।
चक्षुरुन्मीलितं येन, तस्मै श्रीगुरवे नमः ।।३।।

* श्रीपरमगुरवे नमः, परम्पराचार्यगुरवे नमः *

सकल-कलुष-विध्वंसकं, श्रेयसा परिवर्धकं, धर्म-सम्बन्धक भव्य-जीव-मनः प्रतिबोध-कारकं, पुण्य-प्रकाशकं, पाप-प्रणाशकमिद शास्त्रं श्री ' '' नामधेय, अस्य मूलग्रन्थकर्त्तारः श्री सर्वज्ञदेवास्तदुत्तरग्रन्थ-कर्तारः श्रीगणधरदेवाः प्रतिगणधर-देवास्तेषा वचनानुसारमासाद्य आचार्य श्रीकुन्दकुन्दाद्याम्नाये श्री'.... विरचित, श्रोतारः सावधानतया शृण्वन्तु ।

मङ्गल भगवान् वीरो, मङ्गल गौतमो गणी ।
मङ्गल कुन्दकुन्दाद्यो, जैनधर्मोऽस्तु मङ्गलम् ।।१।।
सर्वमङ्गल-माङ्गल्यं, सर्व-कल्याण-कारक ।
प्रधान सर्व-धर्माणां, जैन जयतु शासनम् ।।२।।

।। इति ।।

॥ वीतरागाय नमः ॥



* नित्य पूजा *

ॐ नमः सिद्धेभ्य. ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॐ नमः सिद्धेभ्यः

पणविवि पञ्चपरमगुरु गुरु जिन शासनो,
सकल सिद्धि दातार सु विघन विनाशनो ।
शारद अरु गुरु गौतम सुमति प्रकाशनो,
मङ्गल कर चउ सङ्घहि पाप पणासनो ।

पापहि पणासन गुणहि गरुआ, दोष अष्टादश-रहिउ ।
धरि ध्यान कर्म विनाशि केवल-ज्ञान अविचल जिन लहिउ ।
प्रभु पञ्चकल्याणक विराजित सकल सुर-नर ध्यावहीं,
त्रैलोक्यनाथ सुदेव जिनवर जगत मङ्गल गावही ।
उदक-चन्दन-तंदुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घकैः ।
धवल-मङ्गल-गान-रवाकुले जिनगृहे पञ्चकल्याणमहं यजे ॥

ॐ ह्रीं श्री भगवान के गर्भ जन्म तप ज्ञान निर्वाण पञ्च कल्याणकेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अभिषेक पाठ

श्रीमज्जिन तुम चरण नख, नव्य कज हित सूरि ।
विघ्न-शिलोच्चय दलन पवि, नमूं हरन भव भूरि ॥१॥

अपराजित मन्त्रोऽयं, सर्व-विघ्न-विनाशकं ।
मङ्गलेषु च सर्वेषु, प्रथमं मङ्गलं मत ।।

मत्तगयन्द छन्द

श्री जिनके पदपंकजको नमि नित्य सही विधि न्हौन प्रसारें ।
ताहित सन्मुख तिष्ठत उज्ज्वल द्रव्य सुधार यहां विस्तारें ।।
कंचन पीठक पै करि स्वस्तिक पुष्प सुगंधित धोकरि डारें ।
तामधि तोय शिवालय-नायक श्री अभिषेक हितार्थ सुधारें ।।

ॐ ह्रीं सिंहपीठे जिनबिम्ब स्थापयाम्यहम् ।।

नीर महाशुचि गंधत चंदन अक्षत पुष्प सु ले अनियारे ।
व्यंजन संजुत ले चरु उत्तम दीप धूप फल अर्घ सु धारे ।।
यो वसु द्रव्य तनों करि अर्घ उतारि-उतारि यजो पद थारे ।
द्यो मुझ शीघ्र शिवालय वास सदा तुम भव्य उबारन वारे ।।

ॐ ह्रीं स्नपनपीठे स्थित-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कृत्रिम और अकृत्रिम बिम्ब सनातन राजत श्री जिन तेरे ।
तास तनी नित इन्द्र उपासन ठानत भानत कर्म करेरे ।।
क्षीर समुद्र नदी नद तीरथ तास तनो जल प्रासुक हेरे ।
कंचन कुंभ भरे परिपूरण ल्याय यथाक्रम उत्थित टेरे ।।१।।
कर्मजंजीर जर्‌यो यह जीव शुभाशुभ भोगत ज्ञान न पायो ।
पै अब कालसुलब्धि प्रसाद लह्यो तव दर्शन आनन्द आयो ।।
हो तुम कर्मकलङ्क-विनाशक प्रेम तऊ इत प्रेरित लायो ।
हो गुनकार करों अभिषेक वरों शिवनारि समय अब आयो।।२।
यों कहि दीप चहो दिशि जोय कियो बहु धूमसु धूपक करो ।

धन्य-धन्य जिनराज लोक में वसुविध कर्म जलावन हारे ॥

इति पठित्वा जिनविम्बस्य सम्मार्जनं करोम्यहम् ।

दोहा—मार्जन करि वेदी विषै, सिंहासन परि थापि ।
प्रातिहार्य युत निरख जिन, यजन करो गुन जापि ॥

॥ पुष्पांजलि ॥

लघुपंचामृताभिषेक भाषा

शुद्ध घृत-दुग्ध आदि से पञ्चामृत अभिषेक करना हो तो यह पाठ बोलना अथवा पंचामृत के अभाव में सिर्फ जलधारा से काम लेना ।

दोहा—श्रीजिनवर चौबीस वर, कुनयध्वांतहर भान ।
अमितवीर्यदृगबोधसुख,—युत तिष्ठौ इहि थान ॥

नाराच छन्द

गिरीश शीस पाडुपै, सचीश ईश थापियो ।
महोत्सवो अनंदकन्दको, सबै तहां कियो ॥
हमें सो शक्ति नाहिं व्यक्त देखि हेतु आपना ।
यहां करें जिनेन्द्रचन्द्रकी, सुबिम्ब थापना ॥

पुष्पांजलि क्षेपणकर श्रीवर्णपर जिनबिम्ब की स्थापना करे ।

कनकमणिमय कुंभ सुहावने, हरि सुक्षीर भये अति पावने ।
हम सुवासित नीर यहां भर, जगतपावन-पाय तर धरैं ॥३॥

पुष्पांजलि क्षेपणकर वेदी के कोनो मे चार कलश स्थापित करें ।

शुद्धोपयोग समान भ्रमहर, परम सौरभ पावनो ।
आकृष्ट भृङ्ग समूह गग—समुद्भवो अति भावनो ॥
मणिकनककुम्भ निसुम्भकिल्विष, विमल शीतल भरि धरौं ।

श्रम स्वेद मल निरवार जिन त्रय धार दे पांयनि परौं ।।४।।

ॐ ह्रीं श्रीमत भगवन्त सकलकर्मक्षयार्थं अद्य जलेनाभिषिञ्चे ।

अति मधुर जिनधुनि सम सुप्रीणित प्राणिवर्ग सुभावसो ।
बुधचित्तसम हरिचित्त नित्त, समिष्ट इष्ट उछावसो ।।
तत्काल इक्षुसमुत्थ प्रासुक रतनकुम्भ विषै भरौं ।
श्रम त्रास ताप विचार जिन त्रय धार देपांयनि परौं ।।५।।

ॐ ह्रीं श्रीमत भगवन्त सकलकर्मक्षयार्थं अद्य इक्षुरसेन भिषिञ्चे ।

निस्तप्त-क्षिप्त-सुवर्ण-मद-दमनीय ज्यों विधि जैनको ।
आयुप्रदा बलबुद्धिदा, रक्षा सु यो जिय-सैनको ।।
तत्काल मंथित क्षीर उत्थित, प्राज्य मणिभारी भरौं ।
दीजै अतुलबल मोहि जिन, त्रय धार दे पायनि परौं ।।६।।

ॐ ह्रीं श्रीमत भगवन्त सकलकर्मक्षयार्थं अद्य घृतेनाभिषिञ्चे ।

शरदभ्र शुभ्र सुहाटकद्युति सुरभि पावन सोहनो ।
क्लीवत्वहर बल धरन पूरन, पय सकल मनमोहनो ।।
कृतउष्ण गोथनतै समाहृत मणिजटितघट मे भरौं ।
दुर्बल दशा मो मेट जिन त्रय धार दे पांयनि परौं ।।७।।

ॐ ह्रीं श्रीमत भगवन्त सकलकर्मक्षयार्थं अद्य दुग्धेनाभिषिञ्चे ।

वर विशद जैनाचार्य ज्यो लघुराम्लकर्कशता धरै ।
शुचिकर रसिक मथन विमंथित नेह दोनो अनुसरै ।।
गोदधि सुमणिभृङ्गार पूरन लायकर आगे धरौं ।
दुखदोष कोष निवार जिन त्रय धार दे पांयनि परौं ।।८।।

ॐ ह्रीं श्रीमत भगवन्तं सकलकर्मक्षयार्थं अद्य दध्नाभिषिञ्चे ।

सर्वौषधी मिलाय के, भरि कंचन भृङ्गार ।
जजों चरण त्रय धार दे, तारतार भवतार ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीमत भगवन्त सकलकर्मक्षयार्थमद्य सर्वौषधिभ्यामभिषिच्ये ।

विनय पाठ

दोहा— इह विधि ठाडो होय के, प्रथम पढे जो पाठ ।
धन्य जिनेश्वर देव तुम, नाशे कर्म जु आठ ॥१॥
अनन्त चतुष्टय के धनी, तुमही हो सिरताज ।
मुक्तिवधू के कंथ तुम, तीन भुवन के राज ॥२॥
तिहुं जग की पीड़ा हरन भवदधि शोषणहार ।
ज्ञायक हो तुम विश्व के, शिव सुख के करतार ॥३॥
हरता अघ-अंधियार के, करता धर्म प्रकाश ।
थिरतापद दातार हो धरता निज गुण रास ॥४॥
धर्मामृत उर जलधिसो, ज्ञान-भानु तुम रूप ।
तुमरे चरण सरोज को, नावत तिहु जग भूप ॥५॥
मैं बन्दौं जिनदेव को, कर अति निर्मल भाव ।
कर्मबंध के छेदने, और न कछु उपाव ॥६॥
भविजन को भवकूपतैं, तुमही काढ़नहार ।
दीनदयाल अनाथपति, आतम गुण भंडार ॥७॥
चिदानंद निर्मल कियो, धोय कर्म रज मैल ।
सरल करी या जगतमें, भविजनको शिव गैल ॥८॥
तुम पद-पंकज पूजतैं, विघ्न रोग टल जाय ।

शत्रु मित्रता को धरे, विष निरविषता थाय ॥ ९ ॥
चक्री खगधर इन्द्रपद, मिलैं आपतैं आप ।
अनुक्रम कर शिवपद लहैं, नेम सकल हनि पाप ॥१०॥
तुम बिन मैं व्याकुल भयो, जैसे जल बिन मीन ।
जन्म जरा मेरी हरो, करो मोहि स्वाधीन ॥११॥
पतित बहुत पावन किये, गिनती कौन करेव ।
अंजन से तारे प्रभू, जय जय जय जिनदेव ॥१२॥
थकी नाव भवदधि विषैं, तुम प्रभु पार करेव ।
खेवटिया तुम हो प्रभू, जय जय जय जिनदेव ॥१३॥
राग सहित जग में रुल्यो, मिले सरागी देव ।
वीतराग भेट्यो अबै, मेटो राग कुटेव ॥१४॥
कित निगोद कित नारकी, कित तिर्यंच अज्ञान ।
आज धन्य मानुष भयो पायो जिनवर थान ॥१५॥
तुमको पूजें सुरपती, अहिपति नरपति देव ।
धन्य भाग मेरो भयो, करन लग्यो तुम सेव ॥१६॥
अशरण के तुम शरण हो, निराधार आधार ।
मैं डूबत भवसिंधु में, खेय लगाओ पार ॥१७॥
इन्द्रादिक गणपति थके, कर विनती भगवान ।
अपनो विरद निहारकै, कीजै आप समान ॥१८॥
तुमरी नेक सुदृष्टितैं जग उतरत है पार ।
हा हा डूब्यो जात हूँ नेक निहार निकार ॥१९॥
जो मैं कहहूँ और सौं, तो न मिटै उरझार ।

मेरी तो तोसौं बनी, तातें करौं पुकार ॥२०॥
वन्दौं पाँचो परम गुरु, सुर गुरु वन्दत जास ।
विघ्न हरन मगल करन, पूरन परम प्रकाश ॥२१॥
चौबीसो जिनपद नमो, नमो शारदा माय ।
शिवमग साधक साधु नमि, रच्यो पाठ सुखदाय ॥२२

अथ पौर्वाह्णिकदेव- (पुष्पाजलि क्षेपण करें) स्तव समेतं श्रीजिन
वदनाथाम् पूर्वाचार्यानुक्रमेण
पूजन प्रारम्भ
प्रतिज्ञा कार्योत्सर्गं
सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावंदना- करोमि

ॐ जय जय जय ! नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु ।

णमो अरिहताण, णमो सिद्धाण, णमो आइरियाण ।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोये सव्वसाहूण ॥१॥

ॐ ह्रीं अनादिमूलमत्रेभ्यो नमः । (पुष्पांजलि क्षेपण करना) चत्तारि मङ्गल–अरिहता मङ्गल, सिद्धा मङ्गलं, साहू मङ्गल, केवलिपण्णत्तो धम्मो मङ्गल । चत्तारि-लोगुत्तमा–अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहूलोगुत्तमा, केवलिपण्णतो धम्मो लोगुत्तमो चत्तारि सरण पव्वज्जामि–अरिहते सरणं पव्वजामि, सिद्धे सरण पव्वज्जामि, साहू सरण पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्त धम्म सरणं पव्वज्जामि ॥ ॐ नमोऽर्हते स्वाहा । (पुष्पाजलि)

अपवित्रः पवित्रो वा सुस्थितो दुःस्थतोऽपि वा ।
ध्यायेत्पञ्चनमस्कार, सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥१॥
अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थाङ्गतोऽपि वा ।
यः स्मरेत्परमात्मानं स बाह्याभ्यन्तरे शुचिः ॥२॥

अपराजित–मन्त्रोऽयं सर्वविघ्न–विनाशनः ।
मङ्गलेषु च सर्वेषु प्रथमं मङ्गलं मतः ॥३॥
एसो पञ्च णमोयारो सव्वपावप्पणासणो ।
मङ्गलाणं च सव्वेसिं पढमं होइ मंगलं ॥४॥
अर्हमित्यक्षरं ब्रह्म–वाचकं परमेष्ठिनः ।
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं सर्वतः प्रणमाम्यहं ॥५॥
कर्माष्टकविनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मी–निकेतनं ।
सम्यक्त्वादिगुणोपेतं सिद्धचक्रं नमाम्यहं ॥६॥
विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति शाकिनी-भूतपन्नगाः ।
विषं निर्विषतां याति स्तूयमाने जिनेश्वरे ॥७॥

(यहां पुष्पांजलि क्षेपण करना चाहिये)

[यदि अवकाश हो तो यहाँ पर सहस्रनाम पढकर दश अर्घ देना चाहिये, नहीं तो नीचे लिखा श्लोक पढकर एक अर्घ चढावें ।]

उदक-चन्दन-तंदुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घकैः ।
धवल-मंगल-गान-रवाकुले जिनगृहे जिननाथमहं यजे ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिन-सहस्रनामेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

॥ स्वस्ति मंगल ॥

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवंद्य जगत्त्रयेशं, स्याद्वाद-नायकमनंत-चतुष्टयार्हम् । श्रीमूलसङ्घ-सुदृशां सुकृतैकहेतुर्जैनेन्द्र-यज्ञ-विधिरेष मयाऽभ्यधायि ॥९॥ स्वस्ति त्रिलोकगुरवे जिनपुङ्गवाय, स्वस्ति-स्वभाव-महिमोदय-सुस्थिताय । स्वस्तिप्रकाश-सहजोर्ज्जितदृङ्मयाय, स्वस्ति प्रसन्न-ललिताद्भुत-वैभवाय ॥१०॥

स्वस्त्युच्छलद्विमल-बोध-सुधाप्लवाय, स्वस्ति स्वभाव-परभाव-विभासकाय, स्वस्ति त्रिलोक-विततैकचिदुद्गमाय, स्वस्ति त्रिकाल-सकलायत-विस्तृताय ।।११।। द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूप, भावस्य शुद्धिमधिकामधिगतुकामः । आलंबनानि विविधान्यवलम्ब्य वलगन्, भूतार्थयज्ञ-पुरुषस्य करोमि यज्ञं ।१२। अर्हत्पुराण-पुरुषोत्तम पावनानि, वस्तून्यनूनमखिलान्ययमेक-एव । अस्मिन् ज्वलद्विमल-केवल-बोधवह्नौ, पुण्य समग्रमह-मेकमना जुहोमि ।।१३।।

ॐ ह्री विधियज्ञ–प्रतिज्ञानाय जिनप्रतिमाग्रे पुष्पाजलि क्षिपेत् ।

श्री वृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अजितः ।
श्री संभवः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अभिनन्दनः ।
श्री सुमतिः स्वस्ति, स्वस्ति श्री पद्मप्रभः ।
श्री सुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्री चन्द्रप्रभः ।
श्री पुष्पदन्तः स्वस्ति, स्वस्ति श्री शीतलः ।
श्री श्रेयासः स्वस्ति, स्वस्ति श्री वासुपूज्यः ।
श्री विमलः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अनन्तः ।
श्री धर्मः स्वस्ति, स्वस्ति श्री शान्तिनाथः ।
श्री कुन्थुः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अरनाथः ।
श्री मल्लिः स्वस्ति स्वस्ति श्री मुनिसुव्रतः ।
श्री नमिः स्वस्ति, स्वस्ति श्री नेमिनाथः ।
श्री पार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्री वर्द्धमानः ।।

(पुष्पाजलि क्षेपण करें)

नित्याप्रकम्पाद्भुत-केवलौघाः स्फुरन्मनःपर्यय-शुद्धबोधाः ।
दिव्यावधिज्ञानबलप्रबोधाः स्वस्ति क्रियासु.परमर्षयो नः ।१।
(यहा से प्रत्येक श्लोक के अन्त मे पुष्पाजलि क्षेपण करना चाहिये)
कोष्ठस्थ-धान्योपममेकबीज सभिन्न-सश्रोतृ-पदानुसारि ।
चतुर्विध बुद्धिवल दधानाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।२।
संस्पर्शन सश्रवण च दूरादास्वादनघ्राणविलोकनानि ।
दिव्यान् मतिज्ञानवलाद्वहता स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।३
प्रज्ञा-प्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः प्रत्येकबुद्धाः दशसर्वपूर्वैः ।
प्रवादिनोऽष्टाङ्गनिमित्तविज्ञा. स्वस्ति क्रियासु.परमर्षयो नः४
जङ्घावलि-श्रेणि-फलाम्बु-तंतु-प्रसून-बीजांकुर-चारणाह्वा. ।
नभोऽङ्गण-स्वैर-विहारिणश्च स्वस्ति क्रियासुःपरमर्षयो न.५
अणिम्नि दक्षाःकुशला महिम्निःलघिम्नि शक्ता.कृतिनो गरिम्णि
मनोवपुर्वाग्वलिनश्च नित्य स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो न. ।६
सकामरूपित्ववशित्वमैश्य प्राकाम्यमंतर्द्धिमथाप्तिमाप्ता. ।
तथाऽप्रतीघातगुणप्रधानाः स्वस्ति क्रियासु परमषयो न ।७
दीप्त च तप्त च तथा महोग्र घोर तपो घोरपराक्रमस्थाः ।
ब्रह्मापर घोरगुणा श्चरतः स्वस्ति क्रियासु· परमर्षयो न ।८।
आमर्षसर्वौषधयस्तथाशीर्विषविषा दृष्टिविषविषाश्च ।
सखिल्ल-विड्-जल्लमलौषधीशा स्वस्ति क्रियासु परमर्षयोन ९
क्षीर स्रवतोऽत्र घृत स्रवन्तो मधुस्रवन्तोऽप्यमृत स्रवन्तः ।
अक्षीणसवासमहानसाश्च स्वस्ति क्रियासु· परमर्षयो न. १०
(इति पुष्पाजलि ([इति परम-ऋषि स्वस्ति मगल विधान]

देव-शास्त्र-गुरु की भाषा-पूजा

[कवि द्यानतराय कृत]

(अडिल्ल छन्द)—प्रथम देव अरिहन्त सुश्रुत सिद्धान्तजू ।
गुरु निर्ग्रन्थ महन्त मुकतिपुर पथजू ।।
तीन रतन जग माँहि सो ये भवि ध्याइये ।
तिनकी भक्ति प्रसाद परम पद पाइये ।।१।।

दोहा—पूजौं पद अरिहन्त के, पूजौं गुरुपद सार ।
पूजौं देवी सरस्वती, नित प्रति अष्ट प्रकार ।।

ॐ ह्री देव-शास्त्र-गुरु समूह ! अत्र अवतर अवतर सवौषट् आह्वानम् ।
ॐ ह्री देवशास्त्र गुरु समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापनम् ।
ॐ ह्री देवशास्त्र गुरु समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

।। गीता छन्द ।।

सुरपति उरगनरनाथ तिनकर, वन्दनीक सुपदप्रभा ।
अति शोभनीक सुवर्ण उज्ज्वल, देखि छवि मोहित सभा ।।
वर नीर क्षीरसमुद्र घट भरि, अग्र तसु बहुविधि नचूं ।
अरिहंत श्रुत सिद्धान्त गुरु, निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूं ।।

दोहा—मलिन वस्तु हर लेत सब, जल स्वभाव मल छीन ।
जासों पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ।।१।।

ॐ ह्री देव-शास्त्र गुरुभ्यो जन्म जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्व० ।

जे त्रिजग उदर मंझार प्राणी, तपत अति दुद्धर खरे ।
तिन अहितहरन सुवचन जिनके, परम शीतलता भरे ।।
तसु भ्रमर लोभित घ्राण पावन, सरस चदन घसि सचूं ।
अरिहंत श्रुत सिद्धान्त गुरु निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूं ।।

दोहा—चन्दन शीतलता करे, तपत वस्तु परवीन ।
जासो पूजो परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ।।२।।

ॐ ह्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो ससार-ताप-विनाशनाय चन्दन निर्व० ।

यह भवसमुद्र अपार तारण के निमित्त सुविधि ठई ।
अति दृढ परमपावन जथारथ, भक्ति वर नौका सही ।।
उज्ज्वल अखडित सालि तदुल, पुञ्ज धरि त्रयगुण जचू ।
अरिहन्त श्रुत सिद्धान्त गुरु निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूं ।।

दोहा—तदुल सालि सुगध अति, परम अखण्डित बीन ।
जासो पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ।।३।।

ॐ ह्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षत निर्व० स्वाहा ।।३।।

जे विनयवत सुभव्य उर, अबुज प्रकाशन भान हैं ।
जे एक मुख चारित्र भाषित त्रिजग माहि प्रधान हैं ।।
लहि कुन्द कमलादिक पहुप, भव भव कुवेदन सो बचू ।
अरिहंत श्रुत सिद्धान्त गुरु निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूं ।।

दोहा—विविध भाति परिमलसुमन, भ्रमर जासु आधीन ।
जासौं पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ।।४।।

ॐ ह्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो कामवाणविध्वसनाय पुष्पं निर्व० स्वाहा ।

अति सबल मदकंदर्प जाको, क्षुधा उरग अमान है ।
दुस्सह भयानक तासु नाशनको, सु गरुड़ समान है ।।
उत्तम छहो रस युक्त नित, नैवेद्यकरि घृत मे पचूं ।
अरिहन्त श्रुत सिद्धान्त गुरु निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूं ।।

दोहा—नानाविधि संयुक्तरस, व्यञ्जन सरस नवीन ।
जासों पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥५॥
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्व० स्वाहा ।

जे त्रिजग उद्यम नाश कीने, मोहतिमिर महाबली ।
तिहि कर्मघाती ज्ञानदीप, प्रकाश ज्योति प्रभावली ॥
इह भांति दीप प्रजाल, कंचनके सुभाजन में खचूं ।
अरिहन्त श्रुत सिद्धान्त गुरु निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूं ।

दोहा—स्वपर प्रकाशक ज्योति अति, दीपक तमकर हीन ।
जासों पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥६॥
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्व० स्वाहा ।

जे कर्म-ईंधन दहन अग्नि, समूह सम उद्धत लसै ।
वर धूप तासु सुगन्ध ताकरि, सकल परिमलता हंसै ॥
इहि भांति धूप चढ़ाय नित, भवज्वलन माहीं नहिं पचूं ।
अरिहन्त श्रुतसिद्धान्त गुरु निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूं ॥

दोहा—अग्नि माहिं परिमल दहन, चन्दनादि गुणलीन ।
जासों पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥७॥
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व० स्वाहा ॥७॥

लोचन सु रसना घ्राण उर, उत्साह के करतार हैं ।
मोपै न उपमा जाय वरणी, सकल फल गुणसार हैं ॥
सो फल चढ़ावत अर्थपूरन, परम अमृतरस सचूं ।
अरिहन्त श्रुत सिद्धान्त गुरु निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूं ॥

दोहा—जे प्रधान फल फलविषैं, पञ्चकरण रस लीन।
जासो पूजौं परमपद देव शास्त्र गुरु तीन।८॥
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व० स्वाहा॥८॥
जल परम उज्ज्वल गंध अक्षत पुष्प चरु दीपक धरूं।
वर धूप निर्मल फल विविध, बहु जन्म के पातक हरूं॥
इह भांति अर्घ चढाय नित भवि करत शिवपंकति मचूं।
अरिहन्त श्रुत सिद्धान्त गुरु निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूं॥
दोहा—वसुविधि अर्घ संजोय के, अति उछाह मन कीन।
जासो पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन॥९॥
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्व० स्वाहा॥

अथ जयमाला।

देव शास्त्र गुरु रतन शुभ, तीन रतन करतार।
भिन्न भिन्न कहुं आरती अलप सुगुण विस्तार॥१॥

पद्धरि छन्द।

कर्मनकी त्रेसठ प्रकृति नाशि, जीते अष्टादश दोषराशि।
जे परमसुगुण हैं अनंत धीर, कहवत के छयालिस गुण गंभीर
शुभ समवसरण शोभा अपार, शत इन्द्र नमत कर शीसधार।
देवाधिदेव अरिहंत देव, वन्दों मन-वच-तनकरि सुसेव॥३॥
जिनकी धुनि ह्वै ओंकार रूप निर अक्षरमय महिमा अनूप।
दशअष्ट महाभाषा समेत, लघुभाषा सात शतक सुचेत॥४॥
सो स्याद्वादमय सप्त भङ्ग, गणधर गूंथे बारह सु अङ्ग।
रवि शशि न हरैं सो तम हराय, सो शास्त्र नमो बहु प्रीति ल्या

गुरु आचारज उवझाय साध, तन नगन रत्नत्रय निधि अगाध ।
संसार देह वैराग्य धार, निरवांछि तपैं शिवपद निहार ॥६॥
गुण छत्तिस पच्चिस आठ बीस, भवतारन-तरन जिहाज ईस ।
गुरुकी महिमा बरनी न जाय, गुरुनाम जपों मन-वचन-काय ॥७

सोरठा—कीजे शक्ति प्रमान, शक्ति बिना सरधा धरै ।
'द्यानत' सरधावान, अजर-अमर-पद भोगवै ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

देव-शास्त्र-गुरु-पूजा (श्री युगलजी कृत)

॥ स्थापना ॥

केवल-रवि-किरणों से जिसका, सम्पूर्ण प्रकाशित है अन्तर ।
उस श्री जिनवाणी में होता, तत्त्वों का सुन्दरतम दर्शन ॥
सद्दर्शन-बोध-चरण-पथ पर, अविरल जो बढ़ते हैं मुनिगण ।
उन देव परम आगम गुरु को, शत-शत वंदन शत-शत वंदन ॥
ॐ ह्रीं देव-शास्त्र-गुरु समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं ।
ॐ ह्रीं देव-शास्त्र-गुरु समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।
ॐ ह्रीं देव-शास्त्र-गुरु समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

पद्याष्टक ।

इन्द्रिय के भोग मधुर विष सम, लावण्यमयी[1] कंचन काया ।
यह सब कुछ जड़की क्रीड़ा है, मैं अब तक जान नहीं पाया ॥

---

१ सुन्दर ।

मैं भूल स्वयं के वैभव को, पर-ममता में अटकाया हूँ ।
अब सम्यक् निर्मल नीर लिये, मिथ्या-मल धोने आया हूँ ।।
ॐ ह्री श्रीदेव-शास्त्र गुरुभ्य मिथ्यात्वमल विनाशनाय जल नि० ।

जड़ चेतन की सब परणति प्रभु ! अपने अपने मे होती है ।
अनुकूल[1] कहे प्रतिकूल[2] कहे, यह झूठी मन की वृत्ती है ।।
प्रतिकूल सयोगो मे क्रोधित, होकर ससार बढाया है ।
सतप्त हृदय प्रभु ! चदन सम, शीतलता पाने आया है ।।
ॐ ह्री श्रीदेव-शास्त्र गुरुभ्य क्रोधकपायमल विनाशनाय चन्दन नि० ।

उज्ज्वल हूँ कुन्द[3] धवल हूँ प्रभु ! परसे न लगा हूँ किंचित् भी ।
फिर भी अनुकूल लगे उन पर, करता अभिमान निरतर ही ।।
जड़पर झुकझुक जाता चेतन, की मार्दव[4] की खडित काया ।
निज शाश्वत[5] अक्षत निधि पाने, अब दास चरणरज मे आया ।।
ॐ ह्री श्रीदेव-शास्त्र-गुरुभ्य मानकपायमल-विनाशनाय अक्षत नि० ।

यह पुष्प सुकोमल कितना है, तन मे माया[6] कुछ शेष नहीं ।
निज अन्तर का प्रभु ! भेद कहूँ, उसमे ऋजुता[7] का लेश नहीं ।।
चिंतन कुछ फिर सभाषण[8] कुछ, क्रिया कुछकी कुछ होती है ।
स्थिरता निज मे प्रभु पाऊँ जो, अन्तर का कालुष धोती है ।।
ॐ ह्री श्रीदेव-शास्त्र-गुरुभ्य मायाकपायमल-विनाशनाय पुष्पम् नि० ।

अब तक अगणित जड द्रव्यो से, प्रभु ! भूख न मेरी शात हुई ।।
तृष्णा की खाई खूब भरी, पर रिक्त[9] रही वह रिक्त रही ।।

---

१ अच्छा । २ बुरा । ३ एक श्वेत पुष्प । ४ निरभिमानता । ५ अविनाशी । ६ कुटिलाई ७ सरलता । ८ वचन । ९ खाली ।

युग युग से इच्छा-सागर में, प्रभु! गोते खाता आया हूँ।
पंचेन्द्रिय मन के षट्रस[1] तज, अनुपम रस पीने आया हूँ॥
ॐ ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यम् नि०
जग के जड़ दीपक को अबतक, समझा था मैंने उजियारा।
झंझा[2] के एक झकोरे में, जो बनता घोर तिमिर कारा॥
अतएव प्रभो! यह नश्वर दीप, समर्पण करने आया हूँ।
तेरी अन्तर लौ[3] से निज अन्तर-दीप[4] जलाने आया हूँ॥
ॐ ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि०।
जड़कर्म घुमाता है मुझको, यह मिथ्या भ्रान्ति रही मेरी।
मैं रागद्वेष किया करता, जब परिणति होती जड़ केरी[5]॥
यों भाव-करम या भाव-मरण, सदियों से करता आया हूँ।
निज अनुपम गंध अनल[6] से प्रभु! परगंध[7] जलाने आया हूँ॥
ॐ ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुभ्यो विभावपरिणतिविनाशनाय धूपम् नि०।
जग में जिसको निज कहता मैं, वह छोड़ मुझे चल देता है।
मैं आकुल-व्याकुल हो लेता, व्याकुल का फल व्याकुलता है॥
मैं शान्त निराकुल चेतन हूँ, है मुक्ति रमा सहचर मेरी।
यह मोह तड़ककर टूट पड़े, प्रभु! सार्थक फल पूजा तेरी॥
ॐ ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलम् नि०।
क्षणभर निज रस को पी चेतन, मिथ्यामल को धो देता है।
काषायिक भाव विनष्ट किये, निज आनन्द अमृत पीता है॥

१—इन्द्रिय व मन के छह विषय २—आंधी ३—केवलज्ञान ४—ज्ञानज्योति ५—की ६—स्वरूपाचरण रूपी अग्नि ७—वैभाविक परिणति।

मानस-वाणी अरु काया से, आश्रव[7] का द्वार खुला रहता ॥
शुभ और अशुभ की ज्वाला से, झुलसा है मेरा अन्तस्तल ।
शीतल समकित किरणें फूटें, संवर[8] से जागे अन्तर्बल ॥
फिर तपकी[9] शोधक वह्नि जगे, कर्मों की कड़ियाँ टूट पड़ें ।
सर्वाङ्ग निजात्म प्रदेशों से, अमृत के निर्झर फूट पड़ें ॥
हम छोड चलें यह लोक[10] तभी, लोकांत विराजे क्षण मे जा ।
निज लोक हमारा वासा हो शोकात बनें फिर हमको क्या ?
जागे मम दुर्लभबोधि[11] प्रभो ! दुर्नयतम सत्वर टल जावे ।
बस ज्ञाता-दृष्टा रह जाऊँ, मद-मत्सर-मोह विनश जावे ॥
चिर-रक्षक धर्म[12] हमारा हो, हो धर्म हमारा चिर साथी ।
जग मे न हमारा कोई था, हम भी न रहे जग के साथी ॥
चरणों मे आया हूँ प्रभुवर!, शीतलता मुझको मिल जावे ।
मुर्झाई ज्ञान-लता मेरी, निज अन्तरबल[1] से खिल जावे ॥
सोचा करता हू भोगो से, बुझ जायेगी इच्छा ज्वाला ।
परिणाम निकलता है लेकिन, मानो पावक[2] मे घी डाला ॥
तेरे चरणो की पूजा से, इन्द्रिय-सुख की ही अभिलाषा ।
अब तक न समझ ही पाया प्रभु! सच्चे सुखकी भी परिभाषा ॥
तुम तो अविकारी हो प्रभुवर! जग मे रहते जग से न्यारे ।
अतएव झुकें तव चरणो मे, जग के माणिक-मोती सारे ॥
स्याद्वादमयी तेरी वाणी[3] शुभनय के झरने झरते हैं ।
इस पावन नौका पर लाखों, प्राणी भव-वारिधि तिरते हैं ॥

१—आत्म पुरुषार्थ २—अग्नि ३—आगम

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशति-तीर्थङ्करा ! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशति तीर्थङ्करा ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठ ठ ।
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करा ! अत्र मम सन्निहिता भवत २ वषट्

इन्द्र फणीन्द्र नरेन्द्र वद्य, पद निर्मल धारी ।
शोभनीक संसार, सारगुण हैं अविकारी ।।
क्षीरोदधि सम नीरसो,(हो) पूजो तृषा निवार ।
सीमंधर जिन आदि दे बीस विदेह मझार ।।
श्री जिनराज हो भवतारण-तरण जहाज ।।१।।

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्य जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल नि०
(इस पूजा मे वीस पुञ्ज करना हो, तो इस प्रकार मत्र वोलना—
ॐ ह्रीं सीमधर—युगमधर—वाहु—सुवाहु—सजातक—स्वयप्रभ—ऋषभानन—अनतवीर्य—सूरीप्रभ—विशालकीर्ति—वज्रधर—चद्रानन—भद्रबाहु—भुजङ्गम—ईश्वर—नेमिप्रभ—वीरसेन—महाभद्र—देवयशोऽजित वीर्येति विंशतिविद्यमान तीर्थङ्करेभ्य जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल नि

तीन लोक के जीव, पाप आताप सताये ।
तिनको साता दाता, शीतल वचन सुहाये ।।
बावन चदन सो जजूं.(हो) भ्रमन-तपन निरवार । सीमधर

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो भवाताप—विनाशनाय चदन नि ।

यह संसार अपार, महासागर जिनस्वामी ।
तातैं तारे बड़ी, भक्ति नौका जगनामी ।।
तदुल अमल सुगधसो(हो) पूजो तुम गुणसार । सीमंधर ।३।

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षत निर्वं० ।

भविक-सरोज-विकास, निद्य-तमहर-रवि से हो ।
यति श्रावक आचार, कथन को तुम ही बडे हो ।।
फूल सुवास अनेकसो (हो) पूजो मदन प्रहार ।। सीमं. ।

॥ अथ जयमाला ॥

सोरठा—ज्ञान-सुधाकर चन्द, भविक-खेत-हित मेघ हो ।
भ्रम-तम-भान अमन्द, तीर्थङ्कर बीसो नमो ॥

॥ चौपाई १६ मात्रा ॥

सीमन्धर सीमन्धर स्वामी, जुगमन्धर जुगमन्धर नामी ।
बाहु बाहु जिन जगजन तारे, करम सुबाहु बाहुबल दारे ।१।
जात सुजात केवल-ज्ञान, स्वयंप्रभू प्रभु स्वय प्रधानं ।
ऋषभानन ऋषि भानन दोष, अनन्त वीरज वीरज कोष।२।
सौरीप्रभ सौरीगुणमालं, सुगुण विशाल विशाल दयालं ।
वज्रधार भव-गिरिवज्जर है, चन्द्रानन चन्द्रानन वर हैं ।३।
भद्रबाहु भद्रनिके करता, श्रीभुजङ्ग भुजङ्गम हरता ।
ईश्वर सबके ईश्वर छाजें, नेमिप्रभ जस नेमि विराजे ॥४॥
वीरसेन वीरं जग जानै, महाभद्र महाभद्र बखानै ।
नमों जसोधर जसधरकारी, नमो अजित-वीरज बलधारी ।५।
धनुष पाचसौं काय विराजे, आयु कोटिपूरव सब छाजे ।
समवसरण शोभित जिनराजा, भव-जलतारन-तरनजिहाजा।६
सम्यक् रत्नत्रयनिधिदानी, लोकालोक-प्रकाशक ज्ञानी ।
शतइन्द्रनिकरि वदित सोहैं, सुरनर पशु सबके मन मोहै ।७।

दोहा—तुमको पूजें वन्दना, करे धन्य नर सोय ।
'द्यानत' श्रद्धा मन धरै, सो भी धर्मी होय ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यम् निर्व० ।

॥ इत्याशीर्वादः ॥

श्री देव शास्त्र गुरु, विदेह क्षेत्रस्थ श्री विद्यमान बीस तीर्थङ्कर
तथा श्री अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी की

समुच्चय पूजा

दोहा—देव शास्त्र गुरु नमन करि, बीस तीर्थंकर ध्याय।
सिद्ध शुद्ध राजत सदा, नमूं चित्त हुलसाय।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्र–गुरुसमूह ! श्री विद्यमान विंशति-तीर्थङ्कर-समूह ! श्री अनन्तानन्त ! सिद्धपरमेष्ठी समूह ! अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वानन। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अष्टक

(चाल—करले करले तू नित प्राणी, श्रीजिन पूजन करले रे।)

अनादिकाल से जग मे स्वामिन्, जलसे शुचिता को माना।
शुद्ध निजातम सम्यक् रत्नत्रय, निधि को नहिं पहिचाना।।
अब निर्मल रत्नत्रय जल ले, देवशास्त्र गुरु को ध्याऊं।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊं।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्य श्री विद्यमान विंशति-तीर्थंकरेभ्य श्री अनन्तानन्त-सिद्ध-परमेष्ठिभ्यो जन्मजरा-मृत्यु-विनाशनाय जल नि०।

भव आताप मिटावन की, निज मे ही क्षमता समता है।
अनजाने मे अब तक मैंने, पर मे की झूंठी ममता है।
चन्दन सम शीतलता पाने, श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊं।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्धप्रभु के गुण गाऊं ।।चन्दन।२
अक्षय पद के विना फिरा, जग की लख चौरासी योनी मे।
अष्ट कर्म के नाश करन को, अक्षत तुम ढिग लाया मैं।।

अक्षय निधि निज की पाने अब, देवशास्त्र गुरु को ध्याऊं ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्धप्रभु के गुण गाऊं। अक्षतं।३
पुष्प सुगन्धी से आतम ने, शील स्वभाव नशाया है ।
मन्मथ बाणों से बिंध करके, चहुं गति दुख उपजाया है ।
स्थिरता निज मे पाने को श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊं ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्धप्रभु के गुण गाऊं ।।पुष्पं। ४
षट रस मिश्रित भोजन से, ये भूख न मेरी शान्त हुई ।
आतम रस अनुपम चखने से, इन्द्रिय मन इच्छा शमन हुई ।
भूख सर्वथा मेटन को, श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊं ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊं ।।नैवेद्य ५
जड़ दीप विनश्वर को अब तक, समझा था मैने उजियारा ।
निज गुण दरशायक ज्ञान दीपसे, मिटा मोहका अंधियारा ।
ये दीप समर्पित करके मै, श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊं ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊं ।।दीप।६
ये धूप अनल मे खेने से, कर्मों को नहीं जलायेगी ।
निज मे निज की शक्ति ज्वाला, जो राग द्वेष नशायेगी ।
उस शक्ति दहन प्रकटानेको, श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊं ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊं ।।धूपं ।७
पिस्ता बदाम श्रीफल लवग, चरणन तुम ढिग मै ले आया ।
आतमरस भीने निजगुण फल,मम मन अब उनमे ललचाया ।
अब मोक्ष महाफल पाने को श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊं ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊं ।।फलं।८

अष्टम वसुधा पाने को, कर मे ये आठो द्रव्य लिये।
सहज शुद्ध स्वाभाविकता से, निज मे निज गुण प्रकट किये।।
ये अर्घ समर्पण करके मै, श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊं ।।अर्घ्यं।६

॥ जयमाला ॥

नशे घातिया कर्म अर्हन्त देवा, करें सुरअसुर नर मुनि नित्य सेवा। दरश ज्ञान सुख बल अनन्त के स्वामी, छियालीस गुणयुक्त महाईश नामी। तेरी दिव्य वाणी सदा भव्य मानी, महा मोह विध्वंसिनी मोक्षदानी। अनेकान्त मय द्वादशांगी बखानी, नमो लोक माता श्री जैन वाणी।। विरागी अचारज उवज्झाय साधू, दरश ज्ञान भण्डार समता अराधूँ। नगन वेशधारी सु एका विहारी, निजानन्द मंडित मुकति पथ प्रचारी।। विदेह क्षेत्र मे तीर्थंकर बीस राजे, बिरहमान वन्दूं सभी पाप भाजें। नमूं सिद्ध निर्भय निरामय सुधामी, अनाकुल समाधान सहजाभिरामी।।

छन्द–देवशास्त्र गुरु बीस तीर्थंकर, सिद्ध हृदय बिच धरले रे।
पूजन ध्यान गान गुण करके, भवसागर जिय तरले रे।।

ॐ ह्री श्री देवशास्त्रगुरुभ्य, श्री विद्यमान-विंशति–तीर्थङ्करेभ्य. श्री अनन्तानन्त-सिद्ध-परमेष्ठिभ्य जयमाला पूर्णार्घ्यं नि०।

तीस चौबीसी का अर्घ

द्रव्य आठो जु लीना है, अर्घ कर मे नवीना है।
पूजता पाप छीना है, "भानुमल" जोर कीना है।।

दीप अढाई सरस राजे, क्षेत्र दश ता विषै छाजै ।
सात शत बीस जिन राजै, पूजता पाप सब भाजै ।।

ॐ ह्री पाच भरत, पाच ऐरावत दश क्षेत्र विषै तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं निर्व० ।

विद्यमान बीस तीर्थंकर का अर्घ

उदक-चदन-तदुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घकैः ।
धवल-मंगल-गान-रवाकुले जिनगृहे जिनराजमहं यजे ।।१।।

ॐ ह्री सीमधर-युगमधर-बाहु सुबाहु-संजातक-स्वयंप्रभ ऋषभानन अनन्तवीर्य-सूर्यप्रभ-विशालकीर्ति-वज्रधर-चन्द्रानन-भद्रबाहु-भुजङ्गम-ईश्वर-नेमिप्रभ-वीरसेन-महाभद्र-देवयशो-अजितवीर्येति विंशति-विद्यमान-तीर्थङ्करेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कृत्रिम व अकृत्रिम चैत्यालयो के अर्घं

कृत्याकृत्रिम-चारु-चैत्यनिलयान् नित्य त्रिलोकीगतान् ।
वन्दे भावनव्यतरान् द्युतिवरान् स्वर्गामरावासगान् ।।
सद्गन्धाक्षत-पुष्पदाम-चरुकैः, सद्दीप-धूपैः फलैः ।
द्रव्यैर्नीरमुखैर्यजामि सतत दुष्कर्मणा शान्तये ।। १ ।।

ॐ ह्री कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालय-सबधिजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं निर्व० ।

वर्षेषु वर्षान्तर-पर्वतेषु नन्दीश्वरे यानि च मन्दरेषु ।
यावति चैत्यायतनानि लोके, सर्वाणि बन्दे जिनपुंगवानां।२।
अवनि-तल-गतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां,
वन-भवन-गतानां दिव्य-वैमानिकानाम् ।
इह मनुज-कृताना देवराजार्चितानां,
जिनवर-निलयानां भावतोऽहं स्मरामि ।।

कालं अच्चन्ति पुज्जन्ति वन्दन्ति णमस्संति । अहमवि इह सतो तत्थ सताइ णिच्चकाल अच्चेमि पुज्जेमि वन्दामि णमस्सामि । दुक्खक्खओ कम्मक्खो बोहिलाहो सुगइगमण समाहिमरणं जिणगुणसंपत्तो होउ मज्झं ।।

(इत्याशीर्वाद । पुष्पाञ्जलि क्षिपेत्)

अथ पौर्वाह्लिक देववन्दनाया पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्मक्षयार्थं द्रव्यपूजा-वन्दना-स्तवसमेत श्रीसिद्धभक्ति-कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

णमो अरिहंताण णमो सिद्धाण णमो आइरियाण ।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।।
ताव काय पावकम्मं दुच्चरिय वोस्सरामि ।

[इसके अन्तर नो बार णमोकार मंत्र का जाप्य करना चाहिये]

।। अथ सिद्ध पूजा द्रव्याष्टक ।।

ऊर्ध्वाधोरयुत सबिन्दु-सपरं ब्रह्मस्वरावेष्टितं ।
वर्गापूरितदिग्गताम्बुज-दल तत्सन्धि-तत्त्वान्वितं ।
अन्तःपत्र-तटेष्वनाहतयुत ह्रींकार-सवेष्टितं ।
देव ध्यायति यः स मुक्ति-सुभगो वैरीभ-कण्ठीरवः ।।

ॐ ह्री श्री सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र अवतर अवतर सवौषट् । ॐ ह्री श्री सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ । ॐ ह्री श्री सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

❀ नोट-अगर दोपहर को पूजन करें तो पौर्वाह्लिक के स्थान पर मध्याह्लिक और सायकाल करे तो अपराह्लिक बोलना चाहिये ।

निरस्त-कर्म-सम्बन्धं, सूक्ष्म नित्यं निरामयम् ।
बन्देऽहं परमात्मानममूर्त्तमनुपद्रवम् ।।१।। [पुष्पाजलिम्]

जिन त्यागियो को विना द्रव्य चढाये भावो के द्रव्यो से ही पूजा करना हो, वे आगे के भावाष्टक को वोलकर करें। अष्टद्रव्य से पूजा करने वालो को भाव पूजा का अष्टक कदापि नही वोलना चाहिये।

सिद्धौ निवासमनुग परमात्म्य गम्यं, हीनादि-भाव-रहित भव-वीत-काय । रेवापगा-वरसरो-यमुनोद्भवानां नीरैयजे कलशगैर्वर-सिद्धचक्रम् ।।१।।

ॐ ह्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल०

आनन्दकन्दजनक-घन-कर्म-मुक्त, सम्यक्त्व-शर्म गरिमं जन-नार्ति-वीत । सौरम्य-वासित-भुव हरि-चन्दनानां, गन्धैर्यजे परिमलैर्वर-सिद्धचक्रम् ।।२।।

ॐ ह्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने ससारतापविनाशनाय चंदन

सर्वावगाहन-गुण सुसमाधि-निष्ठ,सिद्ध स्वरूप-निपुणं कमलं विशालं । सौगन्ध्य-शालि-वनशालि-वराक्षतानां, पुंजैर्यजे शशि-निभैर्वर-सिद्धचक्रम् ।।३।।

ॐ ह्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षत ।

नित्य स्वदेह-परिमाणमनादि-संज्ञं, द्रव्यानपेक्षममृत मरणा-द्यतीतम् । मन्दार-कुन्द-कमलादि-वनस्पतीनां, पुष्पैर्यजे शुभ-तमैर्वर-सिद्ध-चक्रम् ।।४।।

ॐ ह्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामवाणविध्वसनाय पुष्प० ।

ऊर्ध्व-स्वभाव-गमन सुमनोव्यपेतं, ब्रह्मादि-बीज-सहितं गग-

नावभासम् । क्षीरान्न-साज्य-वटकै रस-पूर्ण-गर्भै-र्नित्यं यजे चरुवरैर्वर-सिद्ध-चक्रम् ।।५।।

ॐ ह्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविध्वंसनाय नैवेद्यम् ।

आतंक-शोक-भय-रोग-मद-प्रशांतं,निर्द्वन्द्वभाव-धरण महिमा-निवेश । कर्पूर-वर्ति-बहुभिः कनकावदातै-र्दीपैर्यजे रुचिवरैर्वर-सिद्ध-चक्रम् ।।६।।

ॐह्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय दीप ।

पश्यन्समस्त-भुवनं युगपन्नितांतं, त्रैकाल्य-वस्तु-विषये निविड-प्रदीपम् । सद्द्रव्य-गंध-घनसार-विमिश्रितानां, धूपैर्यजे परिमलैर्वर-सिद्ध-चक्रम् ।।७।।

ॐ ह्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपम् ।

सिद्धासुराधिपति-यक्ष-नरेंद्र-चक्रै-र्ध्येयं शिव सकल-भव्य-जनैः सुवद्यम् । नारिंग-पूग-कदलीफल-नारिकेलैः, सोऽहं यजे वर-फलैर्वर-सिद्ध-चक्रम् ।।८।।

ॐ ह्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फल०

गंधाढ्यं सुपयो मधुव्रत-गणैः सग वर चन्दनम् ।
पुष्पौघ विमलं सदक्षत-चयं रम्यं चरुं दीपकम् ।।
धूपं गंधयुत ददामि विविध श्रेष्ठं-फल लब्धये ।
सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं सेनोत्तर वांछितं ।।९।।

ॐ ह्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं० ।

ज्ञानोपयोग–विमलं विशदात्मरूप, सूक्ष्म–स्वभाव–परमं

यदनंतवीर्यं । कर्मौघ-कक्ष-दहन सुख-शस्य-बीज, वन्दे सदा निरुपम वर-सिद्ध-चक्रम् ॥१०॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रैलोक्येश्वर-वन्दनीय-चरणा प्रापुः श्रियं शाश्वतीं ।
यानाराध्य निरुद्ध-चण्ड-मनसः सन्तोऽपि तीर्थङ्कराः ॥
सत्सम्यक्त्व-विबोध-वीर्य-विशदाऽव्याबाधताद्यैर्गुणैः ।
युक्तांस्तानिह तोष्टवीमि सततं सिद्धान् विशुद्धोदयान् ॥

(पुष्पांजलि)

अथ जयमाला ।

विराग सनातन शांत निरंश, निरामय निर्भय निर्मल हंस ।
सुधाम विबोध-निधान विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ।१।
विदूरित-संसृति-भाव निरंग, समामृत-पूरित देव विसंग ।
अबंध कषायविहीन विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ।२।
निवारित-दुष्कृत-कर्मविपाश, सदामल-केवल-केलि-निवास ।
भवोदधिपारग शान्त विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ।३।
अनंत-सुखामृत-सागर-धीर, कलंक-रजोमल-भूरि-समीर ।
विखण्डितकाम विराम विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ४।
विकार-विवर्जित तर्जित-शोक, विबोध-सुनेत्र-विलोकित-लोक
विहार-विराव विरंग विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ।५।
रजोमलखेदविमुक्त विगात्र, निरन्तर नित्य सुखामृतपात्र ।
सुदर्शनराजित नाथ विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ।६।

नरामरवन्दित निर्मल-भाव, अनन्त-मुनीश्वर-पूज्य विहाव ।
सदोदय विश्व महेश विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ।७।
विदर्भ वितृष्ण विदोष विनिद्र, परापर शंकर सार वितन्द्र ।
विकोप विरूप विशंक विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ।८।
जरामरणोज्झित वीतविहार, विचिंतित निर्मल निरहंकार ।
अचिंत्य-चरित्र विदर्प विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह।९।
विवर्ण विगंध विमान विलोभ, विमाय विकाय विशब्द विशोभ
अनाकुल केवल सर्व विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ।१०।
(घत्ता)-असम-समयसार चारुचैतन्यचिह्नं, पर-परणति-मुक्तं पद्मनन्द्रीन्द्र-वंद्यं । निखिल-गुण-निकेत सिद्धचक्र विशुद्धं, स्मरति नमति यो वा स्तौति सोऽभ्येति मुक्तिम् ।।११।।

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने महार्घ्यं ।

अथाशीर्वाद— —अडिल्ल छन्द ।

अविनाशी अविकार परम-रस-धाम हो,
समाधान सर्वज्ञ सहज अभिराम हो ।
शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध अनादि अनन्त हो,
जगत शिरोमणि सिद्ध सदा जयवन्त हो ।।१।
ध्यान अग्निकर कर्म कलंक सबै दहे,
नित्य निरंजन देव सरूपी ह्वै रहे ।
ज्ञायक ज्ञेयाकार ममत्व निवारिके,
सो परमातम सिद्ध नमों सिर नायकै ।।२।

दोहा—अविचल-ज्ञान-प्रकाशतें, गुण अनन्त की खान ।
ध्यान धरै सो पाइये, परम सिद्ध भगवान ।।

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं ।

सिद्ध पूजा का भावाष्टक

निज-मनो-मणि-भाजन-भारया, शम-रसैक-सुधा-रस-धारया ।
सकल-बोध-कला-रमणीयकं, सहज-सिद्धमहं परिपूजये ।।
सहज-कर्म-कलंक-विनाशनैरमल-भाव-सुवासित-चन्दनैः ।
अनुपमान-गुणावलि-नायकं, सहज-सिद्धमहं परिपूजये ।।
सहज-भाव-सुनिर्मल-तन्दुलैः, सकल-दोष-विशाल-विशोधनैः ।
अनुपरोध-सुबोध-निधानकं, सहज-सिद्धमहं परिपूजये ।।
समयसार-सुपुष्प-सुमालया, सहज-कर्मकरेण विशोधया ।
परम-योग-बलेन-वशीकृतं सहज-सिद्धमहं परिपूजये ।।
अकृत-बोध-सुदिव्य-निवेद्यकैर्विहित-जन्म-जरा-मरणान्तकैः ।
निरवधि-प्रचुरात्म-गुणालयं, सहज-सिद्धमहं परिपूजये ।।
सहज-रत्न-रुचि-प्रतिदीपकैः, रुचि-विभूति-तमः प्रविनाशनैः ।
निरवधि-स्वविकास-विकाशनं, सहज-सिद्धमहं परिपूजये ।।
निज-गुणाक्षय-रूप-सुधूपनैः, स्वगुण घाति-मल-प्रविनाशनैः ।
विशद-बोध-सुदीर्घ-सुखात्मकं, सहज-सिद्धमहं परिपूजये ।।
परम-भाव-फलावलि-सम्पदा, सहज-भाव-कुभाव-विशोधया ।
निज-गुण-स्फुरणात्म-निरंजनं, सहज-सिद्धमहं परिपूजये ।।
नेत्रोन्मीलि-विकास-भाव-निवहैरत्यन्त-बोधाय वै ।
वार्गंधाक्षत-पुष्प-दाम-चरुकैः सद्दीप-धूपैः फलैः ।।

यश्चिन्तामणि–शुद्ध–भाव–परम–ज्ञानात्मकैरर्चयेत् ।
सिद्धं स्वादुमगाध–बोधमचलं सचर्चयामो वयं ।।६।।इति।।

सिद्धचक्र पूजा

(अडिल्ल छन्द) अष्ट करम करि नष्ट अष्ट गुण पायकै ।
अष्टम वसुधा माँहि विराजे जायकै ।।
ऐसे सिद्ध अनन्त महन्त मनायकै ।
संवौषट् आह्वान करू हरषायकै ।।

ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिन् । अत्र अवतर अवतर, सवौषट् ।
ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठ ।
ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

छन्द त्रिभंगी

हिमवनगत गंगा आदि अभंगा तीर्थ उतंगा सरवंगा ।
आनिय सुरसंगा सलिल सुरंगा, करि मन चंगा भरिभृङ्गा ।।
त्रिभुवन के स्वामी त्रिभुवननामी, अन्तरजामी अभिरामी ।
शिवपुरविश्रामी निजनिधि पामी, सिद्धजजामी सिरनामी ।।

ॐ ह्रीं श्री अनाहतपराक्रमाय सर्वकमविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये जल निर्वपामीति स्वाहा ।।१।।

हरिचन्दन लायो कर्पूर मिलायो, बहु महकायो मनभायो ।
जलसंग घसायो रंगसुहायो, चरण चढायो हरषायो ।त्रि.।२।
ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।।२।।

तन्दुल उजियारे शशिदुतिहारे, कोमल प्यारे आनियारे ।
तुषखंड निकारे जलसु पखारे, पुंज तुम्हारे ढिग धारे ।त्रि.।३

त्रोटक छन्द

सुख सम्यग्दर्शन ज्ञान लहा, अगुरु-लघु सूक्षम वीर्य महा।
अवगाह अबाध अघायक हो, सब सिद्ध नमो सुखदायक हो ॥
असुरेन्द्र सुरेन्द्र नरेन्द्र जजें, भुवनेन्द्र खगेन्द्र गणेन्द्र भजें।
जर जामन मरण मिटायक हो, सब० ॥३॥
अमलं अचल अकलं अकुलं. अछल असल अरलं अतुलं।
अरलं सरल शिवनायक हो, सब० ॥४॥
अजर अमर अघर सुघरं, अडर अहरं अमर अधरं।
अपर असरं सब लायक हो, सब० ॥५॥
वृषवृन्द अमन्द न निन्द लहैं, निरदन्द अफन्द सुछन्द रहै।
नित आनन्दवृन्द बधायक हो, सब० ॥६॥
भगवन्त सुसन्त अनन्तगुणी, जयवंत महंत नमत मुनी।
जगजन्तु-तणो अघघायक हो, सब० ॥७॥
अकलंक अटंक शुभंकर हो निरडंक निशंक शिवंकर हो।
अभयंकर शंकर क्षायक हो, सब० ॥८॥
अतरंग अरंग असंग सदा, भवभंग अभंग उतंग सदा।
सरवंग अनंग नसायक हो, सब० ॥९॥
ब्रह्मण्ड जु मण्डलमण्डन हो, तिहुँ दंडप्रचंड विहण्डन हो।
चिद पिंड अखंड अकायक हो, सब० ॥१०॥
निरभोग सुभोग वियोग हरे, निरजोग अरोग अशोग धरे।
भ्रमभंजन तीक्षण सायक हो, सब० ॥११॥

जय लक्ष्य अलक्ष्य सुलक्ष्यक हो, जय दक्षक पक्षक रक्षक हो।
पण अक्ष प्रत्यक्ष खपायक हो, सब० ॥१२॥
निरभेद अखेद अछेद सही, निरवेद अवेदन वेद नहीं।
सबलोक अलोकहि ज्ञायक हो, सब० ॥१३॥
अमलीन अदीन अरीन हने, निजलीन अधीन अछीन बने।
जमको घनघात बचायक हो, सब० ॥१४॥
न अहार निहार विहार कबै, अविकार अपार उदार सबै।
जगजीवन के मन भायक हो, सब० ॥१५॥
असमाद प्रमाद सुस्वादरता, उनमाद विवाद विषादहता।
समता रमता अकषायक हो, सब० ॥१६॥
असमंध अधंद अरन्ध भये, निरवन्ध अखन्ध अगन्ध ठये।
अमनं अतनं निरवायक हो, सब० ॥१७॥
निरवर्ण अकर्ण उधर्ण बली, दुखहर्ण अशर्ण सुशर्ण भली।
बलि मोह की फौज भगायक हो, सब० ॥१८॥
अविरुद्ध अक्रुद्ध अजुद्ध प्रभू, अतिशुद्ध प्रबुद्ध समृद्ध बिभू।
परमातम पूरन पायक हो, सब० ॥१९॥
विररूप चिद्रूप-स्वरूप द्युती, जसकूप अनूपम भूप भुती।
कृतकृत्य जगत्त्रयनायक हो, सब० ॥२०॥
सब इष्ट अभीष्ट विशिष्ट हितू, उतकिष्ट वरिष्ट गरिष्ट मितू।
शिव तिष्टत सर्व सहायक हो, सब० ॥२१॥
जय श्रीधर श्रीघर श्रीवर हो, जय श्रीकर श्रीभर श्रीझर हो।
जय ऋद्धि सुसिद्धि बढायक हो, सब० ॥२२॥

दोहा—सिद्धसुगुण को कहि सकै, ज्यों विलस्त नभ मान।
'हिराचन्द' तातैं जजै, करहु सकल कल्याण ॥२३॥

ॐ ह्रीं श्री सम्यक्त्वाद्यष्टगुणाय अष्टकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(यहां पर विसर्जन भी करना चाहिये)

अडिल—सिद्ध जजैं तिनको नहिं आवै आपदा।
पुत्र पौत्र धन धान्य लहै सुख सम्पदा॥
इन्द्र चन्द्र धरणेन्द्र नरेन्द्र जु होयकैं।
जावैं मुक्ति मझार करम सब खोयकैं ॥२४॥

(इत्याशीर्वादः । पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।)

समुच्चय चौबीसी पूजा

वृषभ अजित संभव अभिनन्दन, सुमति पदम सुपार्श्व जिनराय
चन्द्र पुहुप शीतल श्रेयास नमि, वासुपूज्य पूजितसुरराय॥
विमल अनन्त धर्मजस उज्ज्वल,शांति-कुंथु अर मल्लिमनाय।
मुनिसुव्रत नमि नेमि पार्श्व प्रभु,वर्द्धमान पद पुष्प चढाय ।१।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादि-महावीरांत-चतुर्विंशति-जिन-समूह ! अत्र अवतर अवतर, संवौषट् आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्, सन्निधिकरणम्।

मुनिमन सम उज्ज्वल नीर, प्रासुक गंध भरा।
भरि कनक कटोरी धीर दीनो धार धरा॥
चौबीसों श्रीजिनचन्द, आनन्दकन्द सही।
पद जजत हरत भवफंद, पावत मोक्षमही ॥२॥

पद्धरि छन्द

जय ऋषभदेव ऋषिगण नमन, जय अजित जीतवसु अरि तुरंत।
जय संभव भवभय करत चूर, जय अभिनन्दन आनन्दपूर ।।
जय सुमति सुमतिदायक दयाल, जय पद्म पद्मद्युतितन रसाल ।
जय जय सुपास भवपासनाश, जय चंद चंद-तनद्युतिप्रकाश ।।
जय पुष्पदंत द्युतिदंत-सेत, जय शीतल शीतलगुण निकेत ।
जय श्रेयनाथ नुतसहस-भुज्ज, जय वासवपूजित वासुपुज्ज ।।
जय विमल विमलपद देनहार, जय जय अनंत गुनगन-अपार ।
जय धर्म धर्म शिवशर्म देत जय शांति शांति पुष्टी करेत ।
जय कुन्थ कुन्थवादिक रखेय, जय अरजिन वसुअरि छयकरेय।
जय मल्लि मल्ल हत मोह मल्ल, जय मुनिसुव्रत व्रतशल्ल-दल्ल।
जय नमि नित वासवनुत सपेम, जय नेमनाथ वृषचक्र नेम ।
जय पारसनाथ अनाथनाथ, जय वर्द्धमान शिवनगर साथ ।।

घत्ता--चौबीस जिनन्दा, आनंदकंदा, पापनिकंदा सुखकारी ।
तिनपदजुगचंदा, उदय अमंदा, वासव वंदा, हितधारी ।।

ॐ ह्रीं वृषभादिचतुर्विंशतिजिनेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सोरठा--भुक्ति मुक्ति दातार, चौवीसों जिनराज वर ।
तिनपद मनवचधार, जो पूजे सो शिव लहै ।।

(इत्याशीर्वाद । पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

सिद्ध पूजा

(कवि द्यानतराय विरचित)

परम ब्रह्म परमातमा, परम ज्योति परमीश ।
परम निरंजन परम शिव, नमो सिद्ध जगदीश ।।१।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

निरस्त-कर्म-सम्बन्धं सूक्ष्मं नित्यं निरामयम्।
वन्देऽहं परमात्मानममूर्तिमनुपद्रवम्॥ यत्र स्थापनम्॥

अथाष्टकम्

सोरठा—मोहि तृषा दुख देहि, सो तुमने जीती प्रभू।
जलसों पूजों नेह, मेरो रोग मिटाइयो॥१॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो सम्यक्त्व ज्ञान-दर्शनवीर्य-सूक्ष्मत्व-अवगाहन-अगुरुलघु-अव्याबाधाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

हम भव आतप माहिं तुम न्यारे संसार तैं।
कीजे शीतल छांहि, चन्दन सों पूजा करों॥ चन्दन॥२॥
हम औगुण समुदाय, तुम अक्षय गुण के भरे।
पूजों अक्षत लाय, दोष नाश गुण कीजिये॥अक्षत॥३॥
काम अगनि है मोहि निश्चय शील स्वभाव तुम।
फूल चढाऊं तोहि, सेवक की बाधा हरो॥ पुष्प॥४॥
मोहि क्षुधा दुख भूरि, ज्ञान खडगसों तुम हती।
मेरी बाधा चूरि, नेवज सों पूजा करों॥ नैवेद्य॥५॥
मोहतिमिर हम पास, तुम पर चेतन ज्योति है।
पूजूं दीप प्रकाश मेरो तम निर्वारिये॥ दीप॥६॥
उल्यो करम बन जाल, मुक्ति माहिं तुम सुख करौ।

खेऊं धूप रसाल, मम निकाल वन जाल से ॥ धूपं ॥७॥
अन्तराय दुखकार, तुम अनन्त थिरता लिये ।
पूजूं फल धर सार, विघन टार शिव फल करो ॥फल॥८॥
हम में आठों दोष, भजों अरघ लो सिद्धजी ।
दीजै वसु गुण मोक्ष, कर जोरै 'द्यानत' कहै ॥अर्घ्यं॥९॥

जयमाला

दोहा—आठ करम दृढ़ बन्ध सो, नर निव कंप्यो जहान ।
बन्ध रहित वसु गुण सहित, नमो सिद्ध भगवान ।१।

मोटक छन्द

सुख सम्यक् दर्शन ज्ञान पर, बल ना गुरु ना लघु बाध हरं ।
अवगाह अमूरति नायक हैं, सब सिद्ध नमो सुख दायक हैं ॥
अमलं अचल अतुल अटल अनन अमन अवच अकुल ।
अजर अमर जग ज्ञायक हैं, सब सिद्ध नमो सुख दायक हैं ॥
निरभोग स्वभोग अरोग परं, निरयोग असोग वियोग हरं ।
अरस स्वरसं दुख घायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ॥
सब कर्म कलंक अटक अज, नरनाथ सुरेश समूह जजं ।
मुनि ध्यावत सज्जन दायक हैं सब सिद्ध नमों सुख दायक हैं ॥
अविरुद्ध विशुद्ध प्रबुद्ध मय, सब जानत लोक अलोक चयं ।
परमं धरमं शिव लायक हैं, सब सिद्ध नमो सुखदायक हैं ॥
निरबन्ध अबन्ध अगाध परं, निरभय निरखय निरनय अचरं ।
निरूप निरूप अघायक हैं, सब सिद्धनमो सुखदायक हैं ॥
निरभेद अखेद अछेद महा, निरद्वन्द्व सुछन्द अछन्द महा ।

अक्षुधा अतृषा अकषायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ।।
असमं अजमं अतमं लहियं, अगमं सुगमं सुखमं गहियं ।
जमराज की चोट बचायक हैं, सब सिद्ध नमो सुखदायक हैं।।
निरधाम सुधाम अकाम युतं, अविहार अहार निहार च्युतं ।
भव नाशन तीक्षण सायक हैं, सब सिद्ध नमो सुखदायक हैं ।।
निरवर्ण अकर्ण अगर्ण युतं, अगतं अमतं अक्षत अरतं ।
अति उत्तम भाव सुपायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ।।
निररंग असंग अभंगसदा, अतयं अजयं अचयं सुखदा ।
अमदं अगद गुण छायक हैं, सब सिद्ध नमो सुखदायक हैं ।।
अविषाद अनाद अवाद परं, भगवन्त अनन्त महन्त तरं
तुम ध्येय महा मुनि ध्यायक हैं, सब सिद्धनमो सुखदायक हैं ।।
निरनेह अदेह अगेह सुखी, निरमोह अकोह अलोह तुषी ।
तिहुँ लोकके नायक पायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ।।
पन्द्रह से भाग महान वसें, नवलाख के भाग जघन्य लसें ।
तन वातके अन्त सहायक हैं, सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं ।।
सोरठा–बहु विधि नाम बखान, परमेश्वर सबही भजें ।
ज्यों का त्यों सरधान, "द्यानत" सेवैं ते बड़े ।।१६।।
ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो महार्घ्यं ।
अविनाशी अविकार परम रस धाम हो,
समाधान सर्वज्ञ सहज अभिराम हो ।
शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध अनादि अनन्त हो,
जगत शिरोमणि सिद्ध सदा जयवन्त हो ।।१।।

ध्यान अगनिकर कर्म कलंक सबै दहे,

नित्य निरंजन ज्योति स्वरूपी ह्वै रहे।

ज्ञायक ज्ञेयाकार ममत्व निवारकैं,

सो परमातम सिद्ध नमो उर धारिकैं ॥१॥

दोहा—अविचल ज्ञान प्रकाशतैं, गुण अनन्त की खान।

ध्यान धरैं सो पाइये, परम सिद्ध भगवान ॥२॥

इत्याशीर्वाद, पुष्पांजलि।

अथ सिद्ध पूजा (कवि लालकृत)

स्वयं सिद्ध जिन भवन रतनमई बिम्ब विराजै।

नमत सुरासुर इन्द्र दरस लखि रवि शशि लाजै॥

चार शतक पच्चास आठ, भुविलोक बताये।

तिन पद पूजन हेत, भाव धरि मंगल गाये॥

मङ्गलमय मङ्गल करन, शिवपद दायक जानिकैं।

आह्वानन करके जजो, सिद्ध सकल उर आनिकैं॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध परमेष्ठिन्! अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननं। ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध परमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र मम सन्निहितो भवभव वषट् सन्निधिकरणम्।

उज्ज्वल जल शीतल लाय, जिन गुण गावत हैं।

सब सिद्धनको सु चढ़ाय, पुण्य बढ़ावत हैं॥

सम्यक सुक्षायक ज्ञान, यह गुण गावत हैं।

पूजों श्री सिद्ध महान, बलि बलि जावत हैं॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ।

दीपक की ज्योति जगाय, सिद्धन को पूजो ।
करि आरति सन्मुख जाय, निरमल पद दूजो ॥
वसु घाटि न बाधि प्रमाण, अगुरुलघु गुणराख्यो ।
इम शीव समावत ज्ञान, तुम गुण मुख भाख्यो ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं ।

वर धूप सुदशविधि लाय, दशविधि गन्ध धरें ।
वसु कर्म जलावत जाय, मानो नृत्य करें ॥
इक सिद्ध में सिद्ध अनन्त, सत्ता सब पावें ।
यह अवगाहन गुण सन्त, सिद्धन के पावें ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपम् ।

ले फल उत्कृष्ट महान, सिद्धन को पूजों ।
लहि मोक्ष परम गुण थान, प्रभुसम नहिं दूजों ॥
यह गुण बाधाकरि हीन, बाधा नाश भई ।
सुख अव्याबाध सुचीन, शिव सुन्दरि सु लई ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलम् ।

जल फल भरि कंचन थाल, अरचत कर जोरी ।
प्रभु सुनिये दीनदयाल, विनती है मोरी ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यम् ।

कर्मादिक दुष्ट महान, इनको दूर करो ।
तुम सिद्ध सदा सुखदान, भव भव दुःख हरो ॥

जयमाला (दोहा)

नमो सिद्ध परमातमा, अद्भुत परम रसाल।
तिन गुण महिमा अगम है सरस रची जयमाल ।

पद्धरि छन्द

जय जय श्रीसिद्धनकूं प्रणाम, जय शिवसुखसागर के सुथान।
जय बलिबलि जात सुरेश जान, जय पूजत तन मन हर्ष ठान।।
जय क्षायिकगुण सम्यक्त्व लीन, जय केवलज्ञान सुगुण नवीन।
जय लोकालोक प्रकाशमान, जय केवल अतिशय हिये आन ।।
जय सर्व तत्त्व दरसे महान सो दर्शन गुण तीजो महान ।
जय वीर्य अनन्तो है अपार, जाकी पटतर दूजो न सार ।।
जय सूक्षमता गुण हिये धार, सब ज्ञेय लख्यो एक हि सुवार।
इक सिद्ध मे सिद्ध अनन्त जान, अपनी अपनी सत्ता प्रमाण ।।
अवगाहन गुण अतिशय विशाल तिनके पदवन्दे नमितभाल ।
कछु घाटि न बाधि कहे प्रमाण, गुरु अगुरुलघू धारे महान ।।
जय बाधा रहित विराजमान, सो अव्याबाध कह्यो बखान ।
ये वसु गुण हैं व्यवहार सन्त, निश्चय जिनवर भाषे अनन्त ।।
जय सिद्धनके गुण कहे गाय, इन गुणकरि शोभित है जिनाय ।
तिनको भविजन मन-वचन-काय, पूजत वसुविधि अतिहर्षलाय।
सुरपति फणपति चक्रीमहान, बलि हरि प्रतिहरि मन्मथ सुजान
गणपति मुनिपति मिल धरतध्यान, जयसिद्धशिरोमणिजगप्रधान

सोरठा—ऐसे सिद्ध महान, तिव गुण महिमा अगम है ।
वरणन करयो बखान, तुच्छ बुद्धि "कविलाल"जू ।।

मोती-समान अखण्ड तन्दुल, अमल आनन्दधरि तरौं। औगुन
हरौ गुन करौ हमको जोरकर विनती करौं। सम्मेद.। ३॥
ॐ ह्री श्री चतुर्विंशति तिर्थंकर-निर्वाणक्षेत्रेभ्य अक्षतान् नि० ॥३॥
शुभ फूलरास सुवासवासित, खेद सब मन की हरौं।
दुखधामकामविनाश मेरो, जोरकर विनती करौं।।सम्मेद.॥
ॐ ह्री श्रीचतुर्विंशति-तीर्थंकर-निर्वाण-क्षेत्रेभ्य पुष्प नि० ॥४॥
नेवज अनेक प्रकार जोग, मनोग धरि भय परिहरौं।
यह भूखदूखन टार प्रभुजी, जोरकर विनती करौं।।सम्मेद.।
ॐ ह्री श्रीचतुर्विंशति-तीर्थंकर-निर्वाण-क्षेत्रेभ्य नैवेद्य निर्व० ॥५॥
दीपक प्रकाश उजास उज्ज्वल, तिमिरसेती नहिं डरौं।
संशयविमोहविभ्रम-तमहर जोरकर विनती करो।सम्मेद.।
ॐ ह्री श्रीचतुर्विंशति-तीर्थंकर निर्वाण-क्षेत्रेभ्य दीप निर्व० ॥६॥
शुभधूप परम अनूप पावन, भावपावन आचरौं। सब
करमपुञ्ज जलाय दीज्यो, जोरकर विनती करौं।।सम्मेद.॥
ॐ ह्री श्रीचतुर्विंशति-तीर्थंकर-निर्वाण क्षेत्रेभ्य धूप निर्व० ॥७॥
बहुफल मगाय चढाय उत्तम, चारगतिसो निरवरौं।
निहचै मुकतिफल देहु मोको, जोरकर विनती करौं।सम्मेद.।
ॐ ह्री श्रीचतुर्विंशति-तीर्थंकर-निर्वाण क्षेत्रेभ्य फलं निर्व० ॥८॥
जल गन्ध अक्षत पुष्प चरु फल, दीप धूपायन धरौं। 'द्यानत
करो निरभय जगतसो, जोरकर विनती करौं।सम्मेद ॥९॥
ॐ ह्री श्रीचतुर्विंशति-तीर्थङ्कर निर्वाण-क्षेत्रेभ्य अर्घ्यं नि० ॥९॥

अथ सप्त ऋषि पूजा

छप्पय

प्रथम नाम श्रीमन्व दुतिय स्वरमन्व ऋषीश्वर।
तीसर मुनि श्रीनिचय सर्वसुन्दर चौथो वर॥
पंचम श्रीजयवान विनयलालस षष्ठम भनि।
सप्तम जयमित्राख्य सर्व चारित्रधाम गनि॥
ये सातो चारणऋद्धिधर, करूं तास पद थापना।
मैं पूजूं मनवचकाय करि, जो सुख चाहूं आपना॥

ॐ ह्रीं चारण ऋद्धिधर श्री सप्तऋषीश्वर! अत्र अवतरावतर संवौषट् आह्वानन। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ, स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्, सन्निधिकरणम्।

अष्टक–गीता छन्द

शुभतीर्थउद्भव जल अनूपम, मिष्ट शीतल लायकैं।
भवतृषा-कन्द-निकन्दकारण, शुद्ध घट भरवायकैं॥
मन्वादिचारणऋद्धिधारक, मुनिन की पूजा करूं।
ता करें पातिक हरें सारे सकल आनन्द विस्तरूं॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्व, स्वरमन्व, निचय, सर्वसुन्दर, जयवान, विनय लालस, जयमित्र-ऋषिभ्य जलम् निर्वपामीति स्वाहा॥१॥

श्रीखंड कदलीनन्द केशर, मद मद घिसायकैं। तसु गन्ध प्रसरित दिगदिगन्तर, भर कटोरी लायकैं॥मन्वादि.॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्वादि-चारण-ऋद्धि-धारी-सप्त ऋषिभ्यो चन्दन नि०॥२॥

अति धवल अक्षत खंड–वर्जित, मिष्ट राजन भोग के।
कलधौत-थारा भरत सुन्दर, चुनित शुभ उपयोग के।म।३।
ॐ ह्री श्रीमन्वादि-चारण-ऋद्धि धारी-सप्त-ऋषिभ्यो अक्षतान् नि०।३।

बहु वर्ण सुवरण-सुमन आछे, अमल कमल गुलाब के।
केतकी चंपा चारु मरुआ, चुने निज कर चाव के।।म.।।४।।
ॐ ह्री श्रीमन्वादि-चारण-ऋद्धिधारी-सप्त-ऋषिभ्य पुष्प नि०।।४।।

पकवान नानाभांति चातुर, रचित शुद्ध नये नये।
सद्‌मिष्ट लाडू आदि भर बहु, पुरटके थारा लये।।म.।।५।।
ॐ ह्री श्रीमन्वादि-चारण ऋद्धिधारी-सप्तऋषिभ्य नैवेद्य नि०।

कलधौत दीपक जड़ित नाना, भरित गोघृतसारसो।
अति ज्वलितजगमग ज्योति जाकी, तिमिरनाशनहारसों।म.।६
ॐ ह्री श्रीमन्वादि-चारण-ऋद्धिधारी-सप्तऋषिभ्य दीप नि०।।६।।

दिक्‌चक्र गंधित होत जाकर, धूप दश–अगी कही।
सो लाय मनवचकाय शुद्ध, लगायकर खेऊं सही।।मन्वादि।।
ॐ ह्री श्रीमन्वादि-चारण-ऋद्धिधारी-सप्तऋषिभ्य धूपं नि०।।७।।

वर दाख खारक अमित प्यारे, मिष्ट चुष्ट चुनायके।
द्रावड़ी दाडिम चारु पुंगी, थाल भर भर लायके।मन्वादि.।
ॐ ह्री श्रीमन्वादि-चारण-ऋद्धिधारी-सप्तऋषिभ्य फल नि०।।८।।

जल-गंध-अक्षत-पुष्प-चरुवर, दीप धूप सु लावना।
फल ललित आठो द्रव्यमिश्रित, अर्घ कीजे पावना।मन्वादि।
ॐ ह्री श्रीमन्वादि-चारण-ऋद्धिधारी-सप्तऋषिभ्यो अर्घ्यं नि०।।९।।

अथ जयमाला । छन्द त्रिभगी

बन्दूं ऋषिराजा, धर्मजहाजा, निजपरकाजा, करत भले ।
करुणा के धारी, गगन-विहारी, दुख-अपहारी भरम दले ।।
काटत जमफंदा, भविजन-वृन्दा, करत अनंदा चरणन मे ।
जो पूजे ध्यावें मगल गावें, फेर न आवें भव वन मे ।।१।।

छन्द पद्धरि

जय श्रीमनु मुनिराजा महंत, त्रस थावर की रक्षा करंत ।
जय मिथ्यातम नाशक पतग, करुणारसपूरित अङ्ग अङ्ग ।२।
जय श्रीस्वरमनु अकलकरूप, पद सेव करत नित अमर भूप ।
जय पंच अक्ष जीते महान, तप तपत देह कंचनसमान ।।३।।
जय निचय सप्त तत्त्वार्थ भास तप-रमातनो तन मे प्रकाश ।
जय विषयरोध सवोध भान, परणतिके नाशक अचल ध्यान ।४
जय जयहि सर्वसुन्दर दयाल,लखि इन्द्रजालवत जगत-जाल ।
जय तृष्णाहारी रमण राम, जिन परणतिमे पायो विराम ।५
जय आनदघन कल्याणरूप. कल्याण करत सवको अनूप ।
जय मद-नाशन जयवान देव, निरमद विरचित सब करत सेव
जय जयहि विनयलालस अमान, सब शत्रु मित्र जानत समान
जय कृशितकाय तपके प्रभाव, छवि-छटा उडति आनददाय ।७
जयमित्र सकल जगके सुमित्र, अनगिनत अधम कीने पवित्र ।
जय चन्द्रवदन राजीव-नैंन, कवहूं विकथा वोलत न बैंन ।८।
जय सातो मुनिवर एक संग, नित गगन गमन करते अभंग ।
आये मथुरापुर मझार, तहँ मरीरोगको अति प्रचार ९।।

जय जय तिन चरणनिके प्रसाद, सब मरी देवकृत भई वाद ।
जय लोककरैं निर्भय समस्त, हम नमत सदा नित जोडहस्त ।१०
जय ग्रीषमऋतु परवत मझार, नित करत अतापन योगसार ।
जय तृषापरीषह करत जेर, कहुं रंच चलत नहिं मनसुमेर।११।
जय मूल अठाइस गुणनधार, तप उग्र तपत आनन्दकार ।
जय वर्षाऋतुमे वृक्षतीर, तहँ अति शीतल झेलत समीर ।१२।
जय शीतकाल चौपट मंझार, कै नदी-सरोवर तट विचार ।
जय निवसत ध्यानारूढ होय, रंचकनहिं मटकत रोम कोय।१३।
जय मृतकासन वज्रासनीय, गोदूहन इत्यादिक गनीय ।
जय आसन नानाभाति धार, उपसर्ग सहत समता निवार।१४।
जय जपत तिहारो नाम कोय, लख पुत्र पौत्र कुलवृद्धि होय ।
जय भरे लक्ष अतिशय भंडार, दारिद्रतनों दुख होय क्षार ।१५
जय चोर अग्नि डाकिनपिशाच अर ईति भीतिसब नसतसांच।
जय तुम सुमरत सुखलहत लोक, सुरअसुर नमत पद देत धोक।।

छन्द रोला

ये सातों मुनिराज, महातप लछमी धारी ।
परम पूज्य पद धरे, सकल जग के हितकारी ।।
जो मन वच तन शुद्ध होय सेवै औ ध्यावै ।
सो जन 'मनरंगलाल' अष्टऋद्धिनको पावै ।।१६।।

दोहा—नमन करत चरणन परत, अहो गरीबनिवाज ।
पंच परावर्तननितै, निरवारो ऋषिराज ।।१७।।

ॐ ह्री श्रीमन्वादि-चारण-ऋद्धिधारी-सप्तऋषिभ्य पूर्णार्घ्यं नि० ।

सोलहकारण पूजा

अडिल्ल—सोलहकारण भाय तीर्थंकर जे भये,
हरषे इन्द्र अपार मेरु पर ले गये।
पूजा करि निज धन्य लख्यो बहु चावसो,
हमहूं षोडशकारण भावें भावसों ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारणानि अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठत २ ठ ठ स्थापन। अत्र मम सन्निहितानि भवत भवत वषट् सन्निधिकरण।

अथाष्टक

कंचन-झारी निर्मल नीर, पूजूं जिनवर गुण-गंभीर।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥
दर्श-विशुद्धि भावना भाय, सोलह तीर्थंकर-पद-पाय।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धि १, विनयसम्पन्नता २ शीलव्रतेष्वनतिचार ३, अभीक्ष्णज्ञानोपयोग ४, संवेग ५, शक्तितस्त्याग ६, शक्तितस्तप ७, साधुसमाधि ८, वैयावृत्यकरण ९, अर्हद्भक्ति १०, आचार्यभक्ति ११, बहुश्रुतभक्ति १२, प्रवचनभक्ति १३, आवश्यकापरिहाणि १४, मार्गभावना १५, प्रवचनवात्सल्य १६, इति षोडशकारणेभ्य नम जलं ॥१७॥

चन्दन घसो कपूर मिलाय, पूजूं श्रीजिनवर के पांय।
परमगुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ॥ दर्शवि० ॥२॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारणेभ्य चन्दन नि० ।

तंदुल धवल अखण्ड अनूप, पूजूं जिनवर तिहुं जग भूप ।
परमगुरु हो, जयजय नाथ परमगुरु हो ।। दर्शवि० ।।३।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारणेभ्यो अक्षत नि० ।

फूल सुगन्ध मधुप-गुञ्जार, पूजूं जिनवर जग आधार ।
परमगुरु हो, जयजय नाथ परमगुरु हो ।। दर्शवि० ।।४।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारणेभ्य पुष्पं नि० ।

सब नेवज बहु विधि पकवान, पूजूं श्रीजिनवर गुणखान ।
परमगुरु हो, जयजय नाथ परमगुरु हो ।। दर्श वि० ।।५।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारणेभ्य नैवेद्य नि० ।

दीपक ज्योति तिमिर क्षयकार, पूजूं श्रीजिन केवल धार ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ।। दर्श वि० ।।६।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारणेभ्य. दीप नि० ।

अगर कपूर गन्ध शुभ खेय, श्री जिनवर आगे महकेय ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ।। दर्शवि० ।।७।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारणेभ्य धूप नि० ।

श्रीफल आदि बहुत फल सार, पूजूं जिन वांछितदातार ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ।। दर्शवि० ।।८।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारणेभ्य फल नि० ।

जल फल आठों द्रव्य चढाय, 'द्यानत' वरत करो मन लाय ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ।। दर्शवि० ।।९।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारणेभ्य अर्घ्यं नि० ।

॥ जयमाला ॥

दोहा—षोडशकारण गुण करै, हरै चतुरगति वास ।
पाप पुण्य सब नाश के, ज्ञान भानु परकाश ॥

॥ चौपाई ॥

दर्श विशुद्धि धरे जो कोई, ताको आवागमन न होई ।
विनय महा धारे जो प्राणी, शिवबनि ताकी सखी बखानी ॥
शील सदा दृढ जो नर पाले, सो औरन की आपद टाले ।
ज्ञानाभ्यास करे मय माँहीं, ताके मोह-महातम नाहीं ॥३॥
जो संवेग-भाव विस्तारें स्वर्ग-मुक्ति-पद आप निहारै ।
दान देय मन हर्ष विशेषै, इह भव यश परभव सुख देखै ।४।
जो तप तपै खपै अभिलाषा, चूरे कर्मशिखर गुरु भाषा ।
साधुसमाधि सदा मन लावै, तिहुँ जग भोग भोगि शिवजावै ।५।
निशदिन वैयावृत्य करैया, सो निश्चय भवनीर तिरैया ।
जो अरहंत-भक्ति मन आनै, सो जन विषय कषाय न जानै ।६।
जो आचारज-भक्ति करै है, जो निरमल आचार धरै है ।
बहु श्रुतवन्त-भक्ति जो करई, सो नर संपूरण श्रुत धरई ।७।
प्रवचन भक्ति करै जो ज्ञाता, लहै ज्ञान परमानन्द-दाता ।
षट् आवश्य काल जो साधै, सोही रत्नत्रय आराधै ॥८।
धर्म प्रभाव करै जो ज्ञानी, तिन शिव-मारग रीति पिछानी ।
वातसलअंग सदा जो ध्यावै, सो तीर्थङ्कर पदवी पावै ॥९॥

दोहा—ये ही षोडश भावना, सहित धरै व्रत जोय ।
देव-इन्द्र-नर-वंद्य पद, 'द्यानत' शिव पद होय ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्य पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति०

सवैया तेईसा

सुन्दर षोडशकारण भावन निर्मल चित्त सुधारक धारैं,
कर्म अनेक हने अति दुर्धर जन्म जरा भय मृत्यु निवारैं ।
दुःख दारिद्र विपत्ति हरैं भव सागरको तर पार उतारैं ।
'ज्ञान' कहे यहि षोडशकारण, कर्म निवारण सिद्धि सुधारैं ।

इत्याशीर्वाद

जाप्य—ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयै नम. । ॐ ह्रीं विनयसम्पन्नतायै नमः, ॐ ह्रीं शीलव्रताय नम, ॐ ह्रीं अभीक्ष्णज्ञानोपयोगाय नमः, ॐ ह्रीं संवेगाय नमः, ॐ ह्रीं शक्तितस्त्यागाय नम , ॐ ह्रीं शक्तितस्तपसे नमः, ॐ ह्रीं साधुसमाध्यै नमः, ॐ ह्रीं वैयावृत्यकरणाय नमः, ॐ ह्रीं अर्हद्भक्त्यै नमः, ॐ ह्रीं आचार्यभक्त्यै नमः ॐ ह्री बहुश्रुतभक्त्यै नमः, ॐ ह्रीं प्रवचनभक्त्यै नमः, ॐ ह्रीं आवश्यकापरिहाण्यै नमः, ॐ ह्रीं मार्गप्रभावनायै नमः, ॐ ह्रीं प्रवचनवत्सलत्वाय नमः ।।१६।।

पंचमेरु पूजा

गीता छन्द—तीर्थङ्करो के न्हवन जलतैं, भये तीरथ सर्वदा ।
तातैं प्रदच्छन देत सुर-गन, पंचमेरुनकी सदा ।।
दो जलधि ढाईद्वीप मे सब गनत-मूल विराजहीं ।
पूजौं असी जिनधाम-प्रतिमा, होहि सुख दुख भाजहीं ।।१।।

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धि-जिन-चैत्यालयस्थ-जिनप्रतिमा-समूह

अत्रावतरावतर, संवौषट् । ॐ ह्रीं पचमेरु-सम्वन्वि-जिन-चैत्यालयस्थ-जिन-प्रतिमा-समूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ, ठ ठ । ॐ ह्रीं पचमेरु-सम्वन्धि-जिन-चैत्यालयस्थ-जिन-प्रतिमा-समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अथाष्टक, चौपई आचलीवद्ध (१५ मात्रा)

शीतल-मिष्ट-सुवास मिलाय, जलसौं पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख सुख होय ।।
पाचो मेरु असी जिनधाम, सव प्रतिमाको करो प्रणाम ।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ।।१।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरु, विजयमेरु, अचलमेरु, मन्दिरमेरु, विद्युन्माली-मेरु, पचमेरु सम्वन्धी अस्सी जिन चैत्यालयेभ्य जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलम् निर्वपामीति स्वाहा ।।१।।

जल केशर कर्पूर मिलाय, गन्धसों पूजो श्री जिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ, परमसुख होय ।। पाचो० ।। २ ।।

ॐ ह्रीं पचमेरुसम्वन्वि जिन-चैत्यालयस्थ-जिनविम्वेभ्य चन्दन नि०

अमल अखण्ड सुगन्ध सुहाय, अच्छतसो पूजो जिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ।। पांचो० ।। ३ ।।

ॐ ह्रीं पचमेरु सम्वन्धि जिन-चैत्यालयस्थ-जिनविम्वेभ्य अक्षतान् नि

वरण अनेक रहे महकाय, फूलनसो पूजो जिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ।। पांचो० ।। ४ ।।

ॐ ह्रीं पचमेरु सम्वन्धि जिन-चैत्यालयस्थ-जिनविम्वेभ्य पुष्पं नि०

मनवांछित बहु तुरत वनाय, चरुसो पूजौं श्रीजिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ।। पांचो० ।। ५ ।।

ॐ ह्रीं पचमेरु-सम्वन्वि-जिन-चैत्यालयस्थ-जिनविम्वेभ्य नैवेद्यं नि०

तमहर उज्ज्वल ज्योति जगाय, दीपसो पूजो श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय॥ पांचों० ॥६॥
ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धि जिन-चैत्यालयस्थ-जिन-बिम्बेभ्य दीप नि०।
खेऊं अगर अमल अधिकाय, धूपसो पूजों श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय॥ पांचों० ॥७॥
ॐ ह्रीं पंचमेरु-सम्बन्धि-जिन-चैत्यालयस्थ-जिन-बिम्बेभ्य धूप नि०।
सुरस सुवर्ण सुगंध सुभाय, फलसों पूजों श्रीजिनराय।
महासुख होय देखे नाथ परमसुख होय॥ पांचों० ॥८॥
ॐ ह्रीं पंचमेरु-सम्बन्धि-जिन-चैत्यालयस्थ-जिन-बिम्बेभ्य फल नि०।
आठ दरवमय अरघ बनाय, 'द्यानत' पूजों श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय॥ पांचों० ॥९॥
ॐ ह्रीं पंचमेरु-सम्बन्धि-जिन-चैत्यालयस्थ-जिन-बिम्बेभ्य अर्घ्यं नि०।

जयमाला–सोरठा

प्रथम सुदर्शन–स्वामि, विजय अचल मन्दिर कहा।
विद्युन्माली नाम, पंचमेरु जगमे प्रकट॥ १० ॥

वेसरी छन्द

प्रथम सुदर्शन मेरु विराजै। भद्रशाल बन भूपर छाजै।
चैत्यालय चारो सुखकारी। मनवचतन कर बन्दना हमारी॥
ऊपर पांच शतक पर सोहै। नदनवन देखत मन मोहै। चैत्या.
साढे बासठ सहस ऊंचाई। बन सुमनस शोभै अधिकाई। चै.।
ऊंचा योजन सहस छत्तीसं। पाडुकवन सोहैं गिरिशीष। चै.।
चारो मेरु समान बखानो। भूपर भद्रसाल चहुं जानो।
चैत्यालय सोलह सुखकारी। मनवचननकर वदना हमारी १६

ऊँचे पाद शतक पर भाखे। चारों नन्दनवन अभिलाखे।
चैत्यालय सोलह सुखकारी। मनवचतन कर वंदना हमारी।
साढे पचपन सहस उतंगा। वन सोमनस चार बहुरंगा।
चैत्यालय सोलह सुखकारी। मनवचतनकर वंदना हमारी।
उच्च अठाइस सहस बताये, पांडुक चारों वन शुभ गाये॥
चैत्यालय सोलह सुखकारी। मनवचतनकर वंदना हमारी।
सुर नर चारन वन्दन आवैं। सो शोभा हम किह मुख गावैं।
चैत्यालय अस्सी सुखकारी। मनवचतन कर वन्दना हमारी।

दोहा—पंचमेरु की आरती, पढै सुनै जो कोय।
'द्यानत' फल जानै प्रभू, तुरत महा सुखहोय।।११।

ॐ ह्रीं पंचमेरु-सम्बन्धि-जिन-चैत्यालयस्थ-जिन-बिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि०

नन्दीश्वर द्वीप (अष्टाह्निका) पूजा

अडिल्ल छन्द—सर्व पर्व मे बडो अठाई पर्व है।
नन्दीश्वर सुर जाहि लिये वसु दर्व हैं।
हमे शक्ति सों नाहि इहां करि थापना।
पूजों जिनगृह प्रतिमा है हित आपना॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे-द्विपञ्चाशत-जिनालयस्थ-जिनप्रतिमा समूह! अत्र अवतर अवतर, सवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

कंचन मणिमय भृंगार, तीरथ नीर भरा।
तिहुँ धार दई निरवार, जामन मरन जरा

नन्दीश्वर श्री जिनधाम, बावन पूज करों।

वसु दिन प्रतिमा अभिराम, आनन्दभाव धरो ॥१॥

ॐ ह्रीं मासोत्तमे मासे… मासे शुभे शुक्लपक्षे अष्टाह्निकाया महामहोत्सवे नन्दीश्वरद्वीपे पूर्व-दक्षिण-पश्चिमोत्तरे एक अंजनगिरि, चार दधिमुख, आठ रतिकर, प्रतिदिशि तेरह तेरह इति बावन जिन चैत्यालयेभ्यो जन्म-जरामृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

भवतपहर शीतल वास, सो चन्दन नाहीं।

प्रभु यह गुन कीजे सांच, आयो तुम ठाहीं ॥ नन्दी० ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे जिनालयस्थ-जिन-प्रतिमाभ्य चन्दनं निर्व०

उत्तम अक्षत जिनराज, पुंज धरे सोहै।

सब जीते अक्षसमाज, तुम सम अरु को है ॥ नन्दी० ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे जिनालयस्थ जिन-प्रतिमाभ्यो अक्षतान् निर्व० ।

तुम काम विनाशक देव, ध्याऊं फूलनसों।

लहि शील लक्ष्मी एव, छूटूं शूलनसो ॥ नन्दी० ॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे जिनालयस्थ-जिन-प्रतिमाभ्य पुष्पं निर्व० ।

नेवज इन्द्रिय-बलकार, सो तुमने चूरा।

चरु तुम ढिग सोहै सार, अचरज है पूरा ॥ नन्दी० ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे जिनालयस्थ-जिन-प्रतिमाभ्य नैवेद्यं निर्व० ।

दीपक की ज्योति प्रकाश, तुम तन माहिं लसै।

टूटे करमन की राश, ज्ञानकणी दरसै ॥नन्दी०॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे जिनालयस्थ-जिन-प्रतिमाभ्य दीपं नि० ।

कृष्णागरु धूप सुवास, दशदिशि नारि वरै।

अति हरषभाव परकाश, मानो नृत्य करै ॥ नन्दी० ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे जिनालयस्थ-जिन-प्रतिमाभ्य धूपं निर्व० ।

बहुविधफल ले तिहुंकाल, आनन्द राचत हैं।
तुम शिवफल देहु दयाल, सो हम जाचत हैं ।। नन्दी० ।।८।।
ॐ ह्री श्रीनन्दीश्वरद्वीपे जिनालयस्थ जिन-प्रतिमाभ्य फल निर्वं०।
यह अर्घ कियो निज हेतु, तुमको अरपत हो।
'द्यानत' कीनो शिवखेत, भूमि समरपत हो ।। नन्दी०।।६।
ॐ ह्री श्रीनन्दीश्वरद्वीपे जिनालयस्थ-जिनप्रतिमाभ्यो अर्घ्यं निर्वं०।

जयमाला–दोहा

कार्तिक फागुन षाढ़के, अन्त आठ दिन माँहि।
नन्दीश्वर सुर जात हैं, हम पूजे इह ठाँहि ।।१।।

एकसौ त्रेसठ कोड़ि जोजन महा, लाख चौरासिया एकदिशि में लहा ।।१।। आठमो द्वीप नन्दीश्वरं भास्वर। भौन बावन्न प्रतिमा नमो सुखकरं ।।२।। चारदिशि चार अंजनगिरि राजहीं। सहस चौरासिया एकदिशि छाजहीं ।३।। ढोलसम गोल ऊपर तले सुन्दरं ।।भौन०।।४।। एक इक चार दिशि चार शुभ बावरी। एक इक लाख जोजन अमल जलभरी। चहुँ-दिशा चार वन लाख जोजन वर।।भौन०।।४।। सौल वापीन मधि सोल गिरि दधिमुख। सहस दस महा जोजन लखत ही सुखकरं। बावरी कोण दो मांहि दो रतिकर ।।भौन०।।५।। शैल बत्तीस इक सहस जोजन कहे, चार सोलै मिले सर्व बावन लहे। एक इक सीस पर एक जिनमंदिरं।भौन०।६। बिंब आठ एकसौ रत्नमयि सोहहीं। देव देवी सरव नयन मन मोहही। पाचसै धनुष तन पद्मआसन पर ।।भौन०।।७।।

लाल नख-मुख नयन श्याम अरु श्वेत हैं। श्याम रंग भौंह सिर-केश छवि देत हैं। वचन बोलत मनो लसत कालुष-हरं ।।भौन०।।८।। कोटि शशि भानु-दुति-तेज छिप जात है। महा वैराग्य परिणाम ठहरात है। वचन नहिं कहैं लखि होत सम्यकधर ।।भौन० ।।९।।

सोरठा—नन्दीश्वर-जिनधाम, प्रतिमा महिमा को कहै ।।
'द्यानत' लीनो नाम, यहै भगति सब सुख करै ।।

ॐ ह्री श्रीनन्दीश्वरद्वीपे जिनालयस्थ-जिन-प्रतिमाभ्य पूर्णाऽर्घ्यं नि० ।

दशलक्षणधर्म पूजा

उत्तम छिमा मार्दव आर्जव भाव हैं।
सत्य शौच संयम तप त्याग उपाव हैं ।।
आकिंचन ब्रह्मचर्य धरम दस सार हैं।
चहुंगति दुखतैं काढि मुकति करतार हैं ।।१।।

ॐ ह्री उत्तमक्षमादि-दशलक्षणधर्म ! अत्रावतरावतर। संवौषट् ।
ॐ ह्री उत्तमक्षमादि-दश-लक्षणधर्म ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठ. ठ ।
ॐ ह्री उत्तमक्षमादि-दश-लक्षणधर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव २ वषट्

सोरठा—हेमाचल की धार, मुनिचित सम शीतल सुरभि ।
भव-आताप निवार, दशलक्षण पूजों सदा ।।१।

ॐ ह्री उत्तमक्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, सयम, तप, त्याग, आकिंचन्य, ब्रह्मचर्यादि-दश-लक्षणधर्माय जल नि० ।।१।।

चदन केशर गार, होय सुवास दशों दिशा।
भव-आताप निवार, दशलक्षण पूजों सदा ।।२।।

ॐ ह्री उत्तमक्षमादि-दश-लक्षणधर्माय चन्दन नि० ।।२।।

चौपाई मिश्रित गीता छन्द

उत्तम छिमा गहो रे भाई, इहभव जस परभव सुखदाई ।
गालो सुनि मन खेद न आनो, गुनको औगुन कहै अयानो ।।
कहि है अयानो वस्तु छीनै, बांध मार बहुविधि करै ।
घरतैं निकारैं तन विदारैं, वैर जो न तहाँ धरै ।।
तैं करम पूरब किये खोटे, सहै क्यों नहिं जीयरा ।
अतिक्रोध अगनि बुझाय प्रानी, साम्य जल ले सीयरा ।।
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।२।।

मान महाविषरूप, करहि नीचगति जगत मे ।
कोमल सुधा अनूप, सुख पावै प्राणी सदा ।।
उत्तम मार्दवगुन मन माना, मान करनको कौन ठिकाना ।
बस्यो निगोदमाहितैं आया, दमरी रूकन भाग विकाया ।।
रूकन बिकाया भाग वशतैं, देव इकइन्द्री भया ।
उत्तम मुआ चाडाल हुआ, भूप कीडो मे गया ।।
जीतव्य-यौवन-धन गुमान, कहा करे जल-बुदबुदा ।
करि विनय बहुगुन बडे जनको, ज्ञान का पावै उदा ।।
ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।४।।

कपट न कीजे कोय, चोरन के पुर ना बसे ।
सरल सुभावी होय, ताके घर बहु सम्पदा ।।३।।
उत्तम आर्जव रीति बखानी, रञ्चक दगा बहुत दुखदानी ।
मनमे होय सो वचन उचरिये, वचन होय सो तनसो करिये ।।
करिये सरल तिहुँ जोग, अपने देख निरमल आरसी ।

मुख करै जैसा लखै तैसा, कपट प्रीति अंगारसी ॥
नहिं लहै लक्ष्मी अधिक छलकर, करमबंध विशेषता ।
भय त्यागि दूध बिलाव पीवै, आपदा नहिं देखता ॥३॥

ॐ ह्रीं उत्तमआर्जवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कठिन वचन मत बोल, परनिंदा अरु झूठ तज।
साँच जवाहर खोल, सतवादी जग मे सुखी ॥
उत्तम सत्यबरत पालीजै, पर-विश्वास-घात नहिं कीजै ।
साँचे झूठे मानुष देखो, आपन पूत स्वपास न पेखो ।
पेखो तिहायत पुरुष सांचेको, दरब सब दीजिये ।
मुनिराज श्रावककी प्रतिष्ठा, सांचगुन लख लीजिये ॥
ऊँचे सिंहासन बैठि वसुनृप, धरमका भूपति भया ।
वच झूंठ सेती नरक पहुँचा, सुरगमें नारद गया ॥४॥

ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धरि हिरदै संतोष, करहु तपस्या देहसो।
शौच सदा निरदोष, धरम बड़ो संसार मे ॥
उत्तम शौच सर्व जग जाना, लोभ पाप को बाप बखाना ।
आशा-पास महा दुखदानी, सुख पावै सन्तोषी प्रानी ॥
प्रानी सदा शुचि शील जप तप, ज्ञान-ध्यान-प्रभावतें ।
नित गंगजमुन समुद्र न्हाये, अशुचि दोष सुभावतें ॥
ऊपर अमल मलभरयो भीतर, कौनविधि घटशुचि कहैं ।
बहु देह मैली सुगुन थैली, शौचगुन साधू लहैं ॥५॥

ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काय छहों प्रतिपाल, पंचेन्द्री मन वश करो।
संजमरतन सभाल, विषय चोर बहु फिरत हैं॥
उत्तम संजम गहु मन मेरे, भवभव के भाजें अघ तेरे।
सुरग-नरकपशुगति मे नाहीं, आलस-हरन करनसुख ठाहीं।
ठाहीं पृथ्वी जल अग्नि मारुत, रूंख त्रस करुना धरो।
सपरसन रसना घ्रान नैना, कान मन सब वश करो॥
जिस बिना नहिं जिनराज सीझे, तू रुल्यो जग कीच में।
इक घरी मत विसरो करो नित, आयु जममुख बीचमे।६।
ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
तप चाहें सुर राय, करमशिखर को वज्र है।
द्वादशविधि सुखदाय, क्यों न करे निज शक्तिसम।
उत्तम तप सब माहिं बखाना, करमशिखरको वज्र समाना।
बस्यो अनादि निगोद मंझारा, भू-विकलत्रय-पशु-तन धारा।
धारा मनुष तन महादुर्लभ, सुकुल आयु निरोगता।
श्रीजैनवानी तत्त्वज्ञानी, भई विषय-पयोगिता॥
अति महादुर्लभ त्याग विषय, कषाय जो तप आदरें।
नरभव अनूपम कनक घरपर, मणिमयी कलशा धरें।७।
ॐ ह्रीं उत्तमसयमधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
दान चार परकार, चार सघको दीजिये॥
धन बिजली उनहार, नरभव लाहो लीजिये॥
उत्तम त्याग कह्यो जग सारा, औषधि शास्त्र अभय अहारा
निहचै राग-द्वेष निरवारै, ज्ञाता-दोनों-दान-संभारै।

दोनो सभारे कूप जलसम, दरव घर मे परिनया।
निज हाथ दीजे साथ लीजे, खाया खोया वह गया ॥
धनि साध शास्त्र अभयदिवैया, त्याग राग विरोध कों।
विन दान श्रावक साधु दोनों, लहै नाहीं बोधको ॥
ॐ ह्री उत्तमत्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परिग्रह चौबिस भेद, त्याग करैं मुनिराजजी।
तृष्णाभाव उछेद, घटती जान घटाइये ॥८॥
उत्तम आकिञ्चन गुण जानो, परिग्रह-चिन्ता दुखही मानो।
फांस तनकसी तनमे सालै, चाह लंगोटी की दुख भालै ॥
भालै न समता सुख कभी नर, विना मुनि-मुद्रा धरैं।
धनि नगन-पर-तन नगन ठाडे, सुर असुर पायनि परैं ॥
घरमांहि तृष्णा जो घटावै, रुचि नहीं संसार सों।
वहु धन बुरा हू भला कहिये लीन पर-उपकारसों ।६।
ॐ ह्री उमत्तआकिंचन्यधर्मांगाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

शील बाडि नौ राख, ब्रह्मभाव अन्तर लखो।
करि दोनो अभिलाख, करहु सफल नर भव सदा ॥
उत्तम ब्रह्मचर्य मन आनौ, माता बहिन सुता पहिचानौ।
सहैं वान-वर्षा बहु सूरे, टिकै न नयन—बान लखि कूरे ॥
कूरे तिया के अशुचि-तन मे, कामरोगी रति करैं।
बहु मृतक सडहि मसानमाहीं, काक ज्यो चोचै भरं ॥
संसार मे विष बेलि नारी, तजि गये जोगीश्वरा।
'द्यानत' धरम दशपैडि चढिके, शिवमहल मे पगधरा।१०
ॐ ह्री उतमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला ।

दोहा—दशलच्छन बन्दौ सदा, मनवाञ्छित फलदाय ।
कहौं आरती भारती, हम पर होउ सहाय ।।१।।

बेसरी छन्द

उत्तम क्षमा जहाँ मन होई, अन्तर बाहर शत्रु न कोई ।
उत्तम मार्दव विनय प्रकासे, नानाभेद ज्ञान सब भासे ।।
उत्तम आर्जव कपट मिटावे, दुरगति त्यागि सुगति उपजावे ।
उत्तम सत्य-वचन मुख बोले, सो प्रानी संसार न डोले ।
उत्तम शौच लोभ–परिहारी, सतोषी गुण रतन भण्डारी ।
उत्तम सयम पालै ज्ञाता नरभव सफल करै ले साता ।।
उत्तम तप निरवांच्छित पाले, सो नर करम-शत्रु को टाले ।
उत्तम त्याग करै जो कोई, भोगभूमि-सुर-शिवसुख होई ।५।
उत्तम आकिंचनव्रत धारै, परम समाधिदशा विस्तारै ।
उत्तम ब्रह्मचर्य मन लावै, नरसुर सहित मुकतिफल पावै ।६।
दोहा—करै करम की निरजरा, भव पीजरा विनाशि ।
अजर अमरपद को लहै, 'द्यानत' सुखकी राशि ।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शोच, संयम, तप, त्याग आकिंचन्य, ब्रह्मचर्य-दशलक्षणधर्मांगाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

रत्नत्रय पूजा

दोहा—चहुँगति-फणि-विष-हरन-मणि, दुख-पावक-जलधार ।
शिवसुख-सुधा-सरोवरी, सम्यक्त्रयी निहार ।।१।।

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय ! अत्रावतरावतर, संवौषट् ।

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठः ।
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

सोरठा—क्षीरोदधि उनहार, उज्ज्वल जल अति सोहनो ।
जनम रोग निरवार, सम्यक्रत्नत्रय भजों ॥१॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय जन्मरोगविनाशनाय जलम् निर्वपामीति स्वाहा

चन्दनकेशर गारि, परिमल महा सुगन्धमय ।
जनम रोग निरवार, सम्यक्रत्नत्रय भजों ॥२॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय भवतापविनाशनाय चन्दनम् निर्व० ।

तन्दुल अमल चितार, वासमति सुखदाय के ।
जनम रोग निरवार, सम्यक्रत्नत्रय भजो ॥३॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० ।

महकै फूल अपार, अलि गुंजै ज्यो थुति करै ।
जनम रोग निरवार, सम्यक्रत्नत्रय भजों ॥४॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्व० ।

लाडू बहु विस्तार, चीकन मिष्ट सुगन्धयुत ।
जनम रोग निरवार, सम्यक्रत्नत्रय भजों ॥५॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्व० ।

दीप रतनमय सार, जोत प्रकाशै जगत मे ।
जनम रोग निरवार, सम्यक्रत्नत्रय भजो ॥६॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्व० ।

धूप सुवास विथार, चन्दन अगर कपूर की ।
जनम रोग निरवार, सम्यक्रत्नत्रय भजों ॥७॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अष्टकर्मविनाशनाय धूपं निर्व० ।

फल शोभा अधिकार, लौंग छुहारे जायफल ।
जनम रोग निरवार, सम्यक्‌रत्नत्रय भजो ।।८।।

ॐ ह्री सम्यग्रत्नत्रयाय मोक्षफलप्राप्तये फल नि० ।

आठ दरब निरधार, उत्तमसो उत्तम लियो ।
जनम रोग निरवार, सम्यक्‌रत्नत्रय भजो ।।९।।

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सम्यक्‌दर्शनज्ञान, व्रत शिवमग तीनो मयी ।
पार उतारन यान, 'द्यानत' पूजो व्रत महित ।।१०।।

ॐ ह्री सम्यग्रत्नत्रयाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

समुच्चय जयमाला ।

दोहा—सम्यक् दर्शन ज्ञान व्रत, इन बिन मुकति न होय ।
अन्ध पंगु अरु आलसी, जुदे जलै दवलोय ।।१।।

चौपई ।

जापै ध्यान सुथिर बन आवै, ताके करमबन्ध कट जावै ।
तासों शिवतिय प्रीति बढावै, जो सम्यक् रत्नत्रय ध्यावै ।२।
ताकों चहुँगति के दुख नाहीं, सो न परै भवसागर माहीं ।
जनम-जरा-मृत्यु दोष मिटावै, जो सम्यक् रत्नत्रय ध्यावै ।३।
सोई दशलच्छन को साधै, सो सोलह कारण आराधै ।
सो परमातम-पद उपजावै, जो सम्यक् रत्नत्रय ध्यावै ।।४।।
सोई शक्र-चक्रि-पद लेई, तीन लोक के सुख विलसेई ।
सो रागादिक भाव बहावै, जो सम्यक् रत्नत्रय ध्यावै ।।५।।
सोई लोकालोक विहारै, परमानन्द दशा विस्तारै ।
आप तिरै औरन तिरवावै, जो सम्यक् रत्नत्रय ध्यावै ।।६।।

दोहा—एक स्वरूप प्रकाश निज, वचन कह्यो नहिं जाय ।
तीनभेद व्योहार सब 'द्यानत' को सुखदाय ।।७।।
ॐ ह्री सम्यग्रत्नत्रयाय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दर्शन पूजा

दोहा—सिद्ध अष्टगुनमय प्रकट, मुक्तजीव सोपान ।
ज्ञानचरित्र जिहँ बिन अफल, सम्यग्दर्श प्रधान ।।१।।
ॐ ह्री अष्टागसम्यग्दर्शन ! अत्र अवतर अवतर, सवौषट् ।
ॐ ह्री अष्टागसम्यग्दर्शन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ, ठ ठ ।
ॐ ह्री अष्टागसम्यग्दर्शन ! अत्र मम सन्निहितो भव भव, वषट् ।
सोरठा—नीर सुगन्ध अपार, तृषा हरै मल छय करै ।
सम्यक् दर्शन सार आठ अङ्ग पूजौं सदा ।।१।।
ॐ ह्री अष्टागसम्यग्दर्शनाय जलं निर्व० ।
जल केसर घनसार, ताप हरै शीतल करै ।
सम्यक् दर्शन सार, आठ अङ्ग पूजौं सदा ।।२।।
ॐ ह्री अष्टागसम्यग्दर्शनाय चन्दन निर्व० ।
अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै ।
सम्यक् दर्शन सार, आठ अङ्ग पूजौं सदा ।।२।।
ॐ ह्री अष्टागसम्यग्दर्शनाय अक्षतान् निर्व० ।
अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै ।
सम्यक्दर्शनसार, आठ अङ्ग पूजौं सदा ।।३।।
ॐ ह्री अष्टागसम्यग्दर्शनाय अक्षतान् निर्व० ।
पहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै ।।
सम्यक्दर्शनसार, आठ अङ्ग पूजौं सदा ।।४।।
ॐ ह्री अष्टागसम्यग्दर्शनाय पुष्पं निर्व० ।

नेवज विविध प्रकार, क्षुधा हरै थिरता करै ।
सम्यक्दर्शनसार, आठ अङ्ग पूजों सदा ॥५॥
ॐ ह्री अष्टागसम्यग्दर्शनाय नैवेद्य नि० ।

दीप-ज्योति तमहार, घट पट परकाशै महा ।
सम्यग्दर्शनसार, आठ अङ्ग पूजों सदा ॥६॥
ॐ ह्री अष्टागसम्यग्दर्शनाय दीप नि० ।

धूप घ्राणसुखकार, रोग विघन जडता हरै ।
सम्यग्दर्शनसार, आठ अङ्ग पूजों सदा ॥७॥
ॐ ह्री अष्टागसम्यग्दर्शनाय धूप निर्व० ।

श्रीफल आदि विथार, निहचै सुर शिवफल करै ।
सम्यग्दर्शनसार आठ अङ्ग पूजों सदा ॥८॥
ॐ ह्री अष्टागसम्यग्दर्शनाय फल नि० ।

जल गन्धाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु ।
सम्यग्दर्शनसार, आठ अङ्ग पूजों सदा ॥९॥
ॐ ह्री अष्टागसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि० ।

जयमाला

दोहा—आप आप निहचै लखै, तत्त्वप्रीति व्योहार ।
रहित दोष पच्चीस हैं, सहित अष्टगुण सार ॥१०॥

चौपाई मिश्रित गीता छन्द ।

सम्यग्दर्शन रतन गहीजै, जिन-वच में सन्देह न कीजै ।
इह भव विभव-चाह दुखदानी, पर-भव भोग चहे मत प्रानी ।
प्राणी गिलान न करि अशुचि लखि, धरम गुरु प्रभु परखिये ।
परदोष ढकिये धरम डिगते को, सुथिर कर हरखिये ॥

चउसघ को वात्सल्य कीजै, धरम की परभावना ।
गुण आठसौं गुन आठ लहि कै, इहां फेर न आवना ॥२॥
ॐ ह्री अष्टागसहित-पचविंशतिदोषरहिताय सम्यग्दर्शनाय पूर्णार्घ्यं ।

ज्ञान पूजा

पञ्चभेद जाके प्रकट, ज्ञेय प्रकाशन भान ।
मोह–तपन–हर–चन्द्रमा, सोई सम्यक्ज्ञान ॥
ॐ ह्री अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र अवतर अवतर, सवौषट् ।
ॐ ह्री अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ ।
ॐ ह्री अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र मम सन्निहितो, भव भव वषट् ।
सोरठा–नीर सुगन्ध अपार, तृषा हरै मल छय करै ।
सम्यक्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा ॥१॥
ॐ ह्री अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
जलकेशर घनसार, ताप हरे शीतल करे ।
सम्यक्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा ॥२॥
ॐ ह्री अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै ।
सम्यक्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा ॥३॥
ॐ ह्री अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
पहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै ।
सम्यक्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा ॥४॥
ॐ ह्री अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ।
नेवज विविध प्रकार, क्षुधा हरै थिरता करै ।

सम्यक्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजो सदा ।।५।।

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ।

दीपज्योति तमहार, घट पट परकाशै महा ।

सम्यक्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजो सदा ।।६।।

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूप घ्राण सुखकार, रोगविघन जड़ता हरै ।

सम्यक्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजो सदा ।।७।।

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीफल आदि विथार, निहचै सुरशिवफल करै ।

सम्यक्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजो सदा ।।८।।

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय फल निर्वपामीति स्वाहा

जल गन्धाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु ।

सम्यक्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजों सदा ।।९।।

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा—आप आप जानै नियत, ग्रन्थ पठन व्योहार ।

संशय विभ्रम मोह विन, अष्टअंग गुनकार ।।१।।

चौपाई मिश्रित गीता छन्द

सम्यक्ज्ञान रतन मन भाया । आगम तीजा नैन बताया ।।

अक्षर अरथ शुद्ध पहिचानो । अक्षर अरथ उभयसंग जानो ।।

जानों सुकाल पठन जिनागम, नाम गुरु न छिपाइये ।

तपरीति गहि बहु मान देके, विनय गुन चित लाइये ।।

ये आठ भेद करम उछेदक, ज्ञानदर्पण देखना।

इस ज्ञानहीसो भरत सीझा, और सब पट पेखना ॥

ॐ ह्री अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पूर्णार्घ्यंम् निर्वपामीति स्वाहा।

चारित्र पूजा

दोहा—विषयरोग औषधि महा दव-कषाय-जल-धार।

तीर्थङ्कर जाको धरैं, सम्यक् चारितसार ॥१

ॐ ह्री त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।

ॐ ह्री त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ।

ॐ ह्री त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव

सोरठा—नीर सुगन्ध अपार, तृषा हरे मल छय करैं।

सम्यक्चारित सार, तेरह विध पूजौं सदा ॥१

ॐ ह्री त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय जल निर्व०।

जल केसर घनसार, ताप हरैं शीतल करैं।

सम्यक्चारित सार, तेरह विध पूजौं सदा ॥२

ॐ ह्री त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय चन्दन निर्व०।

अछत अनूप निहार, दारिद नाशैं सुख भरैं।

सम्यक्चारित सार, तेरह विध पूजो सदा ॥३

ॐ ह्री त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अक्षतान् निर्व०।

पहुप सुवास उदार, खेद हरैं मन शुचि करैं।

सम्यक्चारित सार, तेरह विध पूजो सदा ॥४

ॐ ह्री त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय पुष्पं निर्व०।

नेवज विविध प्रकार, क्षुधा हरैं थिरता करैं।

सम्यक्चारित सार, तेरह विध पूजौं सदा ॥५

ॐ ह्री त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय नैवेद्यं निर्व०।

दीपजोति तमहार, घटपट परकाशै महा।
सम्यक्चारित सार. तेरह विध पूजों सदा ॥६॥
ॐ ह्री त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय दीपं निर्व०।
धूप घ्राण सुखकार, रोग विघन जड़ता हरै।
सम्यक्चारित सार, तेरह विध पूजों सदा ॥७॥
ॐ ह्री त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय धूप निर्व०।
श्रीफल आदि विथार, निश्चय सुर शिवफल करै।
सम्यक्चारित सार, तेरह विध पूजों सदा ॥८॥
ॐ ह्री त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय फल निर्व०।
जल गन्धाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु।
सम्यक्चारित सार, तेरह विध पूजों सदा ॥९॥
ॐ ह्री त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्व०।

जयमाला—दोहा

आप आप थिर नियत नय, तप संजम व्योहार।
स्वपर दया दोनो लिये, तेरह विध दुखहार ॥१०॥

चौपाई मिश्रित गीता-छन्द

सम्यक्चारित रतन सँभालो। पांच पाप तजिकै व्रत पालो।
पचसमिति त्रय गुप्ति गहीजै। नर भव सफल करहु तन छीजै।
छीजै सदा तनको जतन यह, एक संयम पालिये।
बहु रुल्यो नरक निगोद मांहीं, विषय कषायनि टालिये॥
शुभ करम-जोग सुघाट आया, पार हो दिन जात है।
'द्यानत' धरम की नाव बैठो, शिवपुरी कुशलात है ॥२॥
ॐ ह्री त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय महार्घ्यं निर्व०।

देव पूजा

दोहा—प्रभु तुम राजा जगत के, हमें देय दुख मोह।
तुम पद पूजा करत हूँ, हमपै करुणा होहि ॥१॥

ॐ ह्रीं अष्टादश-दोष-रहित-षट्चत्वारिंशद्-गुण-सहित-श्रीजिनेन्द्र भगवन्! अत्रावतरावतर संवौषट्। ॐ ह्रीं अष्टादश-दोष-रहित षट्चत्वारिंशत् गुणसहित-श्रीजिनेन्द्र भगवन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। ॐ ह्रीं अष्टादश-दोष-रहित-षट्चत्वारिंशत्-गुण-सहित श्री जिनेन्द्र भगवन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

छन्द त्रिभंगी

बहु तृषा सतायो अति दुख पायो, तुमपै आयो जल लायो।
उत्तम गंगाजल, शुचि अति शीतल, प्रासुक निर्मलगुन गायो॥
प्रभु अन्तरजामी, त्रिभुवननामी, सबके स्वामी दोष हरो।
यह अरज सुनीजै ढील न कीजै, न्याय करीजै दया धरो॥

ॐ ह्रीं अष्टादश दोष-रहित-षट्चत्वारिंशद् गुण-सहित श्रीजिनेन्द्र भगवद्भ्यो जन्ममृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

अघतपत निरन्तर अगनि पटंतर, मो उर अंतर खेद करयो।
ले बावन चंदन दाहनिकंदन, तुम पदवंदन हरष धरयो॥२

ॐ ह्रीं अष्टा० श्रीजिनेभ्यो भवतापविनाशाय चन्दनं निर्व०।

औगुन दुखदाता कह्यो न जाता, मोहि असाता बहुत करं।
तंदुल गुनमंडित अमलअखंडित, पूजत पंडित प्रीति धरं॥३.

ॐ ह्रीं अष्टा० श्रीजिनेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व०।

सुरनर पशुको दल काममहाबल, बात कहत छल मोह लिया।
ताके शर लाऊँ फूल चढ़ाऊँ, भगति बढ़ाऊँ खोल हिया॥४.

ॐ ह्रीं अष्टा० श्रीजिनेभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्व०।

सब दोषनमाहीं जासम नाहीं, भूख सदा ही मो लागै ।
सद घेवर बावर लाडू बहुधर, थालकनक भर तुम आगै ।।प्र.
ॐ ह्री अष्टा० श्रीजिनेभ्यो क्षुधारोगविनाशाय नैवेद्यं निर्व० ।
अज्ञान महातम छाय रह्यो मम, ज्ञान ढक्यो हम दुख पावै ।
तम मेटनहारा तेज अपारा, दीप सवारा जश गावै ।।प्र.
ॐ ह्री अष्टा० श्रीजिनेभ्यो मोहान्धकार-विनाशाय दीपं निर्व० ।
इह कर्म महावन भूल रह्यो जन, शिवमारग नहि पावत हैं ।
कृष्णागरुधूपं अमल अनूप, सिद्धस्वरूपं ध्यावत हैं ।।प्र.
ॐ ह्री अष्टा० श्रीजिनेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूप निर्व० ।
सबतै जोरावर अन्तराय करि, सुफल विघ्न करि डारत हैं ।
फलपुञ्जविविध भर नयन मनोहर, श्रीजिनवर पद धारत हैं ।।
ॐ ह्री अष्टा० श्रीजिनेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व० ।
आठौं दुखदानी आठ निशानी, तुम ढिग आनि निवारन हो ।
दीनन निस्तारन अधम उधारन, 'द्यानत' तारन कारन हो ।।प्र
ॐ ह्री अष्टा० श्रीजिनेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ।

जयमाला

दोहा—गुण अनन्त को कहि सकै, छियालीस जिनराय ।
प्रकट सुगुन गिनती कहूँ, तुम ही होहु सहाय ।।१।।

चौपाई (१६ मात्रा)

एक ज्ञान केवल जिनस्वामी, दो आगम अध्यातम नामी ।
तीन काल विधि परगट जानी, चार अनंतचतुष्टय ज्ञानी ।।
पञ्च परावर्तन परकासी, छहो दरव गुण परजय भासी ।
सात-भंग वानी परकाशक, आठो कर्म महारिपु नाशक ।।२।।

बहु फूलसुवास विमलप्रकाशं, आनन्दरास लाय धरे। मम काम मिटायो शील बढायो सुख उपजायो दोष हरे। तीर्थं०

ॐ ह्री श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै पुष्पं निर्व० ॥४॥

पकवान बनाया, बहुकृत लाया, सब विध भाया मिष्ट महा।
पूजूं थुति गाऊं प्रीति बढाऊं, क्षुधा नशाऊं हर्ष लहा। तीर्थं०

ॐ ह्री श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै नैवेद्य निर्व० ॥५॥

करि दीपकज्योतं तमछयहोत, ज्योति उदोतं तुमहि चढ़ै।
तुमहो परकाशक भरमविनाशक, हमघट भासक ज्ञान बढ़ै॥

ॐ ह्री श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै दीपं निर्व० ॥६॥

शुभगंध दशोंकर पावकमे धर, धूप मनोहर खेवत हैं। सब पाप जलावें, पुण्य कमावें, दास कहावें सेवत है॥ तीर्थं०॥

ॐ ह्री श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै धूप निर्व० ॥७॥

बादाम छुहारी लौंग सुपारी, श्रीफल भारी ल्यावत हैं।
मनवांछित दाता मेट असाता, तुम गुन माता ध्यावत हैं। ती.

ॐ ह्री श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै फलं निर्व० ॥८॥

नयननिसुखकारी मृदुगुनधारी, उज्ज्वल भारी मोल धरै।
शुभगंधसम्हारा वसन निहारा, तुमतरु धारा ज्ञान करै। ती०।

ॐ ह्री श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै वस्त्र निर्व० ॥९॥

जल चंदन अच्छत फूल चरु चत, दीप धूप अति फल लावै।
पूजाको ठानत जो तुम जानत, सो नर 'द्यानत' सुखपावै। ती०।

ॐ ह्री श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यैऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा—ओंकार धुनिसार, द्वादशांग वाणी विमल।
नमो भक्ति उरधार, ज्ञान करै जड़ता हरै॥

गुरु पूजा

दोहा—चहुँ गति दुखसागरविषै, तारनतरन जिहाज ।
रतनत्रयनिधि नगन तन, धन्य महा मुनिराज ।।१।।

ॐ ह्री श्रीआचार्योपाध्याय-सर्वसाधुगुरुसमूह ! अत्रावतरावतर सवौषट् । ॐ ह्री श्रीआचार्योपाध्याय-सर्वसाधुगुरुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ । ॐ ह्री श्रीआचार्योपाध्याय-सर्वसाधुगुरुसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव, वषट् ।

शुचि नीर निरमल छीरदधिसम, सुगुरु चरन चढाइया ।
तिहुँ धार तिहुँ गदटार स्वामी, अति उछाह बढाइया ।।
भवभोग तन वैराग धार, निहार शिव तप तपत हैं ।
तिहुं जगतनाथ अराध साधु सु, पूज नित गुन जपन हैं ।।१।

ॐ ह्री आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्य जल नि० ।।१।।

करपूर चन्दन सलिलसौं घसि, सुगुरु पद पूजा करौं ।
सब पाप ताप मिटाय स्वामी, धरम शीतल विस्तरो ।।भव०।

ॐ ह्री आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्य चन्दन नि० ।।२।।

तन्दुल कमोद सुवास उज्ज्वल, सुगुरु पगतर धरत हैं ।
गुनकार औगुनहार स्वामी, वन्दना हम करत हैं ।।भव०।।३

ॐ ह्री आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो अक्षतान् निर्व० ।।३।।

शुभफूलरासप्रकाश परिमल, सुगुरुपांयनि परत हौं ।
निरवार मार उपाधि स्वामी, शीलदृढ उर धरत हो ।भव०।

ॐ ह्री आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्य पुष्प नि० ।।४।।

पकवान मिष्ट सलौन सुन्दर, सुगुरु पायन प्रीतिसौं ।

कर क्षुधारोग विनाश स्वामी, सुथिर कीजे रीतिसो ।भव.।५
ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्य नैवेद्यं नि० ।।५।।
दीपक उदोत सजोत जगमग सुगुरु पद पूजो सदा ।
तमनाश ज्ञान उजास स्वामी, मोहि मोह न हो कदा ।भव.।
ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्य दीप नि० ।।६।।
बहु अगर आदि सुगन्ध खेऊं सुगुण पद पद्महि खरे ।
दुख पुंजकाठ जलाय स्वामी गुण अखय चितमे धरे ।भव.।
ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूप नि० ।।७।
भर थार पूंग बदाम बहुविधि, सुगुरुक्रम आगे धरों ।
मंगल महाफल करो स्वामी, जोर कर विनती करों ।भव.।८
ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्य मोक्षफलप्राप्तये फल नि० ।
जल गंध अक्षत फूल नेवज, दीप धूप फलावली ।
'द्यानत' सुगुरुपद देहु स्वामी, हमहिं तार उतावली ।भव.।।
ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि० ।

जयमाला

दोहा—कनककामिनी विषयवश, दीसै सब संसार ।
त्यागी वैरागी महा, साधु सुगुरु भंडार ।।१।।
तीन घाटि नवकोड सब, बन्दौं शीश नवाय ।
गुन तिन अट्ठाईस लौं, कहूं आरती गाय ।।२।।
एक दया पालैं मुनिराजा, रागद्वेष द्वै हरन परं ।
तीनो लोक प्रकट सब देखैं, चारों आराधन निकरं ।।
पंच महाव्रत दुद्धर धारैं, छहों दर्व जानें सुहित ।
सातभंग-वानी मन लावैं, पावै आठ रिद्ध उचित ।।

नवों पदारथ विधिसों भाखं, बन्ध दशों चूरन करन ।
ग्यारह शंकर जानै मानै, उत्तम बारह व्रत धरन ।।
तेरह भेद काठिया चूरे, चौदह गुण थानक लखिय ।
महा प्रमाद पचदश नाशे, शील कषाय सबै नखियं ।।
बन्धादिक सत्रह सब चूरे, ठारह जन्म न मरण मुन ।।
एक समय उनईस परीषह, बीस प्ररूपनि मे निपुनं ।
भाव उदीक इकीसों जानै, बाइस अभखन त्याग कर ।।
अहमिंदर तेईसों बन्दै, इन्द्र सुरग चौबीस वर ।।५।।
पच्चीसो भावन नित भावै, छव्विस अङ्ग उपग पढै ।
सत्ताइससो विषय विनाशै, अट्ठाईसों गुण सु बढै ।।६।।
शीत समय सर चौहटवासी, ग्रीषमगिरिशिर जोग घरै ।
वर्षा वृक्षतरै थिर ठाडे, आठ करम हनि सिद्धि वरै ।।७।।

दोहा—कहों कहा लो भेद मै, बुध थोडी गुण पूर ।
'हेमराज' सेवक हृदय, भक्ति भरी भरपूर ।।

ॐ ह्री आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो अर्घ्यं निर्वं० ।

अकृत्रिमचैत्यालय पूजा

।। चौपई ।।

आठकरोडरु छप्पनलाख । सहस सत्याणव चतुशतभाख ।
जोड़ इक्यासी जिनवर थान । तीनलोक आह्वानकरान ।।१।।

ॐ ह्री त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटि-षट्पञ्चाशल्लक्ष-सप्तनवतिसहस्र-चतु शतैकाशीति-अकृत्रिमजिनचैत्यालयानि अत्र अवतरत २ सवौषट् । अत्र तिष्ठत २ ठ ठ । अत्र ममसन्निहितानि भवत २ वषट् ।

छन्द त्रिभगी।

क्षीरोदधिनीर, उज्ज्वल छीरं, छान सुचीरं, भरि झारी।
अति मधुर लखावन, परमसुपावन, तृषाबुझावन, गुणभारी।
वसुकोटि सु छप्पन लाख सताणव, सहस चारशत इक्यासी।
जिनगेह अकीर्तिम तिहुं जगभीतर, पूजत पद ले अविनाशी।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटि षट्पञ्चाशल्लक्ष सप्तनवतिसहस्र-चतु शतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो जल निर्वपामीति० ॥१॥

मलयागिर पावन, चंदन बावन, तापबुझावन, घसि लीनो।
धरि कनककटोरी, द्वै कर जोरी, तुमपदओरी, चितदीनो।वसु.

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटि षट्पञ्चाशल्लक्ष-सप्तनवतिसहस्र-चतु शतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो चन्दन निर्व० ॥२॥

बहुभांति अनोखे तंदुल चोखे, लखि निरदोखे, हम लीने।
धरि कंचनथाली, तुमगुणमाली, पुंज विशाली, करदीने।वसु.

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटि षट्पंचाशल्लक्ष सप्तनवतिसहस्र-चतु शतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो अक्षतान् निर्व० ॥३॥

शुभ पुष्पसुजाती, है बहु भांती, अलि लिपटाती, लेय वरं।
धरि कनक-रकेबी करगह लेवी, तुम पदजुगकी, भेटधर।वसु.

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटि षट्पचाशल्लक्ष-सप्तनवतिसहस्र-चतु शतैकाशीति-अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्य पुष्प निर्व० ॥४॥

खुरमा गिदौड़ा, बरफी पेडा, घेवर मोदक, भरि थारी।
विधिपूर्वक कीने, घृतमय भीने, खडमें लीने, सुखकारी ॥वसु.

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटि षट्पंचाशल्लक्ष-सप्तनवतिसहस्र-चतु शतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्य नैवेद्य निर्व० ॥५॥

मिथ्यात महातम, छाय रह्यो हम, निजभव परणति, नहिंसूझै।
इह कारण पाकै दीप सजाकै, थाल धराकै, हमपूजै ।। वसु०।
ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटि-षट्पंचाशल्लक्ष-सप्तनवतिसहस्र-चतुःशतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्य दीप निर्व० ।। ६ ।।
दशगंध कुटाके, धूप बनाके, निजकर लेके, धरि ज्वाला ।
तसु धूम उड़ाई दश दिशि छाई, बहु महकाई अति आला ।वसु०
ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटि-षट्पंचाशल्लक्ष-सप्तनवतिसहस्र-चतुःशतैकाशीति-अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्य धूप निर्व० ।। ७ ।।
बादाम छुहारे, श्रीफल धारे, पिस्ता प्यारे द्राखवरं ।
इन आदि अनोखे लाख निरदोखे, थालपजोखे, भेट धरं ।वसु.
ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटि-षट्पंचाशल्लक्ष-सप्तनवतिसहस्र-चतुःशतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो फल निर्व० ।। ८ ।।
जल चंदन तंदुल कुसुम रु नेवज, दीप धूप फल, थाल रचौं ।
जयघोष कराऊं बीनबजाऊं, अर्घ चढाऊं, खूब नचौं ।। वसु.
ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटि-षट्पंचाशल्लक्ष सप्तनवतिसहस्र-चतुःशतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं निर्व० ।। ९ ।।

अथ प्रत्येक अर्घ (चौपई)

अधोलोक जिन आगमसाख । सात कोड़ि अरु बहतर लाख ।
श्रीजिनभवन महा छवि देइ । ते सब पूजौं वसुविधि लेइ ।।
ॐ ह्रीं अधोलोकसम्बन्धि सप्तकोटि-द्विसप्तति-ल. अकृत्रिम श्री जिनचैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं निर्व० ।।१।।
मध्यलोक जिन मन्दर ठाठ । साढैचारशतक अरु आठ ।
ते सब पूजो अर्घ चढाय । मन वच तन त्रयजोग मिलाय ।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसम्बन्धि चतुःशताष्टपञ्चाशत श्रीजिनचैत्या-लयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति० ॥२॥

अडिल्ल—ऊर्ध्वलोक के माँहि भवन जिन जानिये,
लाख चौरासी सहस सत्यानव मानिये।
तापै धरि तेईस जजो शिरनायके,
कंचनथालमझार जलादिक लायके ॥३॥

ॐ ह्रीं ऊर्ध्वलोकसम्बन्धि चतुरशीतिलक्ष सप्तनवतिसहस्र-त्रयोविंशति श्रीजिनचैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं ॥३॥

गीता छन्द

वसुकोटि छप्पन लाख ऊपर, सहस सत्याणव मानिये।
शतच्यार पै गिनले इक्यासी, भवनजिनवर जानिये ॥
तिहुँ लोक भीतर सासते, सुर असुर नर पूजा करें।
तिन भवनको हम अर्घ लेके, पूजि हैं जगदुख हरैं ॥४॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटि षटपञ्चाशल्लक्ष-सप्तनवतिसहस्र-चतुःशतैकाशीति-अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्य पूर्णार्घ्यं निर्वं० ॥४॥

अथ जयमाला।

दोहा—अब बरणूं जयमालिका, सुनो भव्य चित लाय।
जिनमन्दिर तिहुँ लोकके, देहुं सकल दरशाय ॥

पद्धडि छन्द।

जयअमल अनादि अनंतजान। अनिमितजु अकीर्तमअचलमान
जय अजय अखंड अरूपधार। षट् द्रव्य नहीं दीसं लगार ॥
जय निराकार अविकार होय। राजंत अनंत परदेश सोय।

जयशुद्धसुगुण अवगाहपाय । दशदिशामाँहि इहविध लखाय ॥
यह भेद अलोकाकाश जान । तामध्य लोक नभ तीन मान ॥
स्वयमेव वन्यौ अविचल अनत । अविनाशि अनादिजु कहतसत।
पुरुषाअकार ठाडो निहार । कटि हाथ धारि द्वै पग पसार ॥
दच्छिन उत्तरदिशि सर्व ठौर । राजू जुसात भाख्यो निचोर॥
जय पूर्व अपरदिशि घाटवाधि । सुन कथन कहू ताकोजु साधि॥
लखि श्वभ्रतले राजू जु सात । मधिलोक एक राजू रहात ॥
फिर ब्रह्मसुरग राजू जु पाच । भू सिद्ध एक राजू जु सांच ॥
दश चार ऊँच राजू गिनाय । षट्द्रव्य लये चतुकोण पाय ॥
तसु वातवलय लपटाय तीन । इहनिराधार लखियो प्रवीन ॥
त्रसनाडी तामॉध जान खास । चतुकोन एक राजू जु व्यास ॥
राजू उतङ्ग चौदह प्रमान । लखि स्वयंसिद्ध रचना महान ॥
तामध्य जीव त्रस आदि देव । निज थान पाय तिष्ठे भलेय ॥
लखि अधोभागमे श्वभ्रथान । गिन सात कहे आगम प्रमान ॥
षट्थानमाँहि नारकि बसेय । इक श्वभ्रभाग फिर तीनभेय ॥
तसु अधोभाग नारकि रहाय । पुनिऊर्ध्वभाग द्वय थानपाय ॥
बसरहे भवन व्यतरजु देव । पुर हर्म्य छजे रचना स्वयमेव ॥
तिहथान गेह जिनराजभाख । गिन सातकोटि बहत्तर जुलाख।
ते भवन नमो मनवचन काय । गतिश्वभ्रहरन हारे लखाय ॥
पुनि मध्यलोक गोलाअकार । लखिदीप उदधि रचना विचार ।
गिन असखयात भाखे जुसंत । लखि संभुरमन सबके जुअंत ॥
इक राजुव्यासमै सर्व जान । मधिलोकतनो इह कथन मान ॥

सबमध्य द्वीप जम्बू गिनेय । अयदशम रुचिकवर नाम लेय ।।
इन तेरह में जिनधाम जान । शतचार अठावन है प्रमान ।।
खग देव असुरनर आयआय । पद पूज जाय शिर नायनाय ।।
जय ऊर्द्ध्वलोक सुर कल्पवास । तिहथानछजे जिनभवनभास।।
जय लाखचुरासीपं लखेय । जयसहस सत्याणव और ठेय ।।
जय बीसतीन पुनि जोड़देय । जिन भवन अकीर्तम जानलेय।।
प्रतिभवन एकरचना कहाय । जिनबिंब एकशत आठ पाय ।।
शतपञ्च धनुष उन्नत लसाय । पदमासनयुत वर ध्यानलाय।।
शिरतीन छत्रशोभितविशाल । त्रयपादपीठ मणिजटितलाल।।
भामण्डलकी छवि कौन गाय । पुनिचवरढुरत चौसठि लखाय ।।
जय दुन्दुभिरव अद्भुत सुनाय । जयपुष्पवृष्टि गंधोदकाय ।।
जय तरुअशोक शोभा भलेय । मंगल विभूति राजत अमेय ।।
घटतूप छजे मणिमाल पाय । घटधूम्रधूम्र दिग सर्व छाय ।।
जयकेतुपंक्ति सोहै महान । गधर्व देव गुन करत गान ।।
सुरजनमलेतलखि अवधिपाय । तिसथान प्रथम पूजनकराय ।।
जिनगेहतनो वरनन अपार । हम तुच्छबुद्धि किम लहतपार।।
जयदेव जिनेसुर जगत भूप । नमि "नेम" मंगै निज देहरूप ।।

दोहा—तीनलोक मे सासते, श्रीजिन भवन विचार ।
मनवचतन करि शुद्धता, पूजो अरघ उतार ।।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटि षट्पंचाशल्लक्ष-सप्तनवतिसहस्र-चतु-शतैकाशीति अकृत्रिम श्रीजिनचैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।। २३ ।।

तिहु जगभीतर श्रीजिनमन्दिर, बने अकीर्तम अति सुखदाय।
नर सुर खगकरि वदनीक जे, तिनको भविजन पाठ कराय॥
धनधान्यादिक सपति तिनके, पुत्रपौत्र सुख होत भलाय।
चक्रीसुर खग इन्द्र होयके, करम नाश शिवपुर सुख थाय॥

(इत्याशीर्वाद पुष्पाजलि क्षिपेत्)

स्व० त्यागी दौलतरामजी वर्णी कृत

श्री ऋषि-मण्डल पूजा

स्थापना ॥ दोहा ॥

चौवीस जिन पद प्रथम नमि, दुतिय सुगणधर पाय।
तृतीय पञ्च परमेष्ठि को, चौथे शारद माय॥
मन वच तन ये चरन युग, करहु सदा परनाम।
ऋषि मण्डल पूजा रचों, बुधि बल द्यो अभिराम॥

अडिल्ल छन्द—चौविस जिन वसु वर्ग पञ्च गुरु जे कहे।
रत्नत्रय चव देव चार अवधी लहे॥
अष्ट ऋद्धि चव दोय सूर ह्रीं तीन जू।
अरहत दश दिग्पाल यन्त्र मे लीन जू॥

दोहा—यह सव ऋषि मण्डल विषै, देवी देव अपार।
तिष्ठ तिष्ठ रक्षा करो, पूजूं वसु विधि सार॥

ॐ ह्रीं वृषभादि चौवीसतीर्थङ्कर, अष्टवर्ग अर्हदादि पञ्चपद-दर्शन-ज्ञान-चारित्रसहितचतुर्निकायदेव, चार प्रकार अवधि धारक श्रमण, अष्टऋद्धिसयुक्त चतुर्विंशति सूरि, तीन ह्री, अर्हद् विम्व, दसदिग्पाल यन्त्रसम्बन्धिपरमदेव अत्र अवतर २ सवौषट् आह्वानन।

अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठ स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

अथाष्टक

क्षीर उदधि समान निर्मल, तथा मुनि-चित सारसों ।
अरभृङ्ग मणिमय नीर सुन्दर, तृषा तुरित निवारसों ।।
जहँ सुभग ऋषि मण्डल विराजे पूजि मन वच तन सदा ।
तिस मनोवाञ्छित मिलत सब सुख स्वप्नमे दुख नहिं कदा ।।
ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थाय यन्त्रसम्बन्धिपरमदेवाय जलं ।।१।।

मलय चन्दन लाय सुन्दर, गंध सों अलि झंकरै ।
सो लेहु भविजन् कुम्भ भरिके तप्त दाह सबै हरै ।।
जहँ सुभग ऋषि० ।। तिस मनो० ।। चदनं ।।

इन्दु किरण समान सुन्दर, ज्योति मुक्ता की हरै ।
हाटक रकेबी धारि भविजन, अखय पद प्राप्ती करै ।।
जहँ सुभग ऋषि० ।। तिस मनो० ।। अक्षत ।।

पाटल गुलाब जुही चमेली, मालती बेला घने ।
जिस सुरभितै कलहस नाचत, फून गुंथि माला बने ।।
जहँ सुभग ऋषि० ।। तिस मनो० ।। पुष्पं ।।

अर्द्ध चन्द्र समान फेनी, मोदकादिक ले घने ।
घृतपक्व मिश्रित रस सु पूरे, लख क्षुधा डाइनि हने ।।
जहँ सुभग ऋषि० ।। तिस मनो० ।। नैवेद्यं ।।

मणि दीप ज्योति जगाय सुन्दर, वा कपूर अनूपकं ।
हाटक सुथाली माँहि धरिके, वारि जिनपद भूपकं ।।
जहँ सुभग ऋषि० ।। तिस मनो० ।। दीपं ।।

कामिनी मोहनी छन्द

परम उत्कृष्ट परमेष्ठी पद पाँच को,
नमत शत इन्द्र खगवृन्द पद साँच को।
तिमिर अघ-नाश करणार्थ तुम अर्क हो,
अर्घ लेय पूज्य पद देत बुद्धि तर्क हो ।।

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थाय पचपरमेष्ठिपरमदेवाय अर्घ्यं० ।

सुन्दरी छन्द

सुभग सम्यक् दर्शन ज्ञान जू, कह चारित्र सुधारक मान जू ।
अर्घ सुन्दर द्रव्य सु आठ ले, चरण पूजहुं साज सु ठाठ ले ।।

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थेभ्यो सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्योऽर्घ्यं० ।

हरिगीता छन्द

भवनवासी देव व्यन्तरज्योतिषी कल्पेन्द्र जू,
जिनगृह जिनेश्वर देव राजें रत्नके प्रतिविम्ब जू ।
तोरण ध्वजा घण्टा विराजें चँवर ढरत नवीन जू,
वर अर्घले तिन चरण पूजों हर्ष हिय अति लीन जू ।।

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थेभ्य भवनेन्द्रव्यतरेन्द्र-ज्योतिषेन्द्र-कल्पेन्द्र-चतु प्रकारदेवगृहेभ्य श्रीजिनचैत्यालयसंयुक्तेभ्यो अर्घ्यं नि० ।

दोहा—अवधि चार प्रकार मुनि, धारत जे ऋषिराय ।
अर्घ लेय तिन चरण जजि, विघन सघन मिट जाय ।।

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थेभ्य चतु.प्रकारअवधिधारकमुनिभ्योऽर्घ्यं०

भुजङ्गप्रयात छन्द

कही आठऋद्धि धरे जे मुनीश, महाकार्यकारी बखानी गनीशं ।
जल गंध आदि दे जजो चर्न नेरे, लहो सुक्ख सगरे हरों दुःख फेरे

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थेभ्य अष्टऋद्धिमहितमुनिभ्यो अर्घ्यं० ।

श्री देवी प्रथम बखानी, इन आदिक चौबीसो मानी।
तत्पर जिन भक्ति विषै हैं, पूजत सब रोग नशै है॥
ॐ ह्री सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थेभ्य श्री-आदिचतुर्विंशतिदेवीभ्यो अर्घ्यं

हंसा छन्द

यन्त्र विषै वरन्यो तिरकोन, ह्रीं तहँ तीन युक्त सुखभौन।
जल फलादि वसु द्रव्य मिलाय, अर्घ सहित पूजूँ शिरनाय॥
ॐ ह्री सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थाय त्रिकोणमध्ये तीनह्री संयुक्तायार्घ्यं

तोमर छन्द

दस आठ दोष निरवारि, छियालीस महा गुण धारि।
वसु द्रव्य अनूप मिलाय, तिन चर्न जजो सुखदाय॥
ॐ ह्री सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थाय अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशत महागुणयुक्ताय अर्हद्परमेष्ठिने अर्घ्यं।

सोरठा--दश दिश दिग्पाल, दिशानाम सो नामवर।
तिनगृह श्रीजिन आल, पूजों मैं वन्दौं सदा॥
ॐ ह्री सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थेभ्य दशदिग्पालेभ्य जिनभक्तियुक्तेभ्योऽर्घ्यं

दोहा—ऋषिमण्डल शुभयन्त्र के, देवी देव चितारि।
अर्घ सहित पूजहुँ चरन, दुख दारिद्र निवारि॥
ॐ ह्री सर्वोपद्रवविनाशनसमर्थेभ्य ऋषिमंडल-सम्बधिदेवीदेवेभ्योऽर्घ्यं।

जयमाला

दोहा—चौबीसो जिन चरन नमि, गणधर नाऊँ भाल।
शारद पद पकज नमूँ, गाऊँ शुभ जयमाल॥
जय आदीश्वर जिन आदिदेव, शत इन्द्र जजे मैं करहुँ सेव।
जय अजित जिनेश्वर जे अजीत, जे जीत भये भवतै अतीत॥

जय सम्भव जिन भवकूप माहि, डूबत राखहु तुम शरण आँहि ।
जय अभिनन्दन आनन्द देत, ज्यों कमलों पर रवि करत हेत ।।
जय सुमति सुमतिदाता जिनन्द, जय कुमतितिमिर नाशनदिनंद
जय पद्मालकृत पद्मदेव, दिनरैन करहुँ तव चरन सेव ।।
जय श्रीसुपार्श्व भवपाश नाश, भविजीवनकूँ दियो मुक्तिवास ।
जय चन्द जिनेश दया निधान, गुणसागर नागर सुख प्रमान ।।
जय पुष्पदत जिनवर जगीश शतइन्द्र नमत नित आतमशीश ।
जय शीतल वच शीतलजिनद, भवताप नशावत जगतचन्द ।।
जयजय श्रेयास जिन अति उदार,भविकंठ माँहि मुक्तासुहार ।
जय वासुपूज्य वासव खगेश, तुम स्तुतिकरि पुनि नमिहैं हमेश ।।
जय विमल जिनेश्वर विमलदेव, मलरहित विराजत करहुं सेव।
जय जिन अनतके गुण अनंत, कथनी कथ गणधर लहै न अंत ।।
जय धर्मधुरंधर धर्मधीर, जय धर्मचक्र शुचि न्याय वीर ।
जय शांति जिनेश्वर शांतभाव, भववन भटकत शुभमग लखाव।
जय कुन्थु कुन्थवा जीव पाल, सेवक पर रक्षा करि कृपाल ।
जय अरहनाथ अरि कर्म शैल, तपवज्र खड लहि मुक्ति गैल ।।
जय मल्लि जिनेश्वर कर्म आठ, मल डारे पायो मुक्ति ठाठ ।
जय सुव्रत मुनिसुव्रत धरत, जय सुव्रत व्रत पालत महत ।।
जय नमियनमत सुरवृन्द पाय, पद पंकज निरखत शीश नाय ।
जय नेमि जिनन्द दयानिधान, फैलायो जगमे तत्त्वज्ञान ।।
जय पारस जिन आलस निवारि, उपसर्ग रुद्र कृत जीतधारि ।
जव महावीर महाधीरधार, भवकूप थकी जगतै निकार ।।

जय वर्ग आठ सुन्दर अपार, तिन भेद लखत बुध करतसार ।
जय परमपूज्य परमेष्ठि सार, जिन सुमरत वर्षे आनंदधार ।
जय दर्शन ज्ञान चरित्र तीन, ये रत्न महा उज्ज्वल प्रवीन ।
जय चार प्रकार सुदेव सार, तिनके गृह जिन मदिर अपार ।।
जो पूजैं वसुविधि द्रव्य लाय, मैं इत जजि तुमपद शीशनाय ।
जो मुनिवर धारत अवधिचारि, तिन पूजें भवि भवसिंधु पार ।
जो आठ ऋद्धि मुनिवर धरंत, ते मोपैं करुणा करि महत ।
चौबीस देवि जिन भक्ति लीन, वन्दन ताको सु परोक्ष कीन ।।
जे ह्रीं तीन त्रैकोण मांहि, तिन नमत सदा आनन्द पांहि ।
जय जय जय श्रीअरहत बिंब तिन पद पूजूं मैं खोइ डिंब ।
जो दश दिग्पाल कहे महान, जे दिशा नाम सो नाम जान ।
जे तिनके गृह जिनराज धाम, जे रत्नमयी प्रतिभाभिराम ।।
ध्वज तोरण घण्टा युक्तसार, मोतिन माला लटके अपार ।
जे ता मधि वेदी है अनूप, तहँ राजत हैं जिनराज भूप ।।
जय मुद्रा शान्ति विराजमान, जा लखि वैराग्य बढ़े महान ।
जे देवी देव सु आय आय, पूजें तिन पद मन वचन काय ।।
जलमिष्ट सु उज्ज्वल पय समान, चदन मलयागिरिको महान ।
जव अक्षत अनियारे सु लाय, जे पुष्पन की माला बनाय ।।
चरु मधुर विविध ताजी अपार, दीपक मणिमय उद्योतकार ।
जे धूप सु कृष्णागरु सुखेय, फल विविध भाँतिके मिष्ट लेय ।
वर अर्घ अनूपम करत देव, जिनराज चरण आगे चढेव ।
फिर मुखतें स्तुति करते उचार, हो करुणानिधि संसार तार ।

मै दुःख सहे संसार ईश, तुमतै छानी नाहीं जगीश ।
जे इहविधि मौखिक स्तुति उचार, तिन नशत शीघ्र संसारभार
इहविधि जो जन पूजन कराय, ऋषिमडल यत्र सु चित्तलाय ।
जे ऋषिमंडल पूजा करन्त, ते रोग शोक संकट हरन्त ।।
जे राजा रन कुल वृद्धि जान, जल दुर्ग सु गज केहरि बखान ।
जे विपति घोर अरु कहि मसान, भय दूर करे यह सकल जान ।।
जे राजभ्रष्ट ते राज पाय, पद-भ्रष्ट थकी पद शुद्ध थाय ।
धन अर्थी धन पावै महान, यामे संशय कछु नाहि जान ।।
भार्या अर्थी भार्या लहन्त, सुत अर्थी सुत पावे तुरन्त ।
जे रूपा सोना ताम्रपत्र, लिख तापर यन्त्र महा पवित्र ।।
ता पूजे भागै सकल रोग, जे वात पित्त ज्वर नाशि शोग ।
तिन गृहतैं भूत पिशाच जान, ते भाग जाहि संशय न आन ।।
जे ऋषिमंडल पूजा करन्त, ते सुख पावत कहि लहै न अन्त ।
जब ऐसो मैं मन माहि जान, तब भाव सहित पूजा सुठान ।।
वसुविधिसे सुन्दर द्रव्य ल्याय, जिनराज चरण आगे चढ़ाय ।
फिर करत आरती शुद्धभाव, जिनराज सभी लख हर्ष आव ।।
तुम देवन के हो देव देव, इक अरज चित्त में धारि लेव ।
जे दीनदयाल दया कराय, जो मै दुखिया इह जग भ्रमाय ।।
जे इस भव वन मे वास लीन, जे काल अनादि गमाय दीन ।
मैं भ्रमत चतुर्गति विपिन माहि, दुख सहै सुक्ख को लेश नाहि।।
ये कर्म महारिपु जोर कीन, जे मनमाने ते दुःख दीन ।
ये काहू को नहि डर धराय, इनतै भयभीत भयो अघाय ।।

यह एक जन्म की बात जान, मैं कह न सकत हूँ देवमान ।।
जव तुम अनन्त परजाय जान, दरशायो संसृति पथ विधान ।
उपकारी तुम बिन और नाहि, दीखत मोको इस जगत माहि ।।
तुम सब लायक ज्ञायक जिनन्द, रत्नत्रय सपति द्यो अनन्द ।
यह अरज करूँ मैं श्रीजिनेश, भव भव सेवा तुम पद हमेश ।।
भवभवमे श्रावक कुल महान, भवभवमे प्रकटित तत्त्वज्ञान ।
भवभवमे व्रत हो अनागार, तिस पालनतें हो भवाब्धिपार ।।
ये योग सदा मुझको लहान, हे दीनबन्धु करुणा निधान ।
"दौलत ओसेरी" मित्र दोय तुम शरण गही हरषित सुहोय ।।

घत्ता—जो पूजे ध्यावे भक्ति बढावे, ऋषिमण्डल शुभयन्त्र तनी ।
या भव सुखपावे सुजस लहावे, परभव स्वर्ग सुमोक्षधनी ।।

ॐ ह्रीं सर्वोपद्रव विनाशनसमर्थाय रोगशोकसर्वसंकट हराय सर्वशान्तिपुष्टिकराय, श्रीवृषभादि चौबीस तीर्थंकर अष्टवर्ग अर्हन्तादि पञ्चपद, दर्शन ज्ञान चारित्र सहित चतुर्णिकाय देव, चव प्रकार अवधि-धारक श्रमण अष्ट ऋद्धि संयुक्त बीस चार सूरि तीन ह्रीं, अर्हद्बिंब, दशदिग्पाल यन्त्र सम्बन्धि परमदेवाय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ऋषिमण्डल शुभ यन्त्र को, जो पूजे मन लाय ।
ऋद्धि सिद्धि ता घर बने, विघन सघन मिट जाय ।।
विघन सघन मिट जाय, सदा सुख सो नर पावे ।
ऋषि मण्डल शुभ यन्त्र तनी, जो पूज रचावें ।।
भावभक्ति युत होय, सदा जो प्राणी ध्यावें ।
या भव मे सुख भोग, स्वर्ग की सम्पति पावें ।।

या पूजा परभाव मिटे, भव भ्रमण निरन्तर ।
यातें निश्चय मान करो नित भाव भक्ति धर ।।

इत्याशीर्वाद । पुष्पाजंलि क्षिपेत् ।

सम्वत् मू ग्रह मांहि जो, सावन सार असेत ।
पहर रात बाकी रही, पूर्ण करी सुख हेन ।। इति

श्रीतीस चौबीसीजी की पूजा

पाँच भरत शुभ क्षेत्र पाँच ऐरावते,
आगत-नागत वर्तमान जिन सास्वते ।
सो चौबीसी तीस जजूँ मन लायके,
आह्वानन विधि करूँ बार त्रय गायके ।।

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्वन्धि-पंचभरत-पंचऐरावत-क्षेत्रस्थ भूतानागत-वर्तमान-सम्वन्धिसप्तशतविंशतितीर्थङ्करा ! अत्र अवतरत अवतरत संवौपट् इति आह्वाननं । अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठ ठ स्थापन । अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वपट् सन्निधिकरणम् ।

नीर दधि क्षीर हम ल्यायो, कनक को भृङ्ग भरवायो ।
अबै तुम चरण ढिग आयो, जन्म-मृत्यु रोग नशवायो ।।
द्वीप अढाई सरस राजै, क्षेत्र दस ता विषै छाजै ।
सात शत बीस जिनराजै, पूजताँ पाप सब भाजै ।।१।।

ॐ ह्रीं पचभरत पंचऐरावत-क्षेत्रस्थ भूतानागत-वर्तमानकाल सम्बन्धी तीस चौबीसी के सातसौवीस तीर्थङ्करेभ्य नमं जलं निर्व० ।

सुरभिजुत चन्दन ल्यायो, सग करपूर घसवायो ।
धार तुम चरण ढरवायो, भव-आताप नशवायो ।।द्वीप०।।

ॐ ह्रीं पाच भरत पाँच ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्य नम चन्दन निर्व० ।

चन्द्रसम तन्दुल सारं, किरण मुक्ता जु उनहार ।
पुञ्ज तुम चरणांढग धारं,अक्षयपद प्राप्तिके कार ।।द्वीप०।।

ॐ ह्रीं पाँच भरत पाँच ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्य नम अक्षत नि० ।

पुष्प-शुभ गन्धजुत सोहे, सुगन्धित तासु मन मोहे ।
जजत तुम मदन क्षय होवे, मुक्तिपुर पलकमे जोवे ।।द्वीप०।।

ॐ ह्रीं पाच भरत पाँच ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्य नम पुष्प निर्व० ।

सरस व्यजन लिया ताजा, तुरत बनवाइया खाजा ।
चरन तुम जजत महाराजा क्षुधादुख पलकमे भाजा ।।द्वीप०।।

ॐ ह्रीं पाँच भरत पाँच ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्य नम नैवेद्यं निर्व० ।

दीप तम नाशकारी है, सुरभिजुत ज्योतिधारी है ।
दशों दिश कर उजारी है, धूम्र मिस पाप छारी है ।।द्वीप०।।

ॐ ह्रीं पाँच भरत पाँच ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्य नम दीप निर्व० ।

सुगन्धित धूप दश अंगी, जलाऊँ अग्नि के सगी ।
करम की सैन्य चतुरगी, पूजते पाप सब भगी ।।द्वीप०।।

ॐ ह्रीं पाँच भरत पाँच ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्य नम धूप निर्व० ।

मिष्ट उत्कृष्ट फल ल्यायो, अष्ट अरि दुष्ट नशवायो ।
श्रीजिन भेंट धरवायो, कार्य मनवांछित पायो ।।द्वीप०।।

ॐ ह्री पाँच भरत पाँच ऐरावत क्षेत्र संबंधी तीस चौवीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्य नम फल नि० ।

द्रव्य आठो जु लीना है, अर्घ कर में नवीना है ।
पूजते पाप छीना है, 'भानमल' जोड कीना है ।।द्वीप०।।

ॐ ह्री पाँच भरत पाँच ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीस चौबीसी के सात सौ वीस जिनेन्द्रेभ्य' नम अर्घ्यं निर्व० ।

प्रत्येक अर्घ ।

जम्बूद्वीप की प्रथममेरुकी, दक्षिणदिशा भरत शुभ जान ।
तहाँ चौबीसी तीन विराजे आगत नागत औ वर्तमान ।।
तिनके चरणकमलको निशदिन, अर्घचढ़ाय करू उर ध्यान ।
इस ससार भ्रमणते तारो, अहो ! जिनेश्वर करुणावान ।।

ॐ ह्री सुदर्शन मेरु की दक्षिण दिशि भरत क्षेत्र सम्बन्धी तीन चौवीसी के बहत्तर जिनेन्द्रेभ्य नम अर्घ्यं निर्व० ।

सुदर्शनमेरु की उत्तर दिशमे, ऐरावत क्षेत्र शुभ जान ।
आगत नागत वर्तमान जिन, बहतर सदा सास्वते जान ।।
तिनके चरणकमलको निशदिन, अर्घचढ़ाय करू उर ध्यान ।
इस ससार भ्रमणते तारो, अहो जिनेश्वर ! करुणावान ।।

ॐ ह्री सुदर्शन मेरु की उत्तर दिशि ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीन चौवीसी के वहत्तर जिनेन्द्रेभ्य नम. अर्घ्यं निर्व०

खण्ड धातकी विजय मेरुके, दक्षिण दिशा भरत शुभ जान ।
तहाँ चौबीसी तीन विराजे, आगत नागन अरु वर्तमान ।।
तिनके चरणकमलको निशदिन, अघचढ़ाय करू उर ध्यान ।
इस ससार भ्रमणते तारो, अहो जिनेश्वर ! करुणावान ।।

ॐ ह्री घातकीखण्ड द्वीपकी पूर्व दिशि विजय मेरु की दक्षिण दिशि भरत क्षेत्र सम्वन्धी तीन चौवीसी के बहत्तर जिनेन्द्रेभ्यो नम अर्घ्यं नि०

इसी द्वीपको प्रथम शिखरको, उत्तर ऐरावत जु महान ।
आगत नागत वर्तमान जिन, बहत्तरि सदा सासते जान ।।
तिनके चरणकमलको निशदिन, अर्घचढाय करू उर ध्यान ।
इस संसार भ्रमणतै तारो, अहो जिनेश्वर ! करुणावान ।।

ॐ ह्री घातकीखण्ड द्वीप की पूर्व दिशि विजय मेरु की उत्तरदिशि ऐरावतक्षेत्र सवधी तीन चौवीसी के बहत्तर जिनेन्द्रेभ्यो नम अर्घ्यं नि०

चौपई ।

खडघातकी अचल सुमेर, दक्षिण तास भरत चहुँ घेर ।
तामे चौबीसी त्रय जान, आगत नागत अरु वर्तमान ।।

ॐ ह्री घातकीखण्ड की पश्चिम दिशि अचल मेरु की उत्तर दिशि ऐरावतक्षेत्र सबधो तीन चौबीसी के बहत्तर जिनेन्द्रेभ्य नम अर्घ्यं नि०

अचल मेरु उत्तर दिश जान, ऐरावत शुभ क्षेत्र बखान ।
तामे चौबीसी त्रय जान, आगत नागत अरु वर्तमान ।।

ॐ ह्री घातकीखण्ड की पश्चिम दिशि अचल मेरु की उत्तार दिशि ऐरावतक्षेत्र सवधी तीन चौवीसी के बहत्तार जिनेन्द्रेभ्य नम अर्घ्यं नि०

सुन्दरी छन्द

द्वीप पुष्करकी पूरब दिशा, मन्दिर मेरुकी दक्षिण भरतसा ।
ताविषै चौबीसी तीन जू, अर्घ लेय जजू परवीन जू ।।

ॐ ह्री पुष्कर द्वीप की पूर्व दिशि अचलमेरु की दक्षिण दिशि भरत क्षेत्र सवधी तीन चौबीसी के बहत्तार जिनेन्द्रेभ्य नम अर्घ्यं नि० ।

गिरि सु मन्दिर उत्तर जानिये, क्षेत्र ऐरावत सु बखानिये ।
ताविषै चौबीसी तीन जू, अर्घ लेय जजू परवीन जू ।।

ॐ ह्री पुष्कर द्वीपकी पूर्वदिशि मन्दरमेरु की उत्तरदिशि ऐरावत-क्षेत्र सम्बन्धी तीन चौबीसी के बहत्तर जिनेन्द्रेभ्य. नम अर्घ्यं नि० ।

पद्धरि छन्द

पश्चिम पुष्करगिरि विद्युतमाल, ताके दक्षिण भरतसु विशाल ।
तामे चौबीसी हैं जु तीन, वसु द्रव्य लेय पूजूँ प्रवीन ।।

ॐ ह्री पुष्करार्द्ध द्वीपकी पश्चिम दिशि विद्युतमालोमेरु की दक्षिण दिशि भरतक्षेत्रसवधी तीन चौबीसीके बहत्तर जिनेन्द्रेभ्य. नम अर्घ्यं ।

याही गिरि के उत्तर जु ओर, ऐरावत क्षेत्र बनो निहोर ।
तामे चौबीसी हैं जु तीन, वसु द्रव्य लेय पूजो प्रवीन ।।

ॐ ह्री श्रीपुष्करार्द्धद्वीपकी पश्चिम दिशि विद्युत-मालीमेरु की उत्तरदिशि ऐरावतक्षेत्रसम्बन्धी तीसचौबीसीके बहत्तर जिनेन्द्रेभ्योऽर्घ्यं ।

द्वीप अढाई के विषै, पञ्चमेरु हित दाय ।
दक्षिण उत्तर तासुकै, भरत ऐरावत भाय ।।
भरत ऐरावत भये, एक क्षेत्र के माहीं ।
चौबीसी है तीन, दसों दिशि ही के ठाहीं ।।
दसों क्षेत्र के तीस सात सौ बीस जिनेश्वर ।
अर्घ लेय करजोड़ि जजों मन शुद्ध मुदित कर ।।

ॐ ह्री पचमेरु सम्बन्धी भरतैरावत क्षेत्र के विषै तीन चौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्य नम अर्घ्यं नि० ।

जयमाला

दोहा—**चौबीसी तीसो नमों, पूजा परम रसाल ।**
मन-वच-तन को शुद्धकरि, अब वरणों जयमाल ।।
जय द्वीप अढ़ाई मध्य सार, गिरि पाँच मेरु उन्नत अपार ।

तागिरि पूरब-पश्चिम जु ओर, शुभक्षेत्र विदेह वसै जुठौर ।।
ता दक्षिण क्षेत्र भरत सु जानि, है उत्तर ऐरावत महान ।
गिरि पाचतनै दश क्षेत्र जोय, ताको वरनन सब सुनो लोय ।।
है भरतक्षेत्र दक्षिण जु व्यास, ऐरावत ताहि प्रमाण भास ।
इक क्षेत्र बीच विजयार्द्ध एक, ता ऊपर विद्याधर अनेक ।।
इक क्षेत्र विषै षट खड जानि, तहाँ छहो काल बरतै महान ।
जो तीन कालमे भोगभूमि, दस जाति कल्पतरु रहे भूमि ।।
जब चौथो काल लगै जु आय, तब कर्मभूमि वर्ते सुभाय ।
तब तीर्थङ्कर को जन्म होय, सुरलेय जजै गिरि पर सुजोय ।।
बहु भक्ति करें सब देव आय, ताथेई थेई-थेई की तान लाय ।
हरि ताण्डव नृत्य करे अपार, सब जीवन मन आनन्दकार ।।
इत्यादि भक्ति करिके सुरेन्द्र, निजथान जाय जुत देव वृन्द ।
याहीविधि और कल्यान जान, हरिभक्ति करै अतिहर्ष ठान ।।
या कालविषै पुण्यवत जीव, नरजन्मधार शिव लहै अतीव ।
जे त्रेसठ पुरुष प्रधान होय, सब याही काल विषै जु होय ।।
जब पञ्चमकाल करे प्रवेश, मुनि धर्म रहे कहु कहु प्रदेश ।
बिरले कोइ दक्षिन देश माँहि, जिनधर्मी नर बहुते जु नाँहि ।।
जब षष्ठम काल करे प्रवेश, दुख ही दुख व्यापै सर्व देश ।
तब मासभक्षी नर सर्व होय, जहँ धर्म नाम सुनिये न कोय ।।
या विधि दशक्षेत्र मँझार सार, इहकाल फिरन सब एकसार ।
ह्रद पर्वत नदि रचना प्रमान, आगम अनुकूल लखो सुजान ।।
इक क्षेत्र चौबीसी तीन जान, आगत नागत अरु वर्तमान ।

दशक्षेत्र सातशत जोडबीस, नित वन्दनकरूँ कर जोड़शीश ।।
सबही जिनराज नमो त्रिकाल, मोहिंभवसागरसे लेहु निकाल ।
मम हृदयमध्य तिष्ठो जिनेश, काटो भव फद जजा जगेश ।।
रविमलकी विनती सुनहु नाथ, तुमशरणलई कर जोड़िहाथ ।
मनवांछित कारज सार-सार, यह अरज हिये मे धार-धार ।।
घत्ता—शत सातजु बीसं, श्रीजगदीशं, आगत नागत वर्तंतु है ।
मनवचतन पूजे, शुध-मन हूजे, सुरगमुक्तिपद धरतजु है ।।

ॐ ह्रीं पञ्चमेरु सम्बन्धी दशक्षेत्र विषै तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्य नम अर्घ्यं निर्व•

दोहा—सम्वत् सत उन्नीस के, ता ऊपर पुनि आठ ।
पौष कृष्ण तृतीया गुरू, पूरन भयो जु पाठ ।।
अक्षर मात्रा की कसर, बुध-जन शुद्ध करेय ।
अल्पबुद्धि मोहि जानके, दोष कबहुं नहिं देय ।।
पढ्यो नहीं व्याकरण मैं, पिङ्गल देख्यो नाहिं ।
जिनवाणी परसादतें, उमंग भई घट माहिं ।।
मान बड़ाई ना चहूँ, चहूं धर्म को अङ्ग ।
नित प्रति पूजा कीजियो, मनमें धारि उमङ्ग ।।

इत्याशीर्वाद. । पुष्पाजलिं ।

रविव्रत पूजा

यह भविजन हितकार, सु रविव्रत जिन कही ।
करहु भव्यजन लोक, सुमन देके सही ।
पूजो पार्श्व जिनेन्द्र त्रियोग लगाय के ।
मिटै सकल संताप मिले निधि आयके ।।

मतिसागर इक सेठ कथा ग्रन्थन कही ।
उनही ने यह पूजा कर आनन्द लही ।।
तातैं रविव्रत सार, सो भविजन कीजिये ।
सुख सपति संतान, अतुल निधि लीजिये ।।

दोहा—प्रणमो पार्श्व जिनेश को, हाथ जोड़ शिर नाय ।
परभव सुख के कारने, पूजा करूँ बनाय ।।
एतवार व्रत के दिना, एही पूजन ठान ।
ताफल सुख सम्पति लहै, निश्चय लीजे मान ।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर सवौषट् आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ प्रतिष्ठापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्, सन्निधिकरणम् ।

उज्ज्वल जल भर कर अति लायो रतन कटोरन माहीं ।
धार देत अति हर्ष बढ़ावत, जन्म जरा मिट जाहीं ।।
पारसनाथ जिनेश्वर पूजो, रविव्रत के दिन भाई ।
सुख सम्पति बहु होय तुरत ही, आनन्द मगलदाई ।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल ।।१।।

मलयागिरि केशर अति सुन्दर, कुंकुम रग बनाई ।
धारदेत जिन चरणन आगे, भव आताप नशाई ।पारस. चदन।
मोतीसम अति उज्ज्वल तन्दुल ल्यायो नीर पखारो ।
अक्षयपदके हेतु भावसो श्रीजिनवर ढिग धारो । पारस.अक्षत।
वेला अर मचकुन्द चमेली, पारिजात के ल्यावो ।
चुनचुन श्रीजिन अग्र चढाऊँ, मनवांछित फल पाऊँ ।पा. पुष्पं।
बावर फेनी गुञ्जा आदिक, घृत मे लेत पकाई ।
कंचनथार मनोहर भरके, चरणन देत चढाई ।।पारस.नैवेद्य।।

मणिमय दीप रतनमय लेकर, जगमग ज्योति जगाई ।
जिनके आगे आरति करके, मोह तिमिर नशजाई ।।पा.।दीपं।
चूरणकर मलयागिरि चन्दन, धूप दशांग बनाई ।
पावक तट में खेय भावसो, कर्मनाश हो जाई ।।पारस।धूपं।।
श्रीफल आदि बदाम सुपारी, भाँति-भाँति के लावो ।
श्रीजिनचरण चढ़ाय हर्ष कर, तातें शिवफल पावो ।।पा.।फलं।।
जल गन्धादिक अष्ट द्रव्य ले, अरघ बनाओ भाई ।
नाचत गावत हर्षभावसो, कंचनथार भराई ।।पा.अर्घ्यं।।

गीतिका छन्द

मन वचन काय विशुद्ध करके, पार्श्वनाथ सु पूजिये ।
जल आदि अर्घ बनाय भविजन, भक्तिवन्त सु हूजिये ।।
पूज्य पारसनाथ जिनवर, सकल सुख दातारजी ।
जे करत हैं नरनार पूजा, लहत सौख्य अपारजी ।।अर्घ्यं।।

जयमाला

दोहा—यह जग मे विख्यात है, पारसनाथ महान ।
जिनगुण की जयमालिका, भाषा करों बखान ।।

पद्धरि छन्द

जयजय प्रणमो श्रीपार्श्वदेव, इन्द्रादिक तिनकी करत सेव ।
जयजय सु बनारस जन्म लीन, तिहुँलोक विषै उद्योत कीन ।।
जय जिनके पितु श्रीअश्वसेन, तिनके घर भए सुखचैन एन ।
जय बामा देवी मात जान, तिनके उपजे पारस महान ।।२।।
जय तीन लोक आनन्द देन, भविजन के दाता भए ऐन ।

जय जिनने प्रभुको शरण लीन, तिनकी सहाय प्रभुजी सोकीन
जय नाग नागनी भये अधीन, प्रभुचरणन लाग रहे प्रवीन।
तजिके सो देह स्वर्ग सुजाय, धरणेन्द्र पद्मावती भये आय।४।
जय चोर सु अञ्जन अधम जान, चोरी तज प्रभुको धरो ध्यान
जय मृत्यु भये स्वर्ग सु जाय, ऋद्धी अनेक उनने सो पाय।५।
जय मतिसागर इक सेठ जान, जिन रविव्रत पूजा करी ठान।
तिनके सुत थे परदेश माँहि जिन अशुभ कर्म काटे सु ताँहि।।
जे रविव्रत पूजन करी सेठ, ता फलकर सबसे भई भेट।
जिन२ने प्रभुका शरण लीन, तिन ऋद्धिसिद्धि पाई नवीन।७।
जे रविव्रत पूजा करहि जेय, ते सौख्य अनन्तानन्त लेय।
धरणेन्द्र पद्मावती हुए सहाय, प्रभुभक्त जान तत्काल आय।८।
पूजा विधान इहि विध रचाय, मन वचन काय तीनों लगाय।
जे भक्तिभाव जयमाल गाय, सो ही सुख संपति अतुल पाय।९।
बाजत मृदंग बीनादि सार गावत नाचत नाना प्रकार।
तन ननननननन ताल देत, सन नननननन सुर भर सुलेत।१०
ता थेई थेई थेई पग धरत जाय, छमछमछमछम घुंघरू बजाय
जे करहिंनिरत इहि भाँत-भाँत, ते लहहि सौख्य शिवपुर सुजात

दोहा—रविव्रत पूजा पार्श्व की, करे भविक जन जोय।
सुख सम्पति इह भव लहे, तुरत सुरग पद होय।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि०।

अडिल्ल—रविव्रत पार्श्व जिनेन्द्र पूज भवि मन धरें।
भव भव के आताप सकल छिन में टरें।।

होय सुरेन्द्र नरेन्द्र आदि पदवी लहे ।
सुख सम्पति सन्तान अटल लक्ष्मी रहे ।।
फेर सर्व विध पाय भक्ति प्रभु अनुसरै ।
नाना विध सुख भोग बहुरि शिवतियवरै ।।

इत्याशीर्वाद ।

श्री आदिनाथ जिन पूजा

नाभिराय मरुदेविके नन्दन, आदिनाथ स्वामी महाराज ।
सर्वार्थसिद्धितै आप पधारे, मध्यम लोक माँहि जिनराज ।।
इन्द्रदेव सब मिलकर आये, जन्म-महोत्सव करने काज ।
आह्वानन सब विधि मिल करके, अपने कर पूजे प्रभु पाँय ।।

ॐ ह्री श्रीआदिनाथ जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर, सवौषट् ।
ॐ ह्री श्रीआदिनाथ जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ ।
ॐ ह्री श्रीआदिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो, भव भव वषट् ।

क्षीरोदधि को उज्ज्वल जल ले, श्रीजिनवर पद पूजन जाय ।
जन्म-जरा दुख मेटन कारन, ल्याय चढाऊँ प्रभु के पांय ।।
श्रीआदिनाथके चरणकमल पर, बलि-२ जाऊँ मनवच-काय ।
हो करुणानिधि भवदुख मेटो, यातैं मै पूजों प्रभु पाय ।।

ॐ ह्री श्रीआदिनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ।

मलयागिरि चन्दन दाह निकन्दन, कचनझारी मे भर ल्याय ।
श्रीजिनके चरण चढ़ावो भविजन, भवआताप तुरत मिट जाय ।।

श्री आदि० ।। चन्दनं ।।

शुभशालि अखंडित सौरभ-मंडित, प्राशुकजलसों धोकर ल्याय।
श्रीजीके चरन चढावो, भविजन, अक्षयपदको तुरत उपाय।
श्री आदि० ॥ अक्षत ॥

कमल केतकी बेल चमेली, श्रीगुलाब के पुष्प मँगाय।
श्रीजीके चरण चढावो भविजन, कामबाण तुरत नशि जाय॥
श्री आदि० ॥ पुष्पं।

नेवज लीना तुरत रस भीना, श्रीजिनवर आगे धरवाय।
थाल भराऊँ क्षुधा नशाऊँ, ल्याऊँ प्रभुके मगन गाय॥
श्री आदि० ॥नैवेद्य॥

जगमग जगमग होत दशो दिशि, ज्योति रही मंदिरमें छाय।
श्रीजीके सम्मुख करत आरती, मोह-तिमिर नाशै दुखदाय॥
श्री आदि० ॥ दीपं ॥

अगर कपूर सुगन्ध मनोहर, चन्दन कूट सुगन्ध मिलाय।
श्रीजीके सम्मुख खेय धुपायन, कर्म जरे चहुँ गति मिट जाय।
श्री आदि० ॥ धूप ॥

श्रीफल और बदाम सुपारी, केला आदि छुहारा ल्याय।
महामोक्ष-फल पावन कारन, ल्याय चढाऊँ प्रभु के पाँय॥
श्री आदि० ॥ फलं ॥

शुचि निरमल नीर गन्ध सुअक्षत, पुष्प चरु ले मन हरषाय।
दीप धूप फल अर्घ सु लेकर, नाचत ताल मृदग बजाय॥
श्री आदि० ॥ अर्घ्यं ॥

पञ्चकल्याणक

सर्वार्थसिद्धितैं चये, मरुदेवी उर आय।
दोज असित आषाढ़की जजूं तिहारे पाँय॥

ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णाद्वितीयायां गर्भकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चैत वदी नौमी दिना, जन्म्या श्रीभगवान।
सुरपति उत्सव अति करया, मैं पूजौं धर ध्यान॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णानवम्यां जन्मकल्याणकप्राप्ताय श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तृणवत् ऋद्धि सब छाँड़िके, तप धारयो वन जाय।
नौमी चैत असेत की, जजूं तिहारे पाँय॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णानवम्यां तपःकल्याणकप्राप्ताय श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

फाल्गुन वदि एकादशी, उपज्यो केवलज्ञान।
इन्द्र आय पूजा करी, मैं पूजौं यह थान॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णा एकादश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माघ चतुर्दशि कृष्णकी, मोक्ष गये भगवान।
भवि जीवों को बोधिके, पहुँचे शिवपुर थान॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णाचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

आदीश्वर महाराज मैं विनती तुमसे करूं।
चारों गति के माहिं मैं दुख पायो सो सुनो।

अष्ट कर्म मैं हूं एकलो, यह दुष्ट महादुख देत हो।
कवहूं इतर निगोद मे मोकूं, पटकत करत अचेत हो॥
म्हारी दीनतणी सुन वीनती॥१॥
प्रभु! कवहुंक पटक्यो नरकमे, जठै जीव महादुख पाय हो।
नितउठि निरदई नारकी, जठै करत परस्पर घात हो। म्हा॰
प्रभु! नरकतणा दुख अव कहूँ, जठै करत परस्पर घात हो।
कोइयक बाँधै खम्भसो, पापी दे मुद्गर की मार हो॥म्हा॰॥
कोइयक काटे करोतसो, पापी अंगतणी दोय फाड़ हो।
प्रभु! यहविधि दुखभुगत्याघणा, फिर गतिपाई तिरयचहो।म्हा॰
हिरणा बकरा बाछड़ा, पशु दीन गरीब अनाथ हो।
प्रभु! मै ऊंट वलद, भैसा भयो, ज्यापै लदियो भार अपारहो।म्हा
नहि चाल्यो जठै गिरपर्यो, पापी दे सोटन की मार हो।
प्रभु! कोइयक पुण्यसँजोगसूं, मैतो पायो स्वर्ग निवास हो॥म्हा॰
देवांगना सम रमि रह्यो, जठै भोगनिको परिताप हो।
प्रभु! सग अप्सरा रमि रह्यो, कर कर अति अनुराग हो।म्हा।
कबहुँक नन्दनवन-विषै, प्रभु कबहुं वन-गृह माहि हो।
प्रभु! यहविधि काल गमायके, फिर माला गई मुरझाय हो।म्हा॰।
देवतिथि सब घट गई, फिर उपज्यो सोच अपार हो।
सोचकरता तन खिरपड़्यो, फिर उपज्यो गरभमे जाय हो।म्हा॰।
प्रभु! गर्भतणा दुख अब कहूँ, जठै सकड़ाई की ठौर हो।
हलन-चलन नहि करि सक्यो, जठै सघनकीच घनघोर हो।म्हा

माता खावै चरपरो, फिर लागै तन सन्ताप हो।
प्रभु! जो जननी खातो भखै, फिर उपजे तन सन्ताप हो ।म्हा.।
औंधे मुख झूल्यो रह्यो फेर निकसन कौन उपाय हो।
कठिन२ कर नीसरयो, जैसे निसरै जंतीमें तार हो ।।म्हा.।।
प्रभु फिर निकसत ही धरत्यां पड्यो, फिर लागी भूख अपार हो
रोय-रोय बिलख्यो घणो, दुख वेदनको नहिं पार हो ।म्हा.।
प्रभु! दुख मेटन समरथ धणी, यातैं लागूं तिहारे पांव हो।
सेवक अरज करै प्रभु! मोकूं, भवोदधि पार उतार हो ।म्हा.।

दोहा—श्रीजी की महिमा अगम है, कोइ न पावै पार।
मैं मति अल्प अज्ञान हौं, कौन करै विस्तार ।।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा—विनती ऋषभ जिनेश की, जो पढ़सी मन लाय।
स्वर्गों में संशय नहीं, निश्चय शिवपुर जाय ।।

इत्याशीर्वादः।

पञ्चबालयती तीर्थंकर पूजा

दोहा—श्रीजिन पञ्च अनंगजित, वासुपूज्य मलि नेम।
पारसनाथ सुवीर अति, पूजूं चित धरि प्रेम ।।

ॐ ह्रीं पञ्चबालयति तीर्थंकरा! अत्रावतरत अवतरत संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठ: ठ:, स्थापनं। अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् सन्निधिकरणं।

शुचि शीतल सुरभि सुनीर, लायो भर झारी।
दुख जामन मरन गहीर, याको परिहारी ।।

श्री वासुपूज्य मलि नेम, पारस वीर अति ।
नमु मन वच तन धरि प्रेम, पाँचो बालयती ।।

ॐ ह्री श्री वासुपूज्य, मल्लिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ, महावीर स्वामी, श्री पञ्च बालयती तीर्थंकरेभ्य नम जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ।

चन्दन केशर करपूर, जल मे घसि आनो ।
भव तपभजन सुखपूर, तुमको मैं जानो ।।श्रीवासु ।।चन्दन ।।

वर अक्षत विमल बनाय, सुवरण थाल भरे ।
वह देश देश के लाय, तुमरी भेट धरे ।।श्रीवासु ।।अक्षत।।

यह काम सुभट अति सूर, मनमे क्षोभ करो ।
मैं लायो सुमन हजूर, याको वेग हरो ।।श्रीवासु । पुष्प।।

षट्रस पूरित नैवेद्य, रसना सुखकारी ।
द्वय करम वेदनी छेद, आनन्द ह्वै भारी ।।श्रीवासु ।।नैवेद्य।।

धरि दीपक जगमग ज्योति, तुम चरणन आगे ।
मम मोह तिमिर क्षय होत, आतम गुण जागे ।।श्रीवासु ।दीप।।

ले दशविधि धूप अनूप, खेऊँ गन्ध मयी ।
दशबन्ध दहन जिन भूप, तुमही कर्म जयी ।।श्रीवासु ।।धूपं।।

पिस्ता अरु दाख बदाम, श्रीफल लेय घने ।
तुम चरण जजू गुणधाम, द्यो सुख मोक्ष तने ।।श्रीवासु.।फलं।।

सजि वसुविधि द्रव्य मनोज्ञ, अर्घ बनावत है ।
वसुकर्म अनादि संयोग, ताहि नशावत हैं ।।श्रीवासु.।।अर्घ्यं।।

जयमाला

दोहा—वाल ब्रह्मचारी भये, पांचो श्री जिनराज।
तिनकी अव जयमालिका, कहू स्वपर हितकाज ।।
जय जय जय जय श्रीवासुपूज्य, तुम सम जगमे नहीं और दूज।
तुम महा लक्ष सुर लोक छार, जव गर्भ मात माही पधार ।।
षोडश स्वपने देखे सुमात, बल अवधि जान तुम जन्म तात।
अति हर्षधार दम्पति सुजान, वहु दान दियो जाचक जनान ।।
छप्पन कुमारिका कियो आन, तुम मात सेव वहु भक्ति ठान।
छ. मास अगाऊ गर्भ आय, धनिपति सुधरन नगरी रचाय ।।
तुम मात महल आगन मंझार, तिहुकाल रतन धारा अपार।
वरषाये षट् नवमास सार, धनि जिन पुरुषन नयनन निहार ।।
जय मल्लिनाथ देवन सुदेव, शतइन्द्र करत तुम चरन सेव।
तुम जन्मत ही त्रयज्ञान धार, आनन्द भयो तिहुँ जग अपार ।।
तवही ले चहु विधि देव सङ्ग, सौधर्म इन्द्र आयो उमङ्ग।
सजि गज ले तुम हरि गोद आप, वन पांडुक शिल ऊपर सुथाप।
क्षीरोदधि तै वहु देव जाय, भरि जल घट हाथो हाथ लाय ।।
करि न्हवन वस्त्र भूषण सजाय, दे ताल नृत्य ताडव कराय ।।
पुनि हर्ष धार हिरदै अपार, सव निर्जर रद जय जय उचार।
तिस अवसर आनन्द हेजिनश, हम कहिवे समरथ नाहि लेश ।।
जय जादोपति श्री नेमनाथ, हम नमत सदा जुग जोर हाथ।
तुम व्याह समय पशुवन पुकार, सुन तुरत छुडाये दयाधार ।।
कर कंकण अरु सिर मौर वन्द, सो तोड भये छिनमे स्वछन्द।

तबही लौकांतिक देव आय, वैराग्य वर्द्धनी थुति कराया ।।
तत्क्षरण शिविका ल्यायो सुरेन्द्र, आरूढ भये तापर जिनेन्द्र ।
सो शिविका निज कन्धन उठाय, सुरनरखग मिल तपवन ठंराय
कचलौच वस्त्र भूषण उतार, भये जती नगन मुद्रा सुधार ।
हरि केश लेय रतनन पिटार, सो क्षीर उदधि माही पधार ।।
जय पारसनाथ अनाथ नाथ, सुर असुर नमत तुम चरण माथ ।
जुग नाग जरत कीनी सुरक्ष, यह बात सकल जगमे प्रत्यक्ष ।।
तुम सुर धनु सम लखि जग असार, तपतपन भये तन ममतक्षार
शठ कमठ कियो उपसर्ग आय, तुम मन सुमेरु नहिं डगमगाय ।।
तुम शुक्लध्यान गहि खडग हाथ,अरि चार घातिया कर सुघात।
उपजायो केवलज्ञान भानु, आयो कुवेर हरि वच प्रमाण ।।
की समोसरण रचना विचित्र, तहा खिरत भई वाणी पवित्र।
मुनि सुर नर खग तिर्यञ्च आय,सुन निजनिज भाषा बोध पाय
जय वर्द्धमान अन्तिम जिनेश, पायो न अन्त तुम गुण गणेश ।
तुम चार अघाती करम हान, लियो मोक्षस्वयसुख अचलथान।।
तबही सुरपति बल अवधि जान, सब देवन युत बहु हर्षठान ।
सजि निज वाहन आयो सुतीर, जहँपरमौदारिक तुम शरीर ।।
निर्वाण महोत्सव कियो भूर, ले मलयागिर चन्दन कपूर ।
बहु द्रव्य सुगंधित सरस सार, तामे श्रीजिनवर वपु पधार ।।
निज अगनिकुमारिन मुकुटनाय,तिद रतनशुचि ज्वाला उठाय
तिस सिर माही दीनी लगाय, सो भस्म सबन मस्तक चढाय ।।
अति हर्ष थकी रचि दीपमाल, शुभ रतनमई दशदिश उजाल ।

पुनि गीत नृत्य बाजे बजाय, गुण गाय ध्याय सुरपति सिधाय ।
सो नाथ अबैं जगमे प्रत्यक्ष, नित होत दीपमाला सुलक्ष ।
हे जिन तुम गुण महिमा अपार, वसु सम्यग्ज्ञानादिक सुसार ।।
तुम ज्ञानमाँहि तिहुँलोक दर्व, प्रतिबिम्बित हैं चर अचर सर्व ।
लहि आतम अनुभव परम ऋद्धि, भये वीतराग जगमें प्रसिद्ध ।।
ह्वै बालयति तुम सबन एम, अचिरज शिवकांता वरी केम ।
तुम परम शांतिमुद्रा सुधार, किय अष्टकर्म रिपु को प्रहार ।।
हम करत विनती बार बार, कर जोर स्व मस्तक धार धार
तुम भये भवोदधि पार पार, मोको सुवेग ही तार तार ।।
अरदास दास ये पूर पूर, वसु कर्म शैल चकचूर चूर ।
दुख सहन करन अब शक्ति नाहि, गहि चरण शरण कीजे निवाह
चौ०—पांचो बालयति तीर्थेश, तिनकी यह जयमाल विशेष ।
मन वच काय त्रियोग सम्हार, जे गावत पावत भवपार ।।
ॐ ह्री पच बालयति तीर्थङ्कर जिनेन्द्राय नम पूर्णार्घ्यम् ।
दोहा—ब्रह्मचर्य सो नेह धरि, रचियो पूजन ठाठ ।
पांचों बाल यतीन को, कीजे नित प्रति पाठ ।।२६।।
।। इत्याशीर्वाद ।।

पंच परमेष्ठी की पूजा

दोहा—मंगल मय मगल करन, पंच परम पदसार ।
अशरण को येही शरण, उत्तम लोक मझार ।।१।।
चव अरिष्ट को नष्ट कर, अनन्त चतुष्टय पाय ।
परमइष्ट अरिहन्त पद, बन्दौं शीष नवाय ।।२।।

वसुविधिहरि वसु भू बसे, वसुगुणयुत शिव ईश ।
नमूं नाम वसु अङ्ग तिन, दायक पद जगदीश ॥३॥
आप धरें आचार शुभ, पर अचरावन हार ।
सो आचारज गुणनधर, नमूं शीष कर धार ॥४॥
आप अङ्ग पूरव पढ़ें, शिषिन पढ़ावत सोय ।
ते उवझाय सु नाय सिर, नमूं देव धी मोय ॥५॥
मोक्ष मार्ग साधन उदित, धरें मूलगुण साध ।
मैं शिव साधन साधु पद, नमूं हरन भव बाध ॥६॥
इहि विधि पंचनि प्रणमिकर, रचूं पूज सुखकार ।
तातें प्रथमहिं पढनि को, समुचय जजिहूं सार ॥पुष्पांजलि

(अथ पंच परमेष्ठी सामान्य पूजा)

(अडिल्ल)—प्रथम नमूं अरिहन्त सिद्ध अरु सूर ही,
उपाध्याय सब-साधु नमूं गुण पूरही ।
परम इष्ट यह पंच जजों जुग पादही,
आह्वानन विधि करूं सगुण गण गायही ॥

ॐ ह्रीं श्रीअरहंतादि सर्वसाधुपर्यन्त पंचपरमेष्ठिन् ! अत्रावतर अवतर संवौषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ, स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्, सन्निधिकरणम् ।

॥ अथाष्टक—गीता छन्द ॥

वर मिष्ट स्वच्छ सुगन्ध शीतल, सुर सरित जल लाइये ।
भरि कनक झारी धार देतें, जन्म मृत्यु नशाइये ॥
अरिहन्त सिद्ध आचार्य, अध्यापक सुपद सब साध ही ।

पूजूं सदा मन वचन तन तें, हरो मो भव बाध ही ।।

ॐ ह्रीं श्रीअरिहन्त सिद्ध आचार्य उपाध्याय सर्वसाधुभ्य जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलम् निर्वपामीति स्वाहा ।

मलय माँहि मिलाय केशर, घसो चन्दन बावना ।
भृङ्गार भरकरि चरण पूजत, भवाताप नसावना ।अरि.।चदनं।
अक्षत अखण्डित सुरभि श्वेत हि, लेत भर करि थाल ही ।
जे जजै भविजन भाव सेती, अक्षयपद पावै सही ।अरि.।अक्षतं।
स्वर्ण-रूप्यमई मनोहर, विविध पुष्प मिलाइये ।
भरि कनकथाल सु पूजिहैं, भवि समर-बान नशाइये ।अरि.।पुष्पं
बहु मिष्ट मोदक सुष्ट फैनी, आदि बहु पकवान ही ।
भरिथाल प्रभुपद जजें विधितै,नशें क्षुत् दुखनाशही ।अरि नैवेद्यं
मणि स्वर्ण आदि उद्योत कारण, दीप बहु विधि लीजिये ।
तन मोह पटल विध्वंसने, जुग पाद पूजन कीजिये ।अरि.।दीपं।
कर्पूर अगर सुगन्ध चन्दन, कनक धूपायन भरें ।
भवि करहि पूजा भाव सेती, अष्ट कर्म सबै जरें ।।अरि.।धूपं।
बादाम श्रीफल लौंग खारिक, दाख पुंगी आदि ही ।
भरि थाल भविजन पूजि करतै,मोक्ष फल पावै सही।अरि.।फलं।
जल गन्ध अक्षत पुष्प चरु ले, दीप धूप फलो गही ।
करि अर्घ पूजें पंचपद को, लहैं शिव सुख वृन्द ही ।अरि.।अर्घ्यं

जयमाला

दोसा-नमूं प्रथम अरिहन्त सिद्ध, आचारज उवझाय ।
साधु सकल विनती करूं, मन वच तन सिरनाय ।१।

॥ पद्धरि छन्द ॥

चव घाति चूर अरिहन्त नाम, पायो च्युत दोप न सुगुणधाम।
तिनमें षटचाल जु मुख्य थाय, तिनमे दसगुण जनमत उपाय ॥
जय केवल ज्ञान उद्योत ठान, उपजे दश गुण को कहि वखान।
चौदह गुण देवनि करत होय, तिनकी महिमा वरणे सु कोय ॥
वर अष्ट प्रातिहारज सयुक्त, चामर छत्रादिक नाम युक्त।
केवल दर्शन वरज्ञान पाय, सुख वीर्य अनन्त चतुष्ट पाय ॥
ये काहिवे के गुण हैं छियार, गुण अनन्त लसैं तिनको न पार।
तातें पूजों करि अर्घ लेय, मोहि तारि २ अरिहन्त देव ॥
वसुविधिहरि वसुभू वसे सिद्ध, वसुगुण आदिक लहि अत्यतरिद्ध।
पूजू मन वच तन अर्घ ल्याय, मोकूं तुम थानक मे वसाय ॥
वर द्वादश तप दश धम भेव, षट् आवस पचाचार येव।
त्रय गुप्ति सुगुन छत्तीसपाय, सव सघ ज्येष्ठ गुरु सूरिथाय ॥
वहु-जीवन वृष को मग वताय, शिव सपति दीनो सु मुनिराय।
पूजू मन वच तन अर्घ लेय, मोकूं अजरामर पद करेय ॥
वर ग्यारह अग चवद पूर्व, पढि उपाध्याय पद लह्यौ पूव।
तिनके पद पूजत अर्घ लाय, सब भ्रम नाशन जिन ज्ञान पाय॥
गुण मूल अष्टविंशति अनूप, धरि है सब साधु सु शिव सरूप।
व्रत पचसमिति पणइन्द्र रोध, षट् आवस भूमि सुशयन सोध॥
तजि स्नान वसन कच लौंच ठानि, लघु भोजन ठाढे करत आन
दतौन त्याग ये अष्टबीस, धरि साधैं शिव तिन नमत शीष ॥
करि अष्ट द्रव्य को अर्घ लेय, सब साधुन को करिहो जु सेव।

मैं मन वच तनतैं शीश नाय, नमिहों मो शिवमग को बताय।
जल थल रन बन मग विकट माँहि, ये पंच परमगुरुशरण थाँहि
डायन प्रेतादि उपद्रव माँहि, इन पंच परम चिन को सहाय।
बहु जीव जपत नवकार येव, रिद्ध सिद्ध लहि संकट हरेव ।।
सौ कथन पुरान पुरान माँहि, हम ताको महिमा का कहाँहि।
घत्ता—ये पंच अराधैं, भव दुख बाधे, शिवसंपति सहजे वरई।
मै मन वच गाऊं, शीश नवाऊं, मो अविचल थानहि धरई।
ॐ ह्री पञ्चपरमेष्ठिजिनेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं।
सोरठा—विघन विनाशनहार, मंगलकारी लोक में।
सो तुमको भी सार, पंच सकल मंगल करें ।।
इत्याशीर्वाद।

श्रीचद्रप्रभ जिनपूजा

छप्पय—चारुचरन आचरन चरन चितहरन चिहनचर।
चदचंदतनचरित, चंदथल चहत चतुर नर ।।
चतुक चंड चकचूरि, चारि चिदचक्र गुनाकर।
चंचल चलित सुरेश, चूलनुत चक्र धनुरहर ।।
चरअचरहितू तारनतरन, सुनत चहकि चिरनंद शुचि।
जिनचन्द चरन चरच्यो चहत, चितचकोर नचि रच्चि रुचि।१।
दोहा—धनुष डेढ़सौ तुङ्ग तन, महासेन नृपनन्द।
मातुलछमनाउर जये, थापो चन्दजिनंद ।।२।।
ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र ! अत्रावतर अवतर। संवौषट्।
ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ! ठ ठ।

ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

चाल—द्यानतरायकृत नन्दीश्वरअष्टककी, अष्टपदी तथा होली आदिमे ।

गंगाह्रदनिरमलनीर, हाटकभृङ्गभरा ।

तुम चरण जजो वरवीर, मेटो जनमजरा ।।

श्रीचंदनाथद्युति चंद, चरनन चंद लगै ।

मनवचतन जजत अमंद आतम जोति जगै ।।१।।

ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं नि० ।

श्रीखण्डकपूर सुचंग, केशर रंग भरी ।

घसि प्रासुकजलके संग, भवआताप हरी ।। श्रीचंद. ।।२।।

ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं नि० स्वाहा ।

तंदुल सित सोम समान, सम ले अनियारे ।

दिय पुञ्ज मनोहर आन, तुमपदतर प्यारे ।।श्रीचंद.।।३।।

ॐ ह्री श्रीचंद्रप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० स्वाहा ।

सुरद्रुमके सुमन सुरंग, गंधित अलि आवैं ।

तासों पद पूजत चंग, कामविथा जावैं ।।श्रीचंद.।।४।।

ॐ ह्री श्रीचंद्रप्रभजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंशनाय पुष्प नि० स्वाहा ।

नेवज नानापरकार, इन्द्रिय बलकारी ।

सो लै पद पूजों सार, आकुलताहारी ।।श्रीचंद.।।५।।

ॐ ह्री श्रीचंद्रप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य नि० स्वाहा ।

तमभंजन दीप सँवार, तुम ढिग धारतु हों ।

मम तिमिरमोह निरवार, यह गुण धारतु हो ।।श्रीचंद.।।६।।

ॐ ह्री श्रीचंद्रप्रभजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि० स्वाहा ।

दशगंधहुतासन माँहि, हे प्रभु खेवतु हौं ।

मम करम दुष्ट जरि जाँहि, यातें सेवतु हौं ।।श्रीचं.।।

ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूप नि० स्वाहा ।

अति उत्तमफल सु मँगाय, तुम गुणगावतु हौं ।

पूजौं तन मन हरषाय, विघन नशावतु हौं ।।श्रीचं.८।।

ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फल नि० स्वाहा ।

सजि आठों दरब पुनीत, आठों अंग नमो ।

पूजो अष्टमजिन मीत, अष्टम अवनि गमो ।।श्रीच.९।।

ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्रायाऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि० स्वाहा ।

[पञ्चकल्याणक अर्घ] [छन्द द्रुतविलवित तथा सुन्दरी मात्रा १६]

कलिपचमचैत सुहात अली । गरभागम मगल मोद भली ।

हरि हर्षित पूजत मातु पिता । हम ध्यावत पावत शर्मसिता ।।

ॐ ह्री चैत्रकृष्णापञ्चम्या गर्भमङ्गलप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्रायार्घ्यं

कलि पौषइकादशि जन्म लयो, तब लोकविषं सुखथोक भयो ।

सुर ईश जजें गिरशीश तबै । हम पूजत हैं नुतशीश अबै ।२।

ॐ ह्री पौषकृष्णैकादश्या जन्ममगलप्राप्ताय श्रीचंद्रप्रभजिनेन्द्रायार्घ्यं ।

तप दुद्धर श्रीधर आप धरा । कलिपौष इग्यारसि पर्व वरा ।।

निजध्यानविषै लवलीन भये । धनि सोदिन पूजत विघ्न गये ।।

ॐ ह्री पौषकृष्णैकादश्या तप मगलमडिताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्रायार्घ्यं ।

वर केवलभानु उद्योत कियो । तिहुँलोकतणो भ्रम मेट दियो ।

कलि फाल्गुनसप्तमि इन्द्र जजे । हम पूजहि सर्वकलंक भजे ।।

ॐ ह्री फाल्गुनकृष्णासप्तम्या केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीचद्रप्रभजिनेन्द्रायार्घ्यं

सित फाल्गुण सप्तमि मुक्ति गये । गुणवत अनत अबाध भये ।
हरि आय जजें तित मोदधरें । हम पूजतही सब पाप हरें ।।
ॐ ह्री फाल्गुणशुक्लासप्तम्यामोक्षमगलमडिताय श्रीचद्रप्रभजिनेन्द्रायार्घ्यं

अथ जयमाला ।

हे मृगांकअंकितचरण, तुम गुण अगम अपार ।
गणधरसे नहिं पार लहि, तौ को वरणत सार ।।
पै तुम भगति हिये मम, प्रेरै अति उमगाय ।
तातै गाऊँ सुगुण तुम, तुम ही होउ सहाय ।।
जयचन्द्रजिनेन्द्र दयानिधान, भवकानन-हानन दवप्रमान ।।
जयगरभजनममगल दिनद, भवि जीवविकाशन शर्मकद ।।।३।
दशलक्षपूर्वकी आयु पाय, मनवाछित सुख भोगे जिनाय ।
लहि कारण ह्वै जगतै उदास,चित्यो अनुप्रेक्षा सुखनिवास ।४।
तित लौकांतिक बोध्योनियोग,हरिशिविकासजि धरियो अभोग।
तापै तुम चढ़ि जिनचन्दराय, ताछिनकी शोभाको कहाय ।।५।।
जिन अग सेत सितचमर ढार, सितछत्रशीष गलगुलकहार ।
सित रतनजडित भूषण विचित्र,सितचंद्रचरण चरचैपवित्र ।६।
सिततनुद्युति नाकाधीश आप, सितशिविका कांधेधरिसुचाप ।
सित सुजस सुरेश नरेश सर्व, सित चितमै चितत जात पर्व ।७।
सित चदनगरतै निकसि नाथ, सित वनमे पहुचे सकलसाथ ।
सितशिलाशिरोमणिस्वच्छछाँह,सित तपतितधार्यो तुमजिनाह
सित पयको पारण परमसार, सित चन्द्रदत्त दीनों उदार ।

छन्द चौबोला

आठों दरब मिलाय गाय गुण, जो भविजन जिनचंद जजें।
ताके भव भवके अघ भाजें, मुक्तिसार सुख ताहि सजें ॥२०॥
जमके त्रास मिटें सब ताके, सकल अमंगल दूर भजें।
'वृन्दावन' ऐसो लखि पूजत, जातें शिवपुरि राज रजें ॥२१॥

इत्याशीर्वादः । पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

इति श्रीचन्द्रप्रभजिनपूजा समाप्तम् ।

श्री शान्तिनाथ जिन पूजा

मत्तगयन्द छन्द (सवैया)

या भवकानन[1] में चतुरानन[2], पापपनानन[3] घेरि हमेरी।
आतम जानन मानन ठानन[4], बान न होइ दई शठ मेरी ॥
ता मद भानन आपहि हो, यह छान न आन न आननटेरी।
आन गही शरनागतको, अब श्रीपतजी पत राखहु मेरी ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथ जिनेन्द्र ! अत्रावतर अवतर, संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथ जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ, ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथ जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव, वषट् ।

[अष्टक] छन्द त्रिभंगी । अनुप्रासक । (मात्रा ३२ जगनवर्जित ।)

हिमगिरिगतगंगा, धार अभंगा, प्रासुक संगा, भरि भृंगा।
जरजन्म मृतंगा, नाशि अघंगा, पूजि पदंगा मृदुहिंगा ॥
श्रीशान्तिजिनेशं, नुतनाकेशं, वृषचक्रेशं चक्रेशं।
हनि अरिचक्रेशं, हे गुनधेशं, दयामृतेशं मक्रेशं ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि० स्वा०

---

१. इस संसाररूप जंगल। २ चतुर्मुख। ३ पाप नष्ट करने वाले। ४ आत्माको जानने, समझने और उसमें स्थिर होनेकी आदत न होने देना।

वर बावनचंदन, कदलीनन्दन, घनआनन्दन सहित घसो ।
भवतापनिकन्दन, ऐरानन्दन, वन्दि अमन्दन, चरण वसों।श्री.।२
ॐ ह्री श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदन नि० स्वाहा ।
हिमकरकरि लज्जत, मलयसुसज्जत, अच्छत जज्जत भरिथारी ।
दुखदारिद गज्जत, सदपदसज्जत, भवभयभज्जत अतिभारी।श्री.
ॐ ह्री श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० स्वाहा ।
मंदार सरोजं कदली जोज, पुंज भरोज, मलयभर ।
भरि कंचनथारी, तुमढिग धारी मदनविदारी धीरधर ।श्री.।४
ॐ ह्री श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वसनाय पुष्प नि० स्वाहा ।
पकवान नवीने, पावन कीने, षटरसभीने सुखदाई ।
मनमोदनहारे, क्षुधा विदारे, आगे धारै, गुनगाई ।श्री.।।५।।
ॐ ह्री श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि स्वाहा ।
तुम ज्ञानप्रकाशे, भ्रमतमनाशे, ज्ञेयविकाशे सुखराशे ।
दीपक उजियारा, यातैं धारा, मोह निवारा निजभासे।श्री.।६।
ॐ ह्री श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीप नि स्वाहा ।
चन्दन करपूर करिवर चूर, पावक भूरं, माहिजुरं ।
तसु धूम उडावै, नाचत आवै, अलि गुंजावै, मधुरसुर।श्री.।७।
ॐ ह्री श्रीशान्तिनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूप निर्व० स्वाहा ।
बादाम खजूरं, दाडिम पूरं, निंबुक भूरं, ले आयो ।
तासों पद जज्जों, शिवफल सज्जों, निजरसरज्जो, उमगायो।श्री।
ॐ ह्री श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फल नि० स्वाहा ।
वसु द्रव्य सवारी, तुमढिग धारी, आनन्दकारी हगप्यारी ।
तुम हो भवतारी, करुनाधारी, यातैं थारी, शरनारी ।श्री.।९।

ॐ ह्री श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि० स्वाहा।

[पच कल्याणक अर्घ] (सुन्दरी तथा द्रुतविलवित छन्द)

असित सातय भादव जानिये, गरभमगल तादिन मानिये।
शचि कियो जननी पद चर्चन, हम करै इत ये पद अर्चन ॥

ॐ ह्री भाद्रपदकृष्ण-सप्तम्या गर्भमगलमडिताय श्रीशातिनाथायार्घ्यं०

जनम जेठ चतुर्दशि श्याम है, सकलइन्द्र सु आगत धाम है।
गजपुरै गज साजि सबै तबै, गिरि जजै इत मैं जजि हो अबै ॥

ॐ ह्री ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्या जन्ममगलप्राप्ताय श्रीशातिनाथायार्घ्यं०

भव शरीर सुभोग असार है, इमि विचार तबै तप धार हैं।
भ्रमर चौदशि जेठ सुहावनी, धरमहेत जजों गुन पावनी ॥

ॐ ह्री ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्या तपमगलमडिताय श्रीशातिनाथायार्घ्यं०।

शुकलपौष दशै सुखराश है, परम-केवल-ज्ञान प्रकाश है।
भवसमुद्र उधारन देवकी, हम करै नित मगल सेवकी ॥४॥

ॐ ह्री पौषशुक्लादशम्या केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीशातिनाथायार्घ्यं०।

असित चौदशि जेठ हनें अरी, गिरि समेदथकी शिव-तिय-वरी
सकलइन्द्र जजै तित आयकै, हम जजै इत मस्तक नायकै।५॥

ॐ ह्री ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्या मोक्षमगलप्राप्ताय श्रीशातिनाथायार्घ्यं०।

[जयमाला] छन्द रथोद्धता, चन्द्रवत्म तथा चन्द्रवत्म, वर्ण ११लाटानुप्रास

शांति शातिगुनमंडिते सदा। जाहि ध्यावत सु पडिते सदा ॥
मै तिन्हे भक्तिमंडिते सदा। पूजिहो कलुषहंडिते सदा ॥१॥
मोक्षहेत तुम ही दयाल हो। हे जिनेश गुनरत्नमाल हो।
मै अबै सुगुनदाम ही धरो। ध्यावतै तुरित मुक्ति-ती वरो।२

छन्द पद्धरि (१६ मात्रा)

जय शांतिनाथ चिद्रूपराज। भवसागरमे अद्भुत जहाज ।।
तुम तजि सरवारथसिद्धथान। सरवारथजुत गजपुर महान।१।
तित जनम लियौ आनन्द धार। हरि ततछिन आयौ राजद्वार
इन्द्रानी जाय प्रसूतथान । तुमको करमे लै हरष मान ।।२।।
हरि गोद देय सो मोदधार। सिर चमर अमर ढारत अपार।।
गिरिराज जाय तित शिला पांड। तापै थाप्यौ अभिषेक मांड।३
तित पचमउदधि तनो सु वार। सुरकर करकरि ल्याये उदार।
तब इन्द्र सहसकर करि आनंद। तुम सिर धारा ढारचौ सुनंद४
अघ घघघघघघ धुनि होत घोर।भभभभभभ घघधघ कलशशोर
द्रमद्रमद्रमद्रम बाजत मृदंग। झन नननननननन नूपुरंग।५।
तननननननननन तनन तान। घननननन घटा करत ध्वान ।।
ता थेइथेइथेइथेइथेइ सुचाल। जुत नाचत नावत तुमहिं भाल६
चटचटचट अटपट नटत नाट। झटझटझट हट नट शट विराट
इमि नाचत राचत भगतरग। सुर लेत जहा आनन्द सग।७।
इत्यादि अतुलमगल सुठाट। तित बन्यौ जहां सुरगिरि विराट
पुनि करिनियोग पितुसदन आय। हरि सौंप्यौ तुम तितवृद्धथाय८
पुनि राजमाहिं लहि चक्ररत्न। भोग्यौ छखण्ड करि धरम जत्न
पुनि तप धरि केवलरिद्धिपाय। भवि जीवनको शिवमग बताय
शिवपुर पहुचे तुम हे जिनेश। गुनमंडित अतुल अनन्त भेष ।।
मैं ध्यावतु हो नित शीश नाय। हमरी भवबाधा हरि जिनाय१०
सेवक अपनो निज जान जान। करुणा करि भौभय भान-भान

यह विघन मूलतरु खण्डखंड । चितचिंतित आनंद मंड मंड ११

(घत्ता)—श्रीशांति महंता, शिवतियकंता, सुगुन अनंता, भगवंता।
भव भ्रमन हनंता, सौख्यअनंता, दातारं तारनवंता ।१२।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छन्द रूपक सवैया (मात्रा ३१)

शान्तिनाथजिनके पदपंकज, जो भवि पूजैं मनवचकाय।
जनम जनम के पातक ताके, ततछिन तजिकैं जाय पलाय॥
मनवांछित सुख पावैं सो नर, बांचैं भगतिभाव अति लाय।
तातैं "वृन्दावन" नित वन्दैं, जातैं शिवपुरराज कराय॥

इत्याशीर्वाद । परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्।

श्री नेमिनाथ जिन पूजा

(छन्द लक्ष्मी, तथा अर्द्ध लक्ष्मीधरा)

जयति जय जयति जय जयति जय नेमकी,
धर्म औतार दातार शिव चैनकी[१]।
श्रीशिवानन्द भौफन्द निकन्द[२] की,
ध्यावैं जिन्हे इन्द्र नागेन्द्र औ मैनकी[३]॥
परम कल्याणके देनहारे तुम्हीं, देव हो एव तातैं करो ऐनकी[४]।
थापिहो बार त्रय शुद्ध उच्चारके, शुद्धता धार भवपारकू लेनकी॥

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिन ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ।
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिन ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

१ आनन्द की। २ हनने वाले। ३ कामदेव। ४ पूजा।

दाता मोक्ष के श्री नेमिनाथ जिनराय दाता० ॥ टेक ॥
निगमनदी कुश[1] प्रासुक लीनो, कंचन भृंग भराय ।
मनवचतनतें धार देत हो, सकल कलङ्क नसाय ।
दाता मोक्ष के श्री नेमिनाथ जिनराय, दाता० ॥१॥
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय जन्ममृत्युविनाशनाय जलम् निर्व० ।
हरिचन्दनजुत कदली नन्दन कुंकुम संघ घसाय ।
विघ्नतापनाशनके कारन, जजौं तिहारे पांय ॥दा.॥चन्दन।२।
पुण्य राशि तुम यश सम उज्ज्वल, तन्दुल शुद्ध मंगाय ।
अक्षयसौख्य भोगनके कारण,पुञ्जधरो गुणगाय ।दा ।अक्षतान्
पुंडरीक तृणद्रुमको आदिक, सुमन सुगन्धित लाय ।
दर्पकमन्मथ[2]भञ्जनकारन, जजहु चरण लवलाय ।दा.।पुष्पं।४।
घेवर बावर खाजे साजे, ताजे तुरित मगाय ।
क्षुधा-वेदनी नाश करणको, जजहु चरण उमगाय ।दा.।नैवेद्यं।
कनक-दीप नवनीत[3] पूरकर, उज्ज्वल जोति जगाय ।
तिमिर मोहनाशक तुमको लखि, जजहु चरन हुलसाय।दा.।दीपं
दशविध गन्ध मंगाय मनोहर, गुञ्जत अलिगण आय ।
दशोंविध जारन के कारन, खेवौं तुम ढिग लाय ॥दा.।धूप।७
सुरसवरण रसना मन-भावन, पावन फल सु मंगाय ।
मोक्ष-महाफल कारण पूजो, हे जिनवर तुम पाय ।दा.।फलं।८।
जल फल आदि साज शुचि लीने, आठो दरव मिलाय ।
अष्टम-क्षिति[4]के राज करनकों, जजौं अंग वसुनाय ।दा.।अर्घ्यं।९

१ जल । २. घमण्डी कामदेव । ३ घृत । ४ मुक्ति ।

पचकल्याणक

सित कार्तिक छट्ठ श्रमदा, गरभागम श्रानन्द कन्दा ।
शचि सेव शिवापद श्राई, हम पूजत मन वच काई ।।१।।

ॐ ह्री कार्तिक शुक्ला पष्ठ्या गर्भमगलप्राप्ताय श्री नेमिनाथायार्घ्यं ।

सित सावन छट्ठ श्रमदा, जनमे त्रिभुवन के चन्दा ।
पितु समुद महासुख पायो, हम पूजत विघन नशायो ।।२।।

ॐ ह्री श्रावणशुक्लापष्ठ्या जन्ममगलप्राप्ताय श्रीनेमिनाथायार्घ्यं ।

तजि राजमति व्रत लीनो, सित सावन छट्ठ प्रवीनो ।
शिवनारि तबै हरषाई, हम पूजें पद शिर नाई ।।३।।

ॐ ह्री श्रावण शुक्लापष्ठ्या तपकल्याणकप्राप्ताय श्रीनेमिनाथायार्घ्यं ।

सित श्राश्विन एकम चूरे, चारों घाती श्रति कूरे ।
लहि केवल महिमा सारा, हम पूजे श्रष्ट प्रकारा ।।४।।

ॐ ह्री श्राश्विन शुक्लाप्रतिपदाया केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीनेमिनाथायार्घ्यं

सित षाढ श्रष्टमी चूरे, चारो श्रघातिया कूरे ।
शिव ऊर्जयन्ततै पाई, हम पूजे ध्यान लगाई ।।५।।

ॐ ह्री श्रापाढशुक्ला श्रष्टम्या मोक्षमगलप्राप्ताय श्रीनेमिनाथायार्घ्यं ।

जयमाला

दोहा—श्याम छवी तन चाप[1] दश, उन्नत गुणनिधि धाम ।
शंख चिह्न पदमे निरखि, पुनि पुनि करो प्रणाम।१।

जय जय जय नेमि जिनन्द चन्द, पितु समुद देन श्रानन्द कन्द।
शिवमात कुमद मन मोद दाय, भविवृन्द चकोर सुखी कराय।२

जय देव श्रपूरव मारतड[2], तुम कीन ब्रह्मसुत[3] सहस्र खण्ड ।
शिवतिय मुख जलज विकासनेश,नहि रह्यो सृष्टि मे तम श्रशेष।३

१ धनुप । २ सूर्य । ३ कामदेव । ४ मुक्ति-स्त्री का मुख कमक ।

भवि भीत कोक[1] कीनो अशोक, शिव मग दरशायो शर्म थोक ।
जय २ जय २ तुम गुण गभीर, तुम आगम निपुण पुनीतधीर।४
तुम केवल ज्योति विराजमान, जय जय जय जय करुणानिधान।
तुम समवसरण मे तत्त्व-भेद, दरशायो जाते नशत खेद ।५।
तित तुमको हरि आनन्द धार, पूजत भक्ती जुत बहु प्रकार ।
पुनि गद्य-पद्य-मय सुजश गाय, जय बल अनन्त गुणवन्तराय।६
जय शिव शङ्कर ब्रह्मा महेश, जय बुद्ध विधाता विष्णुवेष ।
जयकुमति मतंगन[2]को मृगेन्द्र, जय मदन-ध्वान्तको रविजिनेंद्र।७
जय कृपासिन्धु अविरुद्ध बुद्ध, जय ऋद्धि सिद्धि दाता प्रबुद्ध ।
जय जग जन मन रजन महान, जय भवसागर महँ सुष्ठुयान[3]।८
तुम भक्ति करें ते धन्य जीव, ते पावें दिव[4] शिवपद सदीव ।
तुमरो गुण देव विविध प्रकार, गावत-नित किन्नरकी जु नार९
तुम भक्ति माहि लवलीन होय, नाचें ताथेइ-थेइ थेइ बहोय ।
तुम करुणासागर सृष्टि पाल, अब मोको बेगि करो निहाल।१०
मैं दुख अनन्त वसु करम जोग, भोगे सदीव नहिं और रोग ।
तुमको जगमे जान्यो दयाल, हो वीतराग गुण रतन माल।११
तातैं शरणा अब गही आय, प्रभु करो बेगि मेरी सहाय ।
यह विघन करम मम खड खड, मनवांछित कारज मड मंड।१२
ससार कष्ट चकचूर चूर, सहजानन्द मम उर पूर पूर ।
निज पर प्रकाश बुद्धि देह देह, तजिके बिलम्ब सुधि लेह लेह१३
हम जाँचत हैं यह बार बार, भव सागर तैं मो तार तार ।
नहीं सह्यो जात यह जगत दुःख, तातैं बिनवो हे सुगुन मुक्ख१४

१ चकवा । २. कुमति रूपी हाथी । ३ सवारी । ४ स्वर्ग ।

घत्ता—श्री नेमिकुमार जितमदमार, शीलागारं, सुखकार ।
भवभयहरतार शिवकरतार, दातार धर्माधार ।१५।

ॐ ह्री श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

मालिनी—सुख, धन, यश, सिद्धी पुत्र पौत्रादि वृद्धी ।
सकल मनसि सिद्धी होति है ताहि ऋद्धी ।।
जजत हर्षधारी नेमिको जो अगारी ।
अनुक्रम अरि जारी सो वरं मोक्षनारी ।।१६।।

इत्याशीर्वाद

श्री पार्श्वनाथ पूजा

गीता छन्द ।

वर स्वर्ग आनतको विहाय, सुमात वामा सुत भये ।
अश्वसेनके सुत पार्श्व जिनवर, चरण जिनके सुर नये ।।
नवहाथ उन्नत तन विराजे, उरग लच्छन पद लसै ।
थापूं तुम्हे जिन आय तिष्ठो, करम मेरे सब नसै ।।१।।

ॐ ह्री श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर, सवौषट् ।
ॐ ह्री श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठ ठ ।
ॐ ह्री श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अथाष्टक नाराच छन्द ।

क्षीरसोम के समान अम्बुसार लाइये ।
हेमपात्र धारके सु आपको चढाइये ।।
पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूं सदा ।
दीजिये निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा ।।१।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल० ।

चन्दनादि केशरादि स्वच्छ गन्ध लीजिये ।
आप चर्ण चर्च मोहतापको हनीजिये ।। पार्श्व० ।।२।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चन्दन नि० ।

फेन चन्दके समान अक्षतान् लाइकै ।
चर्णके समीप सार पुञ्जको नसाइये ।। पार्श्व० ।।३।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षत ।

केवड़ा गुलाब और केतकी चुनाइये ।
धार चर्णके समीप कामको नसाइये ।। पार्श्व० ।।४।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्प ।

घेवरादि बावरादि मिष्ट सद्य में सने ।
आप चर्ण अर्चते क्षुधादि रोग को हने ।। पार्श्व० ।।५।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ।

लाय रत्नदीप को सनेहपूर के भरूँ ।
वातिका कपूर वारि मोह ध्वातकूं हरूँ ।। पार्श्व० ।।६।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं ।

धूपगन्ध लेयकै सु अग्नि संग जारिये ।
तासु धूपके सुसंग अष्ट कर्म वारिये ।। पार्श्व० ।।७।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं ।

खारिकादि चिरभटादि रत्नथाल मे भरूँ ।
हर्षधारिकै जजूँ सुमोक्ष सुक्ख को वरूँ ।। पार्श्व० ।।८।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फल ।

नीरगन्ध अक्षतान् पुष्प चरु लीजिये ।
दीप धूप श्रीफलादि अर्घते जजीजिये ।। पार्श्व० ।।९।।

ॐ ह्री श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ।

पञ्चकल्याणक ।

शुभआनत स्वर्ग विहाये, वामा माता उर आये ।
वैशाखतनी दुतिकारी, हम पूजें विघ्न निवारी ॥१॥

ॐ ह्री वैशाखकृष्णाद्वितीयाया गर्भमङ्गलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

जनमे त्रिभुवन सुखदाता, एकादशि पौष विख्याता ।
श्यामातन अद्भुत राजे, रविकोटिक तेजसु लाजै ॥२॥

ॐ ह्री पौषकृष्णैकादश्या तपोमगलमडिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्रायार्घ्यं

कलि पौष इकादशि आई, तब बारह भावन भाई ।
अपने कर लोच सु कीना, हम पूजें चरण जजीना ॥३॥

ॐ ह्री पौषकृष्णैकादश्यातपोमगलमडिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्रायार्घ्यं

कलि चैत चतुर्थी आई, प्रभु केवलज्ञान उपाई ।
तब प्रभु उपदेश जु कीना, भविजीवनको सुख दीना ॥४॥

ॐ ह्री चैत्रकृष्णाचतुर्थीदिने केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्रायार्घ्यं

सित सातैं सावन आई, शिवनारि वरी जिनराई ।
सम्मेदाचल हरि माना, हम पूजैं मोक्ष कल्याना ॥५॥

ॐ ह्री श्रावणशुक्लासप्तम्या मोक्षमंगलमडिताय श्रीपार्श्वनाथायार्घ्यं ।

जयमाला ।

पारसनाथ जिनेन्द्रतने वच, पौनभखी जरतें सुन पाये ।
करयो सरधान लह्यो पदआन, भये पद्मावति शेष कहाये ॥
नाम प्रताप टरैं संताप सु, भव्यन को शिवशरम दिखाये ।
हे विश्वसेनके नन्द भले, गुणगावत हैं तुमरे हरखाये ॥१॥

दोहा—केकी कण्ठ समान छवि, वपु उतंग नव हाथ ।
लक्षण उरग निहार पग, वन्दो पारसनाथ ।।२।।

पद्धरि छन्द ।

रची नगरी छहमास अगार, बने चहुँ गोपुर शोभ अपार ।
सुकोटतनी रचना छवि देत, कगूरनपै लहकै बहुकेत ।।३।।
बनारसकी रचना जु अपार, करी बहुभांति धनेश तयार ।
तहाँ विश्वसेन नरेन्द्र उदार, करै सुख वाम सु दे पटनार ।।४।।
तज्यो तुम आनत नाम विमान, भये तिनके घर नंद सु आन ।
तबै सुरइन्द्र-नियोगन आय, गिरिंद करी विधि न्हौन सुजाय ।।
पिताघर सौंपि गये निज धाम, कुवेर करै वसु जाम सुकाम ।
बढै जिन दोज मयंक समान, रमैं बहु बालक निर्जर आन ।६।
भये जब अष्टम वर्ष कुमार, धरे अणुव्रत्त महा सुखकार ।
पिता जब आनकरी अरदास, करो तुम ब्याह वरै मम आस ।७।
करी तब नाहिं, रहे जगचन्द, किये तुम काम कषायजु मंद ।
चढ़े गजराज कुमारन संग, सु देखत गंगतनी सु तरंग ।।८।।
लख्यो इक रंक करै तप घोर, चहूंदिशि अग्नि जलै अतिजोर ।
कही जिननाथ अरे सुन भ्रात, करै बहुजीवनकी मत घात ।।९।।
भयो तब कोप कहै कित जीव, जले तब नाग दिखाय सजीव ।
लख्यो यह कारण भावन भाय, नये दिव ब्रह्मऋषीसुर आय ।।
तबै सुर चार प्रकार नियोग, धरी शिविका निजकंध मनोग ।
कियो बनमांहि निवास जिनंद, धरे व्रत चारित आनदकंद ।।

गहे तहँ अष्टम के उपवास, गये धनदत्त तने जु अवास ।
दियो पयदान महासुखकार, भई पनवृष्टि तहाँ तिहिवार ।१२।
गये तब काननमाँहि दयाल, धरयो तुम योग सबहिं अघटाल ।
तबै वह धूम सुकेत अयान, भयो कमठाचरको सुर आन ।१३।
करै नभगौन लखे तुम धीर, जु पूरव वैर विचार गहीर ।
कियो उपसर्ग भयानक घोर, चली बहुतीक्षण पवन झकोर ।।
रह्यो दसहूं दिशिमे तम छाय, लगी वहु अग्नि लखी नहिं जाय ।
सुरुण्डनके बिन मुण्ड दिखाय, पड़ै जल मूसलधार अथाय ।१५।
तबै पदमावति कथ धनिंद, नये युग आय तहाँ जिनचंद ।
भग्यो तब रंकसु देखत हाल, लह्योत्रयकेवलज्ञान विशाल ।१६।
दियो उपदेश महा हितकार, सुभव्यन बोधि समेद पधार ।
सुवर्णभद्र जहँ कूट प्रसिद्ध, वरी शिवनारि लही वसुरिद्ध ।१७।
जजूँ तुम चरन दुहूँ करजोर, प्रभु लखिये अबही मम ओर ।
कहे 'बखतावर' रत्न बनाय, जिनेश हमे भवपार लगाय ।१८।

घत्ता

जय पारस देव, सुरकृत सेवं, वन्दत चरण सुनागपती ।
करुणा के धारी, परउपकारी, शिवसुखकारी कर्महती ।।१।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अडिल्ल—जो पूजैं मनलाय भव्य पारस प्रभु नितही,
ताके दुख सब जायँ, भीति व्यापै नहिं कितही ।
सुख सम्पति अधिकाय पुत्र मित्रादिक सारे,
अनुक्रमसो शिव लहै 'रतन' इमि कहै पुकारे ।।२०।।

इत्याशीर्वाद (पुष्पाजंलि)

अतिशय क्षेत्र श्रीपद्मपुरा में विराजित

श्रीपद्मप्रभ जिन पूजा

श्रीधर नन्दन पद्मप्रभ, वीतराग जिननाथ।
विघन हरण मंगल करन, नमो जोरि जुग हाथ ॥
जन्म महोत्सव के लिए मिलकर सब सुर राज।
आये कौशाम्बी नगर, पद पूजा के काज ॥
पद्मपुरी में पद्मप्रभ, प्रकटे प्रतिमा रूप।
परम दिगम्बर शान्तिमय, छवि साकार अनूप ॥
हम सब मिल करके यहाँ, प्रभु पूजा के काज।
आह्वानन करते सुखद, कृपा करो महाराज ॥

ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर, संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापन।
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

क्षीरोदधि उज्ज्वल नीर, प्रासुक गन्ध भरा।
कंचन झारी में लेय, दीनी धार धरा ॥
बाड़ा के पद्म जिनेश, मंगल रूप सही।
काटो सब क्लेश महेश, मेरी अर्ज यही ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभ-जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि०।

चन्दन केशर करपूर, मिश्रित गन्ध धरो।
शीतलता के हित देव, भव आताप हरो ॥ बाड़ा के० ॥

ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभ-जिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चन्दनम् नि०।

ले तन्दुल अमल अखण्ड, थाली पूर्ण भरो।
अक्षय पद पावन हेतु, हे प्रभु पाप हरो ॥ बाड़ा के० ॥

ॐ ह्री श्रीपद्मप्रभ-जिनेन्द्राय अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतान् निर्व० ।

ले कमल केतकी बेल, पुष्प धरूं आगे ।

प्रभु सुनिये हमरी टेर, काम कला भागे ।। बाडा के० ।।

ॐ ह्री श्रीपद्मप्रभ-जिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्प निर्व० ।

नैवेद्य तुरत बनवाय, सुन्दर थाल सजा ।

मम क्षुधा रोग नश जाय, गाऊ वाद्य बजा ।। बाडा के० ।।

ॐ ह्री श्रीपद्मप्रभ-जिनेन्द्राय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्व० ।

हो जगमग २ ज्योति, सुन्दर अनियारी ।

ले दीपक श्री जिनचन्द, मोह नशे भारी ।। बाडा के० ।।

ॐ ह्री श्रीपद्मप्रभ-जिनेन्द्राय मोहान्धकार-विनाशनाय दीप निर्व० ।

ले अगर कपूर सुगन्ध, चन्दन गन्ध महा ।

खेवत हो प्रभु ढिग आज, आठो कर्म दहा ।। बाडा के० ।।

ॐ ह्री श्रीपद्मप्रभ-जिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूप निर्व० ।

श्रीफल बादाम सुलेय, केला आदि धरे ।

फल पाऊ शिव पद नाथ, अरपूं मोद भरे ।। बाडा के० ।।

ॐ ह्री श्रीपद्मप्रभ-जिनेन्द्राय मोक्षफल-प्राप्तये फल निर्व० ।

जल चन्दन अक्षत पुष्प, नेवज आदि मिला ।

मै अष्ट द्रव्य से पूज, पाऊ सिद्ध शिला ।। बाडा के० ।।

ॐ ह्री श्रीपद्मप्रभ-जिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व० ।

अर्घ्य चरणो का

चरण कमल श्री पद्म के, बन्दो मन वच काय ।

अर्घ्य चढाऊं भाव से, कर्म नष्ट हो जाय ।। बाडा के० ।।

ॐ ह्री श्रीपद्मप्रभ जिनेन्द्राय-चरणकमलेभ्यो अर्घ्यं निर्व० ।

(दोहा)—चौंतीसों अतिशय सहित, बाड़ा के भगवान ।
जयमाला श्री पद्म की, गाऊं सुखद महान ॥

पद्धरि छन्द

जय पद्मनाथ परमात्म देव । जिनकी करते सुर चरणसेव ॥
जय पद्म २ प्रभु तन रसाल । जय२ करते मुनिमन विशाल॥
कौशाम्बी में तुम जन्म लीन । बाड़ा में बहु अतिशय करीन॥
इक जाट पुत्र ने जमीं खोद । पाया तुमको होकर समोद ।
सुनकर हर्षित हो भविक वृन्द । आकर पूजा की दुख निकंद ॥
करते दुखियों का दुःख दूर । हो नष्ट प्रेत बाधा जरूर ॥
डाकिन शाकिन सब होय चूर्ण । अन्धे हो जाते नेत्र पूर्ण ॥
श्रीपाल सेठ अंजन सुचोर । तारे तुमने उनको विभोर ॥
अरु नकुल सर्प सीता समेत । तारे तुमने निज भक्ति हेत ॥
हे संकट-मोचन भक्त-पाल । हमको भी तारो गुण-विशाल॥
विनती करता हूँ बार बार । होवे मेरा दुख क्षार क्षार ॥
मीना गूजर सब जाट जैन । आकर पूजैं कर तृप्त नैन ॥

चांदनपुर के महावीर, तेरी छवि प्यारी ।
प्रभु भव आताप निवार, तुम पद बलिहारी ।।१।।
ॐ ह्री श्री चादनगाव महावीर स्वामिने नम जलम् ।
मलयागिर और कपूर, केशर ले हरषो ।
प्रभु भव आताप मिटाय, तुम चरणनि परसौं ।चांदन.।चदनं।
तन्दुल उज्ज्वल अति धोय, थारी मे लाऊ ।
तुम सन्मुख पुञ्ज चढ़ाय, अक्षयपद पाऊ ।।चादन.।।अक्षतं।।
बेला केतकी गुलाब, चंपा कमल लऊ ।
दे काम बाण करि नाश, तुमरे चरण दऊं ।।चादन.।।पुष्प।।
फेनी गुंजा पकवान, मोदक ले लीजे ।
करि क्षुधा रोग निरवार, तुम सम्मुख कीजे ।।चादन.।नैवेद्य।
घृत मे कपूर मिलाय, दीपक मे जारो ।
करि मोह तिमिर को दूर, तुम सन्मुख वारो ।।चादन.।।धूपं।।
पिस्ता किसमिस बादाम, श्रीफल लोग सजा ।
श्री वर्द्धमान पद राख, पाऊ मोक्ष पदा ।।चाद ।।फलं।।
जल गन्ध सु अक्षत पुष्प, चरुवर जोर करो ।
ले दीप धूप फल मेलि आगे अर्घ करो ।।चांदन.।।अर्घ्यं।।

चरणो का अर्घ्यं

जहां कामधेनु नित आय, दुग्ध जु बरसावै ।
तुम चरणनि दरशन होत, आकुलता जावै ।।
जहां छतरी बनी विशाल, अतिशय बहु भारी ।
हम पूजत मन वच काय, तजि संशय सारी ।। चांदन० ।।

ॐ ह्रीं टोंक मे स्थापित श्री महावीर चरणेभ्य नम अर्घ्यं० ।

टीले मे विराजमान का अर्घ्य

टीले के अन्दर आप सोहे पद्मासन,
जहां चतुरनिकाई देव, आवें जिन शासन ।
नित पूजन करत तुम्हार कर मे ले झारी,
हम हूं वसुद्रव्य बनाय, पूजें भरि थारी ।।चादन०।

ॐ ह्रीं चादनपुर महावीरजिनेन्द्राय टीले मे विराजमान समय का अर्घ्यं

पंचकल्याणक

कुण्डलपुर नगर मंझार, त्रिशला उर आये ।
सुदि छठि अषाढ सुर आय, रतनजु बरसाये ।।चांदन.।।

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय आषाढशुक्ला षष्ठ्या गर्भमगलप्राप्ताय।र्घ्यं

जनमत अनहत भई घोर, सब जग सुख छाई ।
तेरस शुक्ला की चैत्र, सुरगिरि ले जाई ।।चाँदन.।।

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय चैत्रशुक्लात्रयोदश्यां जन्ममगलप्राप्तायार्घ्यं

कृष्णा मगसिर दश जानि, लौकान्तिक आये ।
करि केशलोच तत्काल, झट वन को धाये ।।चादन ।।

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय मगसिर कृष्णादशम्या तपमगलप्राप्तायार्घ्यं

वैशाख सुदी दश माहि, घाती क्षय करना
पायो तुम केवलज्ञान, इन्द्रन की रचना ।।चांदन.।।

ॐ ह्रींश्रीमहावीरजिनाय कार्तिककृष्णामावस्यायां निर्वाणप्राप्तायार्घ्यं ।

जयमाला

मंगलमय तुम हो सदा, श्री सन्मति सुखदाय ।
चादनपुर महावीर की, कहूँ आरती गाय ।।

जय जय चांदनपुर महावीर तुम भक्त जनों की हरत पीर।
जड़ चेतन जग में लखत आप, दई द्वादशांग वानी अलाप।१।
अब पंचम काल मझार आय, चांदनपुर में अतिशय दिखाय।
टीले के अन्दर बैठ वीर, नित हरा गाय का आप क्षीर।२।
ग्वाला को फिर आगाह कीन, जब दर्शन अपना आप दीन।
मूरत देखी अति ही अनूप, है नग्न दिगम्बर शान्ति रूप।३।
तहां श्रावक जन बहु गये आय, कीन्हे दर्शन मन वचन काय।
है चिह्न शेर का ठीक जान, निश्चय हैं ये श्री वर्द्धमान।४।
सब देशनके श्रावक जु आय, जिन भवन अनूपम दियो बनाय।
फिर शुद्ध दई वेदी कराय, तुरतहि गजरथनु लियो सजाय ५।
ये देख ग्वाल मनमें अधीर, मम गृह को त्यागो नहीं वीर।
तेरे दर्शन बिन तजूं प्राण सुन मेरी हे कृपा निधान ।।६।।
कीने रथ में प्रभु विराजमान, रथ हुआ अचल गिरि के समान
तब तरह २ के किये जोर, बहुतक रथ गाडी दिये तोड़ ।७।
निशिमाहि स्वप्न सचिवहि दिखात रथचले ग्वालका लगतहाथ।
भोरहि झट चरण दियो बनाय, सन्तोष दियो ग्वालहि कराय।
करि जय जय प्रभुकी करी टेर, रथ चल्यो फेर लागी न देर।
बहुनृत्य करत बाजे बजाय, स्थापन कीने तहं भवन जाय।८।
इकदिन मंत्री को लगा दोष, धरि तोप कही नृप खाइ रोष।
तुमको जब ध्याया वहां वीर, गोला से झट बच गया वजीर
मंत्री नृप चांदन गांव आय, दर्शन करि पूजा की बनाय।
करि तीन शिखर मन्दिर रचाय, कंचन कलशा दीने धराय।

यह हुक्म कियो जयपुर नरेश, सालाना मेला हो हमेश ।
अब जुड़न लगे बहु नर औ नार, तिथि चैत सुदी पूनों मँझार ।।
मीना गूजर आवें विचित्र, सब वर्ण जुडे करि मन पवित्र ।
बहु निरत करत गावें सिहाय, कोई कोइ दीपक रह्या चढाय ।।
केई जय २ शब्द करे गम्भीर, जय जय जय हे श्री महावीर ।
जैनी जन पूजा रचत आन, केई छत्र चमर के करत दान ।।
जिसकी जो मन इच्छा करत, मन वांछित फल पावें तुरन्त ।
जो करे वन्दना एक बार, सुख पुत्र सपदा हो अपार ।।
जो तव चरणो मे रखें प्रीत, ताको जग मे को सके जीत ।
है शुद्ध यहां का पवन नीर, जहा अति विचित्र सरिता गंभीर ।।
पूरनमल पूजा रची सार, हो भूल लेउ सज्जन सुधार ।
मेरा है शमशाबाद ग्राम, त्रिकाल करूं प्रभु को प्रणाम ।।

छन्द त्रोटक ।

श्री वर्धमान तुम गुणनिधान, उपमा न बनी तुम चरणन की ।
है चाह यही नित बनी रहे, अभिलाष तुम्हारे दरशन की ।।

दोहा—अष्ट कर्म के दहन को, पूजा रची विशाल ।
पढ़े सुने जो भाव सो, छूटे जग जजाल ।।

ॐ ह्रीं श्रीचाँदनपुर महावीर जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं ।

संवत् जिन चौबीस सौ, है बासठ की साल ।
एकादश कार्तिक बदी, पूजा रची सम्हाल ।।

इत्याशीर्वाद ।।

ॐ ह्रीं देहरे के श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० ।

बेला गुलाब मुचकन्द, सुमन सुगन्ध भरे ।
तुमको पूजत प्रभु चन्द, काम कलंक हरे ।।देहरे०।।

ॐ ह्रीं देहरे के श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय कामवाणविध्वसनाय पुष्प नि० ।

नैवेद्य जु विविध प्रकार, षट् रस बलकारी ।
कर क्षुधा वेदनी क्षार, भूख नशे म्हारी ।।देहरे०।।

ॐ ह्रीं देहरे के श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य नि०

घृत के भर दीप जलाय, धारूँ तुम आगे ।
मम तिमिर मोह नशि जाय, ज्ञान कला जागे ।देहरे०।।

ॐ ह्रीं देहरे के श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि०

शुभ धूप दशांग बनाय, पावक मे खेऊँ ।
मम अष्ट करम जर जाय, मोक्ष धरा लेऊँ ।।देहरे०।।

ॐ ह्रीं देहरे के श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि० ।

पिस्ता बादाम अनार, केला सुखकारी ।
धारे प्रभु चन्द्र अगार, पावे शिव नारी ।देहरे०।।

ॐ ह्रीं देहरे के श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ।

सज जल फल आदिक अर्घ, तुम गुण गावत हूँ ।
पद पाऊँ नाथ अनर्घ, शीश नमावत हूं ।।देहरे०।।

ॐ ह्रीं देहरे के श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यम् नि० ।

* पंच कल्याणक *

वदि चैत सुपंचमि आई, तज वैजयंत जिनराई ।
लक्ष्मण मात उर आये, सुर इन्द्र जजे शिरनाये ।।

ॐ ह्रीं देहरे के श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय चैत वदी पचमी को गर्भ-मगल मण्डिताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कलि पौष एकादशि आई, जन्मे थे त्रिभुवन राई।
सुर चन्द्रपुरी मिल आये, अभिषेक सुमेर कराये ।।

ॐ ह्री देहरे के श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय पौष कृष्णा एकादशी को जन्ममंगलमण्डिताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु भवतन भोग अपारा, निस्सार ज्ञान जग सारा।
बदि पौष एकादशि प्यारी, वनमे जा दीक्षा धारी ।।

ॐ ह्री देहरे के श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय पौषकृष्णा एकादशी को तपोमडलमण्डिताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चहुँ कर्म घातिया नाशा, शुभ केवलज्ञान प्रकाशा।
फाल्गुण शुभ सप्तमि कारी, बना समोसरण मनहारी।।

ॐ ह्री देहरे के श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय फाल्गुण वदी सप्तमी को केवलज्ञान प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्मेद शैल प्रभु नामी, है ललित कूट अभिरामी।
फाल्गुणसुदि सप्तमि चूरे, शिव नारि बरी विधि कूरे।।

ॐ ह्री देहरे के श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय फाल्गुण सुदी सप्तमी को मोक्षमंडलमण्डिताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

।। जयमाला ।।

दोहा—चन्द्र वदन लक्षण विमल, निष्कलक निष्काम।
ऐसे श्री जिन चन्द्र को, वन्दौं आठो याम ।।
शान्ति मूर्ति लख आपकी, कटे अनन्ते पाप।
रोग शोक दारिद्र दुख, नशत आप से आप ।।

।। पद्धरि छन्द ।।

जय चन्द्रनाथ द्युति अमल चंद, जय इन्द्रचंद्र वंदित सुचर्ण।
जय चन्द्रपुरी में जन्मलीन, महासेन नृपति गृह शोभ कीन ।।

जय मात लक्ष्मणा गोद पाय, नाना क्रीड़ा कीनी जिनाय ।
देवन कुमार संग खेल कीन, प्रभु वृद्धि भये मन मोद लीन ।।
दश लक्ष पूर्व वय लही आप, रहे इन्द्र अमरगण सदा साथ ।
ते राज्य भार चिरकाल कीन, जानो नहिं काल व्यतीत हीन ।।
सब वस्त्र आभरण देव लाय, श्रीजिन को संतोषित कराय ।
इकदिन शृंगार करी जु नाथ, दर्पणमे लख निज मुख सु आप।।
एक चिह्न जु मुखपर लख प्रवीन, भव भोगन वाछा छांडदीन ।
वर चन्द्र पुत्र को राज्य देय, सम्बोधित ह्वै प्रभुजी स्वयमेव ।।
'विमला' जु पालकी मे बिठाय, ले गये नाथ को इन्द्र आय ।
सर्वर्तुक वन दीक्षा सु लीन, सह इक हजार राजा प्रवीन ।।
कर पच मुष्ठि से लोंच केश, धारो जु दिगम्बर नग्न वेश ।
था नलिन नगर पुर का सुराय, तसु नाम सोमदत्तजी कहाय ।।
कीनो जु पारनो तासु गेह, जहाँ रत्नो का वरसा जु मेह ।
फिर आत्मध्यान मे भये लीन, लहि केवल कीने कर्म छीन ।।
कीनो विहार भारत जु वर्ष, यह पुण्य धरा प्रकटी प्रत्यक्ष ।
धर्मोपदेश से भव्य तार, आये सम्मेद शिखर पहार ।।
तहाँ योग नियोग किये जु सार, पहुँचे प्रभु मोक्षमहल मझार
यह पचम दुखमा काल जान, हुई धर्म कर्म सबको जु हान ।।
इस नगर तिजारा मध्य खेत, देहरा पवित्र सुन्दर सुक्षेत्र ।
श्रावण शुक्ला दशमी अनूप, वर वार बृहस्पति शुभ स्वरूप ।।
सम्वत् तेरह दो सहस वर्ष, मध्याह्न समय अभिजित मुहूर्त ।
जिन प्रकट भये अतिशय सरूप,दिखलाया अपना दिव्य रूप ।।

प्रभु के दर्शन लख कटत पाप, सुखशांति मिलत तुम नामजाप।
सब भूत प्रेत भयभीत होय, डरकर भागत हैं नमत तोय ।।
अरु दुष्ट अनेक जाते पलाय, जो भाव सहित प्रभुको जु ध्याय।
उनके संकट रहते न कोय, बिन भाव क्रिया नहिं सफल होय।
अब अरज सुनो मेरी कृपाल, मैं भव दुख दुखिया हे दयाल।
मत देर करो सुनिये पुकार, दुठ अष्ट करम मेरे निवार ।।

घत्ता—श्रीचन्द्र जिनेशं दुख हर लेतं, सब सुख देतं मनहारी।
गाऊँ गुणमाला जगउजियाला, कीर्तिविशाला सुखकारी।

ॐ ह्रीं देहरे के श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा—देहरे के श्रीचन्द्र को, मन वच तन जो ध्याय।
ऋद्धि-वृद्धि होवे 'सुमति', संकट जाय पलाय ।।

।। इत्याशीर्वाद ।।

सिद्ध क्षेत्र श्री सम्मेद शिखर पूजा

दोहा—सिद्ध क्षेत्र तीरथ परम, है उत्कृष्ट सु थान।
शिखर समेद सदा नमौं, होय पाप की हान ।।१।।
अगिनित मुनि जहं ते गये, लोक शिखर के तीर।
तिनके पद पङ्कज नमौं, नाशै भवकी पीर ।।२।।

अडिल्ल छन्द—है वह उज्ज्वल क्षेत्र सु अति निर्मल सही।
परम पुनीत सुठौर महा गुनकी मही ।।
सकल सिद्ध दातार महा रमनीक है।
वंदों निज सुख हेत अचल पद देत है ।।३।।

सोरठा—शिखर सम्मेद महान, जगमे तीर्थ प्रधान है।
महिमा अद्भुत जान, अल्पमती मैं किम कहों ।।४।

पद्धरी छन्द

सरस उन्नत क्षेत्र प्रधान है, अति सु उज्ज्वल तीर्थ–महान है।
करहि भक्तिसु जे गुनगायकै, वरहि शिव सुरनर सुख पायकै ॥
(अडिल्ल छन्द)–सुर हरि नरपति आदि सु जिन वंदन करे।
भवसागर तैं तिरे, नही भवदधि परै ॥
सुफल होय जो जन्म सो जे दर्शन करै।
जन्म जन्म के पाप सकल छिन मे टरै ॥६॥

पद्धरी छन्द

श्री तीर्थङ्कर जिनवरसु बीस, अरु मुनि असंख्य सब गुनन ईश।
पहुंचे जहतै केवल सुधाम, तिन सबको अब मेरा प्रणाम ॥७॥
(गीता छन्द)– सम्मेदगढ है तीर्थ भारी सबन को उज्ज्वल करे।
चिरकाल के जे कर्म लागे दरश तै छिन मे टरे ॥
है परम पावन पुण्य दायक अतुल महिमा जानिये।
है अनूप सरूप गिरिवर तासु पूजा ठानिये ॥८॥
दोहा–श्री सम्मेद शिखर महा, पूजो मन वच काय।
हरत चतुर-गति दुःख को, मनवांछित फल दाय ॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र ! अत्रावतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरण।

❀ अथाष्टक ❀

क्षीरोदधि सम नीर सु उज्ज्वल लीजिए।
कनक कलश मे भरके धारा दीजिए ॥
पूजों शिखर सम्मेद सु मन वच काय जू।
नरकादिक दुख टरै अचल पद पाय जू ॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रेभ्यो जन्मजरा मृत्यु विनाशनाय जल।

पयसों घसि मलियागिरि चंदन ल्याइये।

केसर आदि कपूर सुगंध मिलाइये ॥
पूजौं शिखर सम्मेद सु मन वच काय जू ।
नरकादिक दुख टरैं अचल पद पाय जू ॥
ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदन।
धवल सु उज्ज्वल तन्दुल खासे धोयके ।
हेम वरनके थार भरौं शुचि होयके ॥पूजौं ॥
ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अक्षयपद प्राप्ताय अक्षत ॥
फूल सुगन्ध सुल्याय हरष सो आन चढायो ।
रोग शोक मिट जाय मदन सब दूर पलायो ।पूजौं.।
ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो कामबाणविध्वंशनाय पुष्प ।
षट्रस के नैवेद्य कनक थारी भर ल्यायो ।
क्षुधा निवारण हेतु सु पूजौं मन हरषायो ।पूजौं०।
ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यम् ।
लेकर मणिमय दीप सुज्योति उद्योत हो ।
पूजत होत स्वज्ञान मोह तम नाश हो ॥पूजो०॥
ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीप ।
दश विधि धूप अनूप अग्नि मे खेवहू ।
अष्ट कर्म को नाश होत सुख लेवहूँ ॥पूजौं०॥
ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूप० ॥
केला लोंग सुपारी श्रीफल ल्याइये ।
फल चढाय मनवाञ्छित फल सु पाइये ॥पूजौं०॥
ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो मोक्षफलप्राप्ताय फल० ॥
जल गन्धाक्षत फूल सु नेवज लीजिये ।
दीप धूप फल लेकर अर्घ चढाइये ॥ पूजौं० ॥
ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यंम ॥

अथ जयमाला। लोलतरङ्ग छन्द—
मनमोहन तीरथ शुभ जानो, पावन परम सुक्षेत्र प्रमानो।
उन्नत शिखर अनूपम सोहै, देखत ताहि सुरासुर मोहै॥
दोहा—तीरथ परम सुहावनो शिखर समेद विशाल।
कहत अल्पबुधि उक्तिसो, सुखदायक जयमाल॥
चौपाई १५ मात्रा—
सिद्धक्षेत्र तीरथ सुखदाई। वन्दत पाप दूर हो जाई।
शिखरशीप पर कूट मनोग्य। कहे बीस अति शोभा योग्य॥१॥
प्रथम सिद्धवरकूट सुथान। अजितनाथ को मुक्ति सु थान।
कूटतनो दरशन फल एह। कोटि बतीस उपास गिनेह॥२॥
दूजो धवलकूट है नाम। सम्भवप्रभु जहंतें शिवधाम।
दरसकोटि प्रोपधफल जान। लाख बियालिस कह्यो बखान॥३॥
आनन्दकूट महासुखदाय। जहंतें अभिनन्दन शिव जाय।
कूटतनो दरशन इमि जान। लाख उपास तणो फल मान॥४॥
अविचल कूट महासुख वेश। मुक्ति गये जह सुमति जिनेश।
कूट भाव धरि पूजे कोय। एक कोटि प्रोपध फल होय॥५॥
मोहन कूट मनोहर जान। पद्मप्रभ जहंतें निर्वान।
कूट पूज फल लेहु सुजान। कोटि उपास कह्यो भगवान॥६॥
मनमोहन है कूट प्रभास। मुक्ति गए जहं नाथ सुपास।
पूजे कूट महाफल होय। कोटि बतीस उपास जु सोय॥७॥
चन्द्रप्रभ का मुक्ति सुधाम। परम विशाल ललितघट नाम।
कूटतनो दरशन फल जान। प्रोपध सोलह लाख बखान॥८॥
सुप्रभ कूट महासुखदाय। जहंतें पुष्पदन्त शिवपाय।
पूजो कूट महाफल लेव। कोटि उपास कह्यो जिनदेव॥९॥
श्रीविद्युतवर कूट महान। मोक्ष गए शीतल धरि ध्यान।
पूजे विविध जोग कर कोय। कोडि उपास तनो फल होय॥१०॥
सकुल कूट महाशुभ जान। श्रीश्रेयास गये शिवथान।
कूटतनो दर्शन फल सुन्यो। कोडि उपास जिनेश्वर भन्यो॥११॥

कूट सुवीर परम सुखदाय । विमल जिनेश जहाँ शिवपाय ।
मन वच दरश करै जो कोय । कोटि उपासतनो फल होय ।।१२।।
कूट स्वयंभू सुभग सु नाम । गये अनन्त अमरपुरधाम ।
यही कूट को दरशन करै । कोटि उपासतनो फल धरै ।।१३।।
है सुदत्तवर कूट महान । जहँते धर्मनाथ निरवान ।
परम विशाल कूट है सोय । कोटि उपास दरशफल होय ।।१४।।
कूट प्रभास परम शुभ कह्यो । शांतिनाथ जहँते शिव लह्यो ।
कूटतनो दरशन है सोय । एक कोडि प्रोषध फल होय ।।१५।।
परमज्ञानधर है शुभकूट । शिवपुर कुंथु गये अघछूट ।
जाको पूजे जे नर जाडि । फल उपास कह्यो इक कोडि । १६।।
नाटककूट महाशुभ जान । जहँतें शिवपुर अर भगवान ।
दरशन करै कूट को जोय । छयानवकोटि वास फल होय ।।१७।।
सबलकूट मल्लिजिनराज । जहँते मोक्ष भये शुभ काज ।
कूट दरशफल कह्यो जिनेश । एक कोडि प्रोषध शुभ वेश ।।१८।।
निर्जर कूट कह्यो सुखदाय । मुनिसुव्रत जहँते शिव जाय ।
कूटतनो अब दरशन सोय । एक कोडि प्रोषध फल होय ।।१९।।
कूट मित्रधरतै नमि मुक्ति । पूजत पाय सरासर मुक्ति ।
कूटतनो फल है सुखकन्द । कोटि उपास कह्यो जिनचन्द ।।२०।।
श्रीप्रभु पार्श्वनाथ जिनराज । चहुँगतितैं छूटे महाराज ।
सुवरणभद्र कूट को नाम । तासो मोक्ष गये सुखधाम ।।२१।।
तीनलोक हितकरण अनूप । वंदित ताहि सुरासुर भूप ।
चिंतामणि सुरवृक्ष समान । ऋद्धि-सिद्धि मंगल सुखदान ।।२२।।
नवनिधि चित्रावेल समान । जाते सुक्ख अनूपम जान ।
पारस और कामसुर धेनु । नानाविध आनन्द को देन ।।२३।।
व्याधिविकार जाहि सब भाज । मन-चीते पूरे ह्वै काज ।
भवदधि-रोग विनाशक सोय । औषधि जगमे और न कोय ।।२४।।
निरमल परम थान उत्कृष्ट । वन्दत पाप भजै अरु दुष्ट ।
जो नर ध्यावत पुण्य कमाय । जशगावत सब कर्म नशाय ।।२५।।

कटै अनादिकाल के पाप। भगे सकल छिनमे सन्ताप।
नरपति इन्द्र फणीन्द्र जु सबै। और खगेन्द्र मृगेन्द्र जु नवै ॥२६॥
नित सुरसरी करै उच्चार। नाचत गावत विविध प्रकार।
वहुविधि भक्ति करै मनलाय। विविधभाँति वादित्र वजाय ॥२७॥
द्रमद्रमद्रमता बजै मृदग। घनघन घट वजै मुहचग।
झुनझुन झुनझुन झुनिया झुनै। सरसरसर सारगी धुनै ॥२८॥
मुरली बीन बजै धुनि मिष्ट। पटहा तूर सुरान्वित पुष्ट।
सब सुरगण थुति गावत सार। सुरगण नाचत वहुत प्रकार ॥२९॥
झन नन नन ना नूपुर वान। तन नन नन ना तोरत तान।
ताथेइ थेइ थेइ कर चाल। सुर नाचत गावत निज भाल ॥३०॥
नाचत गावत नाना रग। लेत जहाँ सुर आनन्द संग।
नितप्रति सुर जहं वन्दन जाय। नानाविधि के मगल गाय ॥३१॥
अनहद धुनि की मोद जु होय। प्रापति वृषकी अति ही होय।
तातै हमको सुख दे सोय। गिरवर बन्दौं करधरि दोय ॥३२॥
मारुत मन्द सुगन्ध चलेय। गन्धोदक जहँ नित वर्षेय।
जियको जाति विरोध न होय। गिरवर वन्दो करधरि दोय ॥३३॥
ज्ञान चरन तप साधन सोय। निज अनुभवको ध्यान जु होय।
शिवमदिर को द्वारो सोय। गिरवर वन्दो करधरि दोय ॥३४॥
जो भवि वन्दे एकहि बार। नरक निगोद पशू गति टार।
सुर शिवपदको पावै सोय। गिरवर वन्दो करधरि दोय ॥३५॥
जाकी महिमा अगम अपार। गणधर कहत न पावै पार।
तुच्छबुद्धि मैं मतिकर हीन। कही भक्तिवश केवल लीन ॥३६॥

घत्ता—श्रीसिधखेत अति सुखदेत, शीघ्रहि भवदधि पारकरं।
अरिकर्म विनाशन शिवसुखभासन जय गिरवर जगतारवर ।३७

ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा—) शिखर सु पूजें जो सदा, मनवचतन हरषाय।
दास 'जवाहर' यो कहे, सो शिवपुर को जाय ॥

॥ पुष्पाजलि क्षिपेत् ॥

श्री कैलाशगिरि पूजा

श्री कैलाश पहाड जगत परधान कहा है।
आदिनाथ भगवान जहां शिववास लहा है॥
नाग कुमार महावाल व्याल आदि मुनिनाई।
गये तिहि गिरिसौं मोक्ष याप पूजौं शिरनाई॥
श्री कैलाश पहाड़ सो, आदिनाथ जिनदेव।
मुनी आदि जे शिव गये, थापि करों पद सेव॥

ॐ ह्रीं श्री कैलाश पर्वत से श्री आदिनाथ स्वामी तथा नागकुमारादि मुनि मोक्षपद प्राप्त अत्र अवतर २ संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ । अत्र मम सन्निहितो भव २ वषट् ।

नदगङ्ग सु निरमल नीरलाय, करि प्रासुक मरकुम्भन भराय।
जिन आदि मोक्ष कैलाशथान, मुन्यादि पाद जजु जोरि पानि।

ॐ ह्रीं श्री कैलाश पर्वत से आदिनाथ भगवान् और नागकुमारादि मोक्षफल प्राप्तये जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयागिरि चन्दन को घसाय, कुंकुमयुत मरकुंभन भराय।
जिन आदि मोक्ष कैलाश नाम, मुन्यादि पाद० ॥ चन्दन।

जिनवर कमोद वर शालि लाय, खण्डहीन घोय थारा भराय।
जिन आदि मोक्ष कैलाश थान, मुन्यादि० ॥ अक्षतं।

सुवेल चमेली जुही लेय, पाटिल वारिज थारी भरेय।
जिन आदि मोक्ष कैलाश थान, मुन्यादि० ॥ ।पुष्पं

मोदक घेवर खाजे बनाय, गोंझा सुहाल भरि थाल लाय।
जिन आदि मोक्ष कैलाश थान, मुन्यादि० ॥ ॥नैवेद्यं॥

प्रभु कर्म अघाती घात कीन पञ्चम गति स्वामी प्राप्त कीन ।
हरि आन चिता रचि दाह कीन, धरि क्षार शीश सुर गमनकीन ॥
त्यां सो औरहु मुनि सुजान, हनि कर्म लह्यो है मोक्षथान ।
गिरि को वेढे खानिक सुजान, अरु मानसरोवर झील मान ॥
तासों यात्रा है कठिन जान, नहिं सुलभ किसी दिशसो बखान ।
हैं आठ सहस्र पेंडी प्रमान तासो अष्टापद नाम जान ॥
सुत कन्हईलाल भगवानदास कर जोरि नमै थल शिव निशान ।
मागत जिनवर मुनिवर दयाल, भव भ्रमण काटद्यो शिव विशाल ॥

आदीश्वर ध्यावे, भाव लगावे, पूज रचावे चावन सो ।
सो होय निरोगी, बहुसुख भोगी, पुण्य उपावे भावन सो ॥

ॐ ह्रीं श्री कैलाश पर्वत से श्री आदिनाथ भगवान तथा नाग कुमारादि मुनि मोक्षपद प्राप्तेभ्य अर्घ्यं निर्वपा० ॥

जे पूजें कैलाश आदि जिन राय को,
पढ़ै पाठ बहुभाति सुभाव लगाय को ।
ते धन धान्यहि पुत्र पौत्र सम्पति लहै
नर सुर सुखको भोगि अन्त शिवपुर लहे । इत्याशीर्वाद ।

चम्पापुर सिद्धक्षेत्र पूजा

दोहा—उत्सव किये पनवार जहँ, सुरगण युत हरि आय ।
जजो सुथल वसुपूज्य सुत, चम्पापुर हर्षाय ॥१॥

ॐ ह्री वासुपूज्यनिर्वाणक्षेत्र श्रीचम्पापुरसिद्धक्षेत्र अत्रावतर २ संवौषट् इत्याह्वाननं, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् । परिपुष्पाजंलि क्षिपेत् ।

अष्टक । चाल—नन्दीश्वर पूजन की ।

सम अमिय विगत-त्रस वारि, लै हिम कुम्भ भरा ।
लख सुखद त्रिगद हर तार, दै त्रय धार धरा ।

श्रीवासुपूज्य जिनराय, निर्वृति थान प्रिया ।
चम्पापुर थल सुखदाय, पूजो हर्ष हिया ।।
ॐ ह्रीं श्रीचम्पापुरसिद्धक्षेत्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ।
कश्मीरी केशर सार, अति हि पवित्र खरी ।
शीतल चंदन सग सार, लै भवताप हरी ।।श्रीवासु.।सुगंधं।।
मणिद्युति सम खंड-विहीन, तन्दुल लै नीके ।
सौरभयुत नव वर बीन, शालि महानीके ।।श्रीवासु.।अक्षतं।
अलि लुभन सुमन दृग घ्राण, सुमन जु सुर द्रुमके ।
लै वाहिम अर्जुनवान, सुमन दमन भुमके ।।श्रीवासु.।पुष्प।।
रस पुरित तुरित पकवान, पक्क यथोक्त घृती ।
क्षुध गदमद प्रदमन जान, लैविध युक्तकृती ।।श्रीवासु.नैवेद्यं।।
तम-अज्ञ-प्रनाशक सूर, शिवमग परकाशी ।
लै रत्नदीप द्युतिपूर, अनुपम सुखराशी ।। श्रीवासु ।दीपं।।
वर परिमल द्रव्य अनूप, शोध पवित्र करी ।
तसु चूरण कर कर धूप, लै वसु कर्म हरी ।।श्रीवासु.।धूपं।।
फल पक्क मधुर रसवान, प्रासुक बहुविधके ।
लखि सुखद रसन दृग घ्रान, लै प्रद पद-सिधके ।।श्रीवासु फलं।
जल फल वसु द्रव्य मिलाय, लै भर हिमथारी ।
वसु अग घरापर ल्याय, प्रमुदित चितधारी ।।श्रीवासु.अर्घ्यं

अथ जयमाला ।

दोहा—भये द्वादशम तीर्थंपति, चम्पापुर शुभथान ।
तिन गुणकी जयमाल कछु, कहौं श्रवण सुखदान ।।

जयजय श्रीचम्पापुर सुधाम, जहँ राजत नृप वसुपूज नाम ।
जग पौन पल्यसे धर्महीन,भवभ्रमन दुःखमय लखि प्रवीन ।।१।।
उर करुणा धर सो तम विडार,उपजे किरणावलि घर अपार ।
श्रीवासुपूज्य तिन तने बाल, द्वादशम तीर्थंकर्ता विशाल ।।२।।
भवभोग देहसें विरत होय, वय बाल माँहि ही नाथ सोय ।
सिद्धन नमि महाव्रत धारलीन,तप द्वादशविध उग्रोग्रकीन ।।३।।
तहँ मोह सप्तत्रय आयु येह, दशप्रकृति पूर्व ही क्षय करेह ।
श्रेणीजु क्षपक आरूढ होय, गुण नवम लाग नवमाँहि सोय ।४।
सोलहवसु इक इकषट इकेय, इक इक इक इम इन क्रम सहेय ।
पुनि दशमथान इक लोभ टार, द्वादशमथान सोलह विडार ।५।
ह्वै अनत चतुष्टय युक्त स्वाम, पायो सब सुखद संयोग ठाम ।
तहँ काल त्रिगोचर सर्व ज्ञेय, युगपतहि समय माहीं लखेय ।६।
कछु काल दुविध वृष अमियवृष्टि कर पोषें भविभुवि धान्यसृष्टि ।
इक मास आयु अवशेष जान, जिन योगनकी सुप्रवर्त्तिहान ।७।
ताही थल शुक्ल ध्यान ध्याय, चतुदशम थान निवसे जिनाय ।
तहँ दुचरम समय मँझार ईश,जु प्रकृति बहत्तरतिनहि पीस ।८।
तेरह को चरम समय मँझार, करके श्रीजगतेश्वर प्रहार ।
अष्टमअवनी इकसमयमद्ध, निवसे पाकर निज अचल रिद्ध ।९।
युत गुणवसु प्रमुख अमित गुणेश, ह्वै रहे सदाही इमहि वेष ।
तबहीसे सो थानक पवित्र, त्रैलोक्य पूज्य गायो विचित्र ।१०।
मै तसु रज निज मस्तक लगाय, बन्दौं पुनि २ भुवि शीशनाय ।
ताही पद वाछा उरमँझार, धर अन्य चाह बुद्धी विडार ।११।

ॐ ह्री श्रीवासुपूज्यनिर्वाणस्थान चम्पापुरक्षेत्राय पूर्णार्घ्यं ।

दोहा—श्री चम्पापुर जो पुरुष, पूजै मन वच काय ।
वर्णि 'दौल' सो पावही, सुख सम्पति अधिकाय ।।

इत्याशीर्वाद ।

श्री गिरनार पूजा

(स्व० कवि जवाहरलाल कृत)

छप्पय—श्री गिरनार शिखर परवत, दक्षिण दिश सोहे ।
नेमिनाथ जिन मुक्तिधाम, सब जन मन मोहे ।।
कोड बहत्तर सात शतक, मुनि शिवपद पायो ।
ता थल पूजन काज, भविक चित अति हर्षायो ।।
तिस तीरथराज सु क्षेत्र को, आह्वानन विधि ठानकर ।
पूजू त्रियोग मनवचनतन, श्रावकजन गुन गानकर ।।२।।

ॐ ह्री श्री नेमिनाथ शबुकुमार प्रद्युम्नकुमार अनिरुद्धकुमार और बहत्तर करोड सातसे मुनि मोक्षपद प्राप्तिस्थान श्रीगिरनार सिद्धक्षेत्र अत्र अवतर २ सवौषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापन । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरण ।

प्रभु तुम राजा जगत के, कर्म देहि दुख मोय ।
करूं यथारथ वीनती, हमपै करुणा होय ।।

चाल लावनी की ।

तीरथ गढ गिरनार को, नित पूजो हो भाई ।
हेम भृंग भर तीर्थादिक, शुभ प्रासुक पावन लाई ।।
जन्म जरा मृतु नाशन कारन, धार देहु ढरकाई ।।नित०

जम्बूद्वीप भरत आरज मे, सोरठ देश सोहाई।
सेसावन के निकट अचल तहँ, नेमिनाथ शिवपाई ॥
नित पूजो हो भाई तीरथगढ गिरनार को ॥ नित०
ॐ ह्रीं श्री गिरनारसिद्धक्षेत्राय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जन
सुन्दर चन्दन कदली नन्दन, केशर संग घिसाई।
भवदुखताप मिटावनलखके, अरचो जिनपद आई ।नि ज ।च०।
शशि सम श्वेतवर्ण मुक्ताशित अछत अखड सुहाई।
चरन शरन प्रभु अक्षै निधि लख, पुंजदिये सो पाई ।नि ज ।अ०
कुसुम वर्णपन विविध गन्धजुत, चुन चुन भेट धराई।
पूजन किय ह्वै शीलवर्द्धना, मनोवाणजय लाई ।नि ज.।पुष्पं
खाजा ताजा मोदक गुंजा, फेनी सरस बनाई।
षट्रसव्यंजन मिष्ट सुधामय, हेमथारभर लाई ।नि.ज.।नैवेद्यं
दीप ललित कर घृत पूरित भर, उज्ज्वल जोत जगाई।
करो आरती जिनपदकेरी, मिथ्यातिमिर पलाई ।नि ज ।दीप
अगर तगर कर्पूर चूर बहु, द्रव्य सुगन्ध मिलाई।
खेय धनञ्जय धूप-धूम मिस, वसुविधि देय चढाई ।नि ज ।धूप
एला दाडिम श्रीफल पिस्ता, पूंगीफल सुखदाई।
कनकपात्रधर भविजन पूजें, मनवाछिनफल पाई ।नि०ज०।फल
अष्टद्रव्य का अर्घ संजोवो, घण्टा नाद बजाई।
गीतनृत्यकर जजो 'जवाहर' सानन्द हर्षबधाई ।नि०ज०।अर्घ्यं

जयमाला (जोगीरासा)

उर्जयन्त गिरराज मनोहर देखत ही मन मोहे।
राजुलपति शिवथान विराजे, उत्तम तीरथ जो है ॥

पुत्र पौत्र हरि कृष्ण प्रचुर मुनि, पंचमगति तह पाई ।
तास तनी महिमा को वरणै, श्रवण सुनत हरषाई ॥१॥
(पद्धडि) जै जै जै नेमि जिनन्दचन्द्र, सुरनर विद्याधर नमत इन्द्र ।
जै सोरठ देश अनेक थान, जूनागढ पै शोभित महान ॥ २ ॥
तहा उग्रसेन नृप राजद्वार, तोरण मण्डप शुभ बने सार ।
जै समुदविजय सुत ब्याह काज, आये हर वलि जुत आन साज ।
तह जीव बन्धे लख दया धार, रथ फेर जन्तु बन्धन निवार ।
द्वादस भावन चिन्तवन कीन, भूषण वस्त्रादिक त्याग दीन ॥ ४ ॥
तज परिग्रह परिणय सर्व सग, ह्वै अनागार विजयी अनग ।
धर पञ्च महाव्रत तप मुनीश निज ध्यान धरो हो केवलीश ॥५॥
इसहो सुथान निर्वाण थाय, सो तीरथ पावन जगत माय ।
अरु शंबु आदि प्रद्युम्न कुमार, अनिरुद्ध लह्यो पद मुक्ति धार ॥६॥
पुनि राजुलहू परिवार छाड, मन वचन कायकर जोग माड ।
तप तप्यो जाय तिय धीर वीर, सन्यास धार तजके शरीर ॥७॥
तिय लिंग छेद सुर भयो जाय, आगामी भवमे मुक्ति पाय ।
तह अमरगण उर धर अनन्द, नित प्रति पूजत हैं श्रीजिनन्द ॥८॥
अरु निरतत मघवा युक्तनार, देवनकी देवी भक्ति धार ।
ता थेई २ थेई २ करत जाय, फिर फिरि फिर फिरकी लहाय ॥९॥
मुहचङ्ग बजावत तारवीन, तनन तनन तन अति प्रवीन ।
करताल ताल मिरदग ओर, झालर घण्टादिक अमित शोर ॥१०॥
आवत श्रावकजन सर्व ठाम, बहु देश देश पुरनगर ग्राम ।
हिलमिल सब संघ समाज जोर, हय गय वाहन चढ रथ बहोर ॥११॥
यात्रा उत्सव निशिदिन कराय, नर नारिउ पावत पुण्य आय ।
को वरनत तिस महिमा अनूप, निश्चय सुर शिवके होय भूप ॥१२॥
घत्ता—श्री नेमिजिनन्दा आनन्दकन्दा, पूजत सुरनर हितकारी ।
तिस नमत 'जवाहर' जुगकर शिर धर हर्षधार गढ गिरनारी ॥
ॐ ह्री श्री गिरनार सिद्धक्षत्र से नेमिनाथ शबु प्रद्युम्न अनिरुद्ध और बहत्तर कोटि सातसौ मुनि मोक्षपद प्राप्तये महार्घ्यं निर्वपा०

जे नर बन्दत भाव धर, सिद्धक्षेत्र गिरनार।
पुत्र पौत्र सम्पति लहे, पूरन पुण्य भण्डार ।।
सम्वत् विक्रमराय प्रमान, वसु जुग निधि इक अंक सु जान।
पौष मास पख सोम वखान, पञ्चम तिथि रविवार सु जान ।।१५।।
रच्यो पाठ पूजन सुखदाय, पढत सुनत चित अति हुलसाय।
यात्रा करत धन्य ते जीव, पावें फल ह्वै शिवतिय पीव ।।१६।।

इत्याशीर्वाद.।

पावापुर सिद्धक्षेत्र पूजा

दोहा—जिहि पावापुर छिति अघाति, हत सन्मति जगदीश।
भये सिद्ध शुभथानसो, जजों नाय निज शीश ।।

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरनिर्वाणभूमि पावापुरसिद्धक्षेत्र अत्र अवतर अवतर, सवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापन। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरण।

अथ अष्टक ।। गीतिका छन्द ।।

शुचि सलिल शीतो कलिल रीतो श्रमन चीतो ले जिसो।
भर कनक झारी त्रिगद हारी दे त्रिधारी जित तृषो ।।
वर पद्मवन भर पद्मसरवर बहिर पावा ग्राम ही।
शिवधाम सन्मति स्वामि पायो जजो सो सुखदा मही ।।

ॐ ह्रीं श्रीवीरनिर्वाणभूमि पावापुरक्षेत्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल

भव भ्रमत भ्रमत अशर्म्म तपकी तपन कर तपताइयो।
तसु वलयकदन मलयचदन उदयसग घसिल्याइयो ।वर.चदन।।
तदुल नवीने अखड लीने लै महीने ऊजरे।
मणिकुन्दइदुतुषारद्युतिजित कण रकावीमे धरे ।वर.।अक्षत।।

मकरन्द लोभन सुमन शोभन सुरभ लोभन लेयगो ।
मद समर हर वर अमरतरके प्रानतन हृदमेयगो । वर. पुष्पं॥
नैवेद्य नूतन सुरा मिठाइयन मिष्ट भावन सुत किया ।
रसमिष्ट पूरित इष्ट सुरभित लेयकर प्रभु हित किया ॥वर.॥नैवेद्यं॥
तम-खंड-नाशक स्वपर भासक दीप धरभासक सही ।
हिमथालमें धर मणिमाणन करजोतधर मणिदीपही ॥वर.॥दीपं॥
खामोहकारी वस्तु मारी विध दुखारी टारनी ।
दश धूपकर धर धूपन दशदिश सुरभ विस्तारनी ॥वर.॥धूप॥
फल आम्र पक्व सुवाद्य मोहन सुघर जन मन मोहने ।
वर सुरभ पूरित सरस स्वादित मधुरत लेयकर प्रीतमोहने॥वर.फलं॥
जल गंध आदि मिलाय वसु विध थार स्वर्ण भरायके ।
मन प्रमुदभाव उपाय कर लै याव पद चढ़ायके ॥वर.॥अर्घ्यं॥

अथ जयमाला ।

दोहा—चरम तीर्थ करतार श्री, वर्द्धमान जगपाल ।
कल्प मल वल दिघ विफल हूँ, गाऊँ तिन जयमाल ॥१॥

जय जय सुरवीर जिन मुक्ति थान । पावापुर वन सर सोभमान ॥
षट् दिन जननी गर्भ आयो पाय । तज पुष्पोत्तर सु विमान ठान ॥१॥
कुण्डलपुर सिद्धारथ नृपेश । ता त्रिशला रानी सुवेश ॥
तिन गर्भ त्रयोदश सुग निधान । आगे तम पद निवार भान ॥२॥
पूर्वाह्न धवल चतुर्दशि दिनेश । किये न्हवन कनकगिरि-शिर सुरेश ॥
पच वर्ष तीस धर कुमरकाल । सुख दिव्य भोग भुगते विशाल ॥३॥
मारगशिर असित दशमी पवित्र । चढ़ चन्द्रप्रभा शिविका विचित्र ॥
षष्टि पूरब सिद्धन शीश नाय । धारो संयम वर शर्मदाय ॥४॥

गत वर्ष द्वादश कर तप विधान । दिन शित वैशाख दशै महान ।
रिजुकूला सरिता तट स्व बोध । उपजायो जिनवर चरम बोध ॥५॥
तवही हरि आज्ञा शिर चढ़ाय । रचि समवसरण वर धनदराय ।
चउ संघ प्रभृति गौतम गनेश । युत तीस वरष विहरे जिनेश ॥६॥
भवि जीव देशना विविध देत । आये वर पावानगर खेत ।
कार्तिक अलि अन्तिम दिवस ईश । कर योग निरोध अघाति पीस ॥७॥
ह्वै अकल अमल इक समय माहि । पचम गति निवसे श्रीजिनाह ।
तब सुरपति जिन रवि अन्त जान । आये जु सुरत स्व स्व विमान ॥८॥
कर वपु परचा थुति विविध भात । लै विविध द्रव्य परमल विख्यात ।
तवही अग्नीन्द्र नवाय शीश । सस्कार देह की त्रिजगदीश ॥९॥
कर भस्म वन्दना निज महीय । निवसे प्रभु गुन चितवन स्वहीय ।
पुनि नर मुनि गनपति आय आय । वदो सो रज सिर नाय नाय ॥१०॥
तवहीसे सौ दिन पुज्यमान । पूजत जिनगृह जन हर्ष मान ।
मैं पुन पुन तिस भुवि शीश धार । वदौं तिन गुणधर उर मँझार ॥११॥
जिनही का अब भी तीर्थ एह । वर्तत दायक अति शर्म्म गेह ।
अरु दुखनकाल अवसान ताहि । वर्तेगो भव थित हर सदाहि ॥१२॥
ॐ ह्रीं श्रीवर्धमान जिनमुक्तिस्थान श्रीपावापुरक्षेत्राय पूर्णार्घ्यं ।

कुसुमलता छन्द ।

श्री सन्मति जिन अंघ्रि-पद्म युग जजै भव्य जो मन वच काय ।
ताके जन्म जन्म सचित अघ जावहि इक छिन माहि पलाय ॥
धनधान्यादि शर्म्म इन्द्रीपद लहै सो शर्म्म अतीन्द्री थाय ।
अजर अमर अविनाशी शिवथल वर्णी 'दौल' रहे शिर नाय ॥

इत्याशीर्वाद ।

श्री बाहुबली स्वामी पूजा

दोहा—कर्म अरिगण जीति के, दर्शायो शिवपंथ ।
प्रथम सिद्धपथ जिन लियो, भोगभूमिके अंत ॥

समर दृष्टि जल जीत लहि मल्लयुद्ध जय पाय।
वीर अग्रणी वाहुवलि, वन्दो मन वच काय ।।

ॐ ह्रीं श्रीगोमटेश्वरवाहुवली स्वामिन् अत्र अवतर अवतर सवौषट्, आह्वानन। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ, स्थापन। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्, सन्निधिकरणम्।

अथाष्टक—चाल जोगीरासा।

जन्म जरा मरणादि तृषा कर, जगत जीव दुख पावे।
तिहि दुख दूर करन जिनपदको, पूजन जल ले आवे ।।
परम पूज्य वीराधिवीर जिन, वाहुवली वल धारी।
जिनके चरणकमल को नितप्रति, धोक त्रिकाल हमारी ।।

ॐ ह्रीं कर्मारि विजयी वीराधिवीर श्रीगोमटेश्वर वाहुवली परम योगीन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल नि०।

यह ससार मरुस्थल अटवी, तृष्णा दाह भरी है।
तिहि दुख टारन चन्दन लेके, जिनपद पूज करी है ।। पर.चं.।।
स्वच्छ सालि शुचि नीरज रज सम, गंध अखड प्रचारी।
अक्षयपद के पावन कारन, पूजे भव जगतारी ।। पर.अक्षतं।।

हरिहर चक्रपती सुर दानव, मानव पशु वस पाके।
तिहि मकरध्वज नाशकजिनको,पूजों पुष्प चढ़ाके ।।पर.पुष्प।।
दुखद त्रिजग जीवनको अतिही, दोष क्षुधा अनिवारी।
तिहि दुख दूर करनको चरुवर, ले जिन पूज प्रचारी ।।पर.नै.।।

मोह महातम ने जगजीवन, शिव मग नांहि लखावे।
तिहि निवारन दीपक करले, जिनपद पूजन आवे ।।पर.दीपं।।

उत्तम धूप सुगन्ध बनाकर, दश दिशि मे महकावे ।
दशविधि बन्ध निवारक कारन, जिनवर पूज रचावे । प धूप।।
सरस सुवरण सुगन्ध अनूपम, स्वच्छ महाशुचि लावे ।
शिवपद कारण जिनवरपदको, फलसो पूज रचावे ।।प॰ फल।।
वसुविधिके वस वसुधा वही, परबस अति दुख पावे ।
तिहि दुख दूर करनको भविजन, अर्घ जिनाग्र चढावे ।प अर्घ्य।।

जयमाला ।

दोहा—आठ कर्म हनि आठ गुण, प्रकट करे जिनरूप ।
सो जयवन्तो भुजवली, प्रथम भये शिव भूप ।।

कुसुमलता छन्द ।

जय जय जय जगतारण शिरोमणि, क्षत्रिय वश असग महान ।
जय जय जय जग जन हितकारी, दीनो जिन उपदेश प्रमाण ।।
जय जय जय चक्रपति सुत जिनके, शत सुत ज्येष्ठ भरत पहिचान ।
जय जय जय श्री ऋषभदेव जिन सो जयवन्त सदा जग जान ।।
जिनके द्वितीय महादेवी शुचि, नाम सुनन्दा गुण की खान ।
रूप शील सम्पन्न मनोहर, तिनके सुत भुजवली महान ।।
सवा पञ्च शत धनु उन्नत तनु, हरित वरण शोभा असमान ।
वैडूर्यमणि पर्वत मानो नील कुलाचल सम थिर जान ।।
वैजयन्त परमाणु जगत मे, तिनकरि रचो शरीर प्रमाण ।
सत वीरत्व गुणाकर जाको, तिनकरि रचो शरीर प्रमाण ।।
धोरज अतुल वज्र सम नीरज, सम वीराग्रणि अति बलवान ।
जिन छवि लखि मनु शशि छबि लाजै, कुसुमायुध लीनो सुखमान ।।
बाल समय जिन बाल चन्द्रमा, शशिसे अधिक धरे दुति सार ।
जो गुरुदेव पढाई विद्या, शस्त्र शास्त्र सब पढो अपार ।।
ऋषभदेव ने पोदनपुर के, नृप कीने भुजवली कुमार ।
दई अयोध्या भरतेश्वर को, आप बने प्रभुजी अनगार ।।

राज काज पटखण्ड महीपति, सब दल लै चढि आये आप।
बाहुवली भी सम्मुख आये, मन्त्रिन तीन युद्ध दिये थाप ॥
दृष्टि, नीर अरु मल्ल युद्ध मे, दोनो नृप कीनो बल धाप।
वृथा हानि रुक जाय सैन्य की, यातै लडिये आपो-आप ॥
भरत भुजबली भूपति भाई, उतरे समर भूमि मे आय।
दृष्टि नीर रण थके चक्रपति, मल्लयुद्ध तब करो अघाय ॥
पगतल चलत चलत अचला तब, कम्पत अचल शिखर ठहराय।
निवघ नीर अचला घर मानो, भये चलाचल क्रोध बसाय ॥
भुज विक्रम बल बाहुवली ने, लये चक्रपति अधर उठाय।
चक्र चलायो चक्रपती तब, तो भी विफल भयो तिहि ठाय ॥
अति प्रचण्ड भुजदण्ड सुण्ड सम, नृप सार्दूल बाहुवलि राय।
सिंहासन मंगवाय जा समै, अग्रज को दीनो पधराय ॥
राजरमा रामा सुर धनु मे, जोवन दमक दामिनी जान।
भोग भुजङ्ग जङ्ग सम जय को, जान त्याग कीनो तिहि थान ॥
अष्टापद पर वीर नृपति वर, वीर व्रत धर कीनो ध्यान।
अचल अङ्ग निरभङ्ग अङ्ग तज, सम्वतसरलौं एक स्थान ॥
विपधर वम्बी करी चरणतल, ऊपर वेलि चढी अनिवार।
युग जङ्घा कटि बाहु वेढिकर, पहुँची वक्षस्थल पर सार ॥
सिर के केश बढे जिम माही, नभचर पक्षी बसे अपार।
धन्य धन्य इम अचल ध्यान को, महिमा सुर गावैं उरधार ॥
कर्म नाशि शिव जाय बसे प्रभु, ऋषभेश्वर से पहिले जान।
अष्ट गुणाङ्कित सिद्ध शिरोमणि, जगदीश्वर पद लयो प्रमान ॥
वीरव्रती वीराग्रगण्य प्रभु, बाहुवली जग धन्य महान।
वीरव्रती के काज जिनेश्वर, नमे सदा जिन विम्ब प्रमाण ॥

दोहा—**श्रवण वेलगुल विंध्यगिरि, जिनवर विम्ब प्रधान।**
छप्पन फुट उत्तङ्ग तन, खड्गासन अमलान ॥१॥

अतिशयवन्त अनन्त बल, धारक विब अनूप ।
अर्घ चढाय नमो सदा, जय जय जिनवर भूप ।।
ॐ ह्रीं कर्मारिविजयी वीराधिवीर श्रीगोम्मटेश्वर बाहुबली पर योगीन्द्राय नम महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
इत्याशीर्वाद ।

नवग्रह अरिष्ट निवारक पूजा

श्लोक—प्रणम्याद्यन्ततीर्थेश. धर्मतीर्थप्रवर्त्तक ।
भव्यविघ्नोपशान्त्यर्थं, ग्रहार्चा वर्ण्यते मया ।।
मार्तण्डेन्दुकुजसौम्य-, सूरसूर्यकृतान्तका: ।
राहुश्च केतुसंयुक्तो, ग्रहशान्तिकरा नव ।।

दोहा—आदि अन्त जिनवर नमों, धर्म प्रकाशन हार ।
भव्य विघ्न उपशान्त को, ग्रहपूजा चित धार ।।
काल दोष प्रभावसो, विकलप छूटे नाहि ।
जिन पूजा मे ग्रहन की, पूजा मिथ्या नाहि ।।
इसही जम्बूद्वीप मे, रवि शशि मिथुन प्रमान ।
ग्रह नक्षत्र तारा सहित, ज्योतिश्चक्र प्रमान ।।
तिनही के अनुसार सों, कर्म चक्र की चाल ।
सुख दुख जानै जीव को, जिन वच नेत्र विशाल ।।
ज्ञान प्रश्न व्याकरण मे, प्रश्न अङ्ग है पाठ ।
भद्रबाहु मुख जनित जो,सुनत कियो मुख पाठ ।
अवधिधार मुनिराजजी, कहे पूर्व कृत कर्म ।
उनके वच अनुसार सों, हरे हृदय को मर्म ।।

समुच्चय पूजा।

दोहा—अर्क चन्द्र कुज सोम गुरु, शुक्र शनिश्चर राहु।
केतु ग्रहारिष्ट नाशने, श्री जिन पूज रचाहु॥

ॐ ह्रीं सर्वग्रह अरिष्ट निवारक चतुर्विंशति जिन अत्र! अवतर २ संवौषट् आह्वानन। अत्र तिष्ठ तिष्ठ, ठ ठ स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अष्टक—गीतिका छन्द

क्षीर सिंधु समान उज्ज्वल, नीर निर्मल लीजिये।
चौबीस श्रीजिनराज आगे, धार त्रय शुभ दीजिये॥
रवि सोम भूमज सौम्य गुरु कवि, शनि नमो पूतकेतवे।
पूजिये चौबीस जिन, ग्रहारिष्ट नाशन हेतवे॥

ॐ ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारक श्रीचतुर्विंशतितीर्थङ्कर-जिनेन्द्राय पंचकल्याणक-प्राप्ताय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीखण्ड कुमकुम हिम सुमिश्रित, घिसों मनकर चावसों।
चौबीस श्रीजिनराज अघहर, चरण चरचो भावसों। रवि. चं.
अक्षत अखण्डित सालि तन्दुल, पुञ्ज मुक्ताफलसमं।
चौबीस श्रीजिनराज पूजत, नाश ह्वै नवग्रह भ्रमं। रवि.। अ.
कुन्द कमल गुलाब केतकि, मालती जाही जुही।
कामबाण विनाश कारण, पूजि जिनमाला गुही। रवि.। पुष्पं
फेनी सुहारी पुवा पापर, लेऊँ मोदक घेवर।
शतछिद्र आदिक विविध व्यंजन, क्षुधाहर बहु सुखकरं। रवि.। नैवे
मणिदीप जगमग जोत तमहर, प्रभु आगे लाइये।
अज्ञान नाशक निज प्रकाशक, मोह तिमिर नसाइये। रवि.। दीपं

कृष्णा अगर घनसार मिश्रित, लोंग चन्दन लेइये ।
अहारिष्ट नाशक हेत भविजन, धूप जिनपद खेइये ।रवि.धूप
बादाम पिस्ता सेव श्रीफल, मोच नींबू सद फल ।
चौबीस श्रीजिनराज पूजत,मनोवांछित शुभ फलं ।रवि ।फलं।
जल गंध सुमन अखंड तन्दुल, चरु सुदीप सुधूपक ।
फल द्रव्य दूध दही सुमिश्रित, अर्घ देय अनूपकं ।रवि ।अर्घ्यं

जयमाला

दोहा—श्री जिनवर पूजा किये, ग्रहारिष्ट मिट जाय ।
पंच ज्योतिषी देव सब, मिल सेवें प्रभु पांय ।।

पद्धरि छन्द

जय जय जिन आदि महन्त देव,जय अजित जिनेश्वर करहिं सेव
जय जय संभव भव भव निवार,जय जय अभिनंदन जगत तार
जय सुमति २ दायक विशेष, जय पद्मप्रभ लख पदम लेष ।
जय जय सुपार्स हर कर्म फास, जय जय चन्द्रप्रभ सुख निवास।।
जय पुष्पदन्त कर कर्म अन्त, जय शीतल जिन शीतल करंत ।
जय श्रेय करन श्रेयांस देव, जय वासुपूज्य पूजत सुमेव ।।
जय विमल २ कर जगतजीव, जय२ अनन्तसुख अति सदीव ।
जय धर्म धुरन्धर धर्मनाथ, जय शांति जिनेश्वर मुक्ति साथ ।।
जय कुन्थुनाथ शिव सुखनिधान,जय अर जु जिनेश्वर मुक्तिथान
जय मल्लिनाथ पद पद्म भास,जय मुनिसुव्रत सुव्रत प्रकाश ।।
जय जय नमिदेव दयाल संत, जय नेमनाथ तसु गुण अनन्त ।
जय पारस प्रभु सङ्कट निवार, जय वर्द्धमान आनन्दकार ।।

नवग्रह अरिष्ट जब होय आय, तब पूजे श्री जिनदेव पाय ।
मन वच तन मनसुख सिधु होय, ग्रहशांति रीत यह कही जोय

ॐ ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारक श्रीचतुर्विंशतितीर्थंङ्कर-जिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा—चौबीसों जिनदेव प्रभु, ग्रह सम्बन्ध विचार ।
पुनि पूजों प्रत्येक तुम, जो पाऊं सुख सार ।।

इत्याशीर्वादः ।

कलि–कुण्ड पार्श्वनाथ पूजा

सबके मध्य लिखा ह्रींकार फिर चहुं ओर ब्रह्म अक्षर ।
उसके बाद लिखा स्वर खींचो आठ वज्र रेखा दुर्द्धर ।।१।।
प्रणव वज्र रेखा आगे है मध्य अनाहत युगल लिखा ।
ह-भ-म-र-घ-झ-स-ख पिण्ड युक्त निजवर्ण सहित सशुद्ध लिखा
पीछे वेष्टित किया यथाविधि यही मन्त्र कलिकुण्ड महान ।
पर-कृत विघ्न निवारक है अरु चोर शाकिनी नाशक जान ।३
जो मंत्रज्ञ डाभ से इसको कांस्य पात्र मे लिखते हैं ।
करते हैं श्रीखण्ड लेख जो उनको सत्सुख मिलते हैं ।।४।।

दोहा—रोग शोक नाशक विमल, सिद्ध सु महिमावान ।
करूं शुद्ध संस्थापना, श्री कलिकुण्ड महान ।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं, कलिकुण्डदण्ड श्रीपार्श्वनाथ धरणेन्द्र पद्मावती–सेवित अतुल–बलवीर्यपराक्रम सर्वविघ्नविनाशक ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

शुभ तीर्थ गंगा नदी द्रह पदमादिपं मै जाय के ।
शीतल सुगंधित और शुद्ध पवित्र जल भर लायकें ।।

दुष्ट कृत उपसर्ग नाशक एक ही जिन नाथ को।
मैं पूजता हूं भाव से कलिकुण्ड पारस नाथ को ।।

ॐ ह्री श्री क्ली ऐ अर्हं कलिकुण्डदण्ड–श्रीपार्श्वनाथाय धरणेन्द्र-पद्मावती–सेविताय अतुल–वलवीर्य–पराक्रमाय सर्वविघ्नविनाशनाय हम्ल्व्यूं म्म्ल्व्यूं म्म्ल्व्यूं र्म्ल्व्यूं घ्म्ल्व्यूं झ्म्ल्व्यूं स्म्ल्व्यूं स्म्ल्व्यूं जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा।

अतिगन्ध से जिस पै लुभाते भ्रमर नित्य अनेक हैं।
वह मलयगिरि का दाहनाशक शुद्ध चन्दन एक है।दुष्ट.।चदनं
चन्द्र के सम शुक्ल स्वच्छ अखण्ड शालि बनाय कै।
अविनाशि पदकी प्राप्तिहेतु अनिद्य तदुल लायकै।दुष्ट.।अक्षतं
मंदार अरु वकुलादि के रमणीक पुष्प मंगायकै।
सर मे प्रफुल्लित कमल कुसुम सुगंधसी महकायकै।दुष्ट.।पुष्पं
ताजे बनाये विविध घृत रसपूर्ण व्यञ्जन लायकै।
अति स्वच्छ सुन्दर कनक भाजनमे उन्हे रखवायकै।दु.।नैवेद्य
जग का प्रकाशक तम विनाशक कनकमय दीपक धरूं।
बहु जगमगाते ज्योतिमय अति ज्वलित से पूजा करू।दु।दीप
कर्पूरचन्दन अगुरु काष्ठादिक अनेक मगायकै।
अति गंध युक्त अनूप धूप दशांगको बनवायकै।।दु । धूपं।।
गोला छुहारे दाख पिस्तादिक अनेक सुलायकै।
मोक्ष का अभिलाष कर रमणीक फल मंगवायकै।दु.।फलं।।
जल गंध अक्षत पुष्प चरु फल दीप धूप मिलायकै।
वसु अर्घ से कलिकुण्ड पूजूं, हर्ष भाव बढायकै।।दु।अर्घ्यं।।

अडिल्ल छन्द--सूर्य चन्द्र मंगल बुध गुरु अरु शुक्र है,
राहू केतु शनिश्चर नवग्रह चक्र है।
इनकी शान्ति हेतु मै शान्त जु भाव से,
पूजूँ श्रीकलिकुण्ड प्रभु ! अति चाव से ।।

ॐ ह्रीं श्री ऐं अर्हं कलिकुण्ड-श्रीपार्श्वनाथ धरणेन्द्रपद्मावती-सेविताय अतुल-बलवीर्य-पराक्रमाय सर्वविघ्नविनाशनाय ह्म्ल्व्यूँ स्म्ल्व्यूँ म्म्ल्व्यूँ रम्ल्व्यूँ घम्ल्व्यूँ झम्ल्व्यूँ स्म्ल्व्यूँ खम्ल्व्यूँ अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्तुति।

देवेन्द्रो से पूजित हो, सर्वज्ञ जिनेश्वर हो भगवान।
सदुपदेशक हो जिनवर तुम, मै प्रणाम करता गुणगान ।।
सर्व विघ्न विनाशक हो प्रभुवर तुम हो सद्गुण की खान।
विनती करता नाथ आपकी, हो नायक कलिकुण्ड महान ।।१।।
नित्य भक्तिपूर्वक निज मनमे, याद किया जो हैं करते।
अपनी शक्त्यनुसार प्रार्थना, करके मन्त्र जपा करते ।।
पूजा करते भक्तिभाव से, यन्त्रराज की जो गुणगान।
पूर्ण हुआ करती है उनकी, मनोकामना निश्चय जान ।।२।।
भक्ति जिन्हो की यन्त्रराज मे, है उनको सब सुख मिलता।
उनके घर मे कल्पवृक्ष, मानो उत्पन्न हुआ करता ।।
अथवा प्रकट होत चिन्तामणि, रत्न चिन्त्य वस्तुदाता।
या फिर मानव मनोरथो के, हेतु कामधेनु पाता ।।३।।
देवासुर से वन्दित है जो, रत्नपात्र मे लिखा गया।
रत्नत्रय आराधन का कारण है जो सुना गया ।।

श्रीकलिकुण्ड यन्त्र को मै, अध्यात्म प्रेम मे पगा हुआ ।
नमस्कार करता हूँ मन मे, भक्ति रंग से रँगा हुआ ।।४।।
पडे जेलखानो मे जो हैं, या बन्धन मे बँधे हुये ।
ज्वर अतिसार ग्रहणी रोगो मे, प्राणी जो हैं फँसे हुये ।।
सिंह करी सर्पाग्नि चोर अरु, विष समुद्र के कष्ट अनेक ।
राज काज के सभी डरो को, यन्त्र दूर करता है एक ।।५।।
वन्ध्या स्त्री बहु-पुत्रवती हो, सुख का अनुभव करती है ।
सर्व अनर्थ दूर होते हैं, शान्ति पुष्टि नित होती है ।।
सुख अरु यश बढता है उनका, जो नित पूजन करते हैं ।
श्रीजिन के मुखसे निकले, कलिकुण्ड यन्त्र को भजते हैं ।।६।।
सब दोषो से रहित तथा, इन्द्रो से सम्पूजित हैं वे ।
सर्व सुखों के दाता है अरु, विघ्न विनाशकर्ता हैं वे ।।
जो जन परम भक्ति से पढते, और अर्चना करते हैं ।
पूर्ण सुखी होते हैं वे फिर, मुक्ति रमा को वरते हैं ।।७।।

परिपुष्पाजंलि क्षिपेत् । अथ जयमाला ।

दोहा—जिनवर के सुमिरण किये, पाप दूर हो जाय ।
ज्यों रवि किरणो से सदा, अधकार नशि जाय ।।

पद्धरि छन्द ।

जय अजन पर्वतसम जिनेश घन गर्जन सम तव धुनि बहेय ।
मदमत्त शात होता गजेश, मनमे भजते जो जन जिनेश ।।१।।
अति क्रुद्ध जीभ मुँह दाँत फाड, यमराज समान रहा दहाड ।
मृग सम होता है वह मृगेश, मनमे भजते जो जन जिनेश ।२।

कुल रहे केश काले कराल, बहु रहा लाल आँखें निकाल ।
बनता प्रसन्न वह व्यन्तरेश, मनमे भजते जो जन जिनेश ।।३।।
बहु भीषण जलचर से दुरूह, तट अधिक हुआ जलका समूह ।
गोखुर प्रमाण होता जलेश, मनमे भजते जो जन जिनेश ।।४।।
सिर चमक रही मणिफन महान, त्रयलोक क्षोभ कारण महान
नहिं डरता क्रूर भुजंगमेश, मनमे भजते जो जन जिनेश ।।५।।
जहँ तीव्र ज्वाल माला प्रसार, घृत तेल हवा से दुगुणभार ।
वह शात होय जिम तारकेश, मनमे भजते जो जन जिनेश ।६।
पड जेल बँधे जंजीर डार, बन्धु जिनके रोते अगार ।
वे छूट अभय पाते अशेष, मनमे भजते जो जन जिनेश ।।७।।
फँस रहा मनुज रिपु चाल बीच, बहु सकट कष्ट अनेक कीच ।
असि कमलवैन नहिं हो क्लेश, मनमे भजते जो जन जिनेश ।८।

दोहा—होते सुर असुरेश सब, अरु विद्याधरराज ।
वशमे उनके सर्वदा, सुमरत जो जिनराज ।।

ॐ ह्री श्री क्ली ऐं अर्हं कलिकुण्डदण्डश्रीपार्श्वनाथाय धरणेन्द्रपद्मावतीसेविताय अतुलवलवीर्यपराक्रमाय सर्वविघ्नविनाशनाय ह्म्ल्व्य्रूँ झ्म्ल्व्य्रूँ म्म्ल्व्य्रूँ रम्ल्व्य्रूँ घ्म्ल्व्य्रूँ झ्म्ल्व्य्रूँ स्म्ल्व्य्रूँ खम्ल्व्य्रूँ अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

रक्षा-बन्धन-पूजा

(श्री विष्णुकुमार पूजा)

अडिल्ल छन्द—विष्णु कुमार महामुनिको ऋद्धि भई ।
नाम विक्रिया तासु सकल आनन्द ठई ।।

सो मुनि आये हथनापुर के बीच मे।
मुनि बचाये रक्षा कर बन बीच मे ।।१।।
तहाँ भयो आनन्द सर्व जीवन घनो।
जिन चिन्तामणि रत्न एक पायो मनो ।।
सब पुर जै-जैकार शब्द उचरत भये।
मुनिको देय आहार आप करते भये ।।२।।

ॐ ह्री श्रीविष्णुकुमारमुनि अत्र अवतर अवतर सवौषट्, इति आह्वानन। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ प्रतिस्थापन। अत्र मम सन्निहितो भव भव सन्निधिकरण।

अथाष्टक। चाल—सोलह पूजा की।

गगाजल सम उज्ज्वल नीर, पूजो विष्णुकुमार सुधीर।
दयानिधि होय, जय जगबन्धु दयानिधि होय ।।
सप्त सैकड़ा मुनिवर जान, रक्षा करी विष्णु भगवान।
दयानिधि होय, जय जगबन्धु दयानिधि होय ।।

ॐ ह्री श्रीविष्णुकुमारमुनिभ्य नम जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल।

मलयागिर चन्दन शुभसार, पूजौं श्रीगुरुवर निर्धार।
दयानिधि होय, जय जगबन्धु दयानिधि होय ।।सप्त.।।दया।।

ॐ ह्री श्रीविष्णुकुमारमुनिभ्य नम भवताविनाशनाय चन्दन नि०।

श्वेत अखडित अक्षत लाय, पूजो श्रीमुनिवर के पाय।
दयानिधि होय, जय जगबन्धु दयानिधि होय ।।सप्त ।।दया ।।

ॐ ह्री श्रीविष्णुकुमारमुनिभ्य नम अक्षयपदप्राप्तये अक्षत नि०।

कमल केतकी पुष्प चढ़ाय, मेटो कामबाण दुखदाय।
दयानिधि होय, जय जगबन्धु दयानिधि होय ।।सप्त ।।दया.।।

ॐ ह्री श्रीविष्णुकुमारमुनिभ्य नम कामबाणविनाशनाय पुष्पं नि० ।

लाडू फेनी घेवर लाय, सब मोदक मुनि चरण चढ़ाय ।

दयानिधि होय, जय जगबन्धु दयानिधि होय ।।सप्त.।।दया.।।

ॐ ह्री श्रीविष्णुकुमारमुनिभ्य नम क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ।

घृत कपूर का दीपक जोय, महातिमिर सब जावै खोय ।

दयानिधि होय, जय जगबन्धु दयानिधि होय ।।सप्त.।।दया.।।

ॐ ह्री श्रीविष्णुकुमारमुनिभ्य नम मोहान्धकारविनाशनाय दीपं ।

अगर कपूर सुधूप बनाय, जारे अष्ट कर्म दुखदाय ।

दयानिधि होय, जय जगबन्धु दयानिधि होय ।।सप्त.। दया.।।

ॐ ह्री श्रीविष्णुकुमारमुनिभ्य नम अष्टकर्मविध्वसनाय धूप नि० ।

लौंग लायची श्रीफल सार, पूजों श्रीमुनि सुख दातार ।

दयानिधि होय, जय जगबन्धु दयानिधि होय ।।सप्त.।।दया.।।

ॐ ह्री विष्णुकुमारमुनिभ्य नम मोक्षफलप्राप्तये फल नि० ।

जल फल आठों द्रव्य संजोय, श्रीमुनिवर पद पूजो दोय ।

दयानिधि होय, जय जगबन्धु दयानिधि होय ।।सप्त.।।दया.।।

ॐ ह्री श्रीविष्णुकुमारमुनिभ्य नम अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि० ।

अथ जयमाला ।

दोहा—श्रावण सुदी सु पूर्णिमा, मुनि रक्षा दिन जान ।
रक्षक विष्णुकुमार मुनि, तिन जयमाल बखान ।।

चाल—छन्द भुजङ्गप्रयात ।

श्री विष्णुदेवा करूँ चर्ण सेवा ।
हरो जनकी बाधा सुनो टेर देवा ।।

गजपुर पधारे महा सुक्खकारी ।
घरो रूप वामनसु मनमे विचारी ॥२॥
गये पास बलिके हुआ वो प्रसन्ना ।
जो माहो सो पावो दिया ये वचन्ना ॥
मुनि तीन डग [illegible] धरती सु तापै ।
दई ताने ततक्षिन सु नहि ढील थापै ॥३॥
कर विक्रिया सु मुनि काया बढाई ।
जगह सारी लेली सु डग दो के माहीं ॥
धरी तीसरी डग बली पीठ माहीं ।
सु मागी क्षमा तब बली ने बनाई ॥४॥
जल की सुवृष्टि करी सुक्खकारी ।
सरव अग्नि क्षण मे भई भस्म सारी ।
टरे सर्व उपसर्ग श्री विष्णुजी से ।
भई जै जैकार सरव नग्र ही से ॥५॥

चौपई

फिर राजा के हुक्म प्रमान, रक्षा बन्धन बधो सुजान ।
मुनिवर घर घर कियो विहार, श्रावकजन तिन दियो अहार
जाघर मुनि नहि आये कोय, निज दरवाजे चित्र सुलोय ।
स्थापन कर तिन दियो अहार, फिर सब भोजन कियो सम्हार
तबसे नाम सलूना, जैन धर्म का है त्योहार ।
शुद्ध क्रिया कर मानो जीव, जासो धर्म बढै सु अतीव ॥
धर्म पदारथ जगमे सार, धर्म विना झूठो ससार ।
सावन सुदी पूनम जब होय, यह दो पूजन कीजे लोय ॥

सब भाइनको दो समझाय, रक्षाबन्धन कथा सुनाय ।
मुनिका नित घर करौ अकार, मुनि समान तिन देउ अहार
सबके रक्षा बन्धन बांध, जैन मुनिन की रक्षा जान ।
इस विधि से मानो त्यौहार, नाम सलूना है ससार ।।
(घत्ता)-मुनि दीनदयाला, सब दुख टाला, आनन्द माला सुखकारी
'रघुसुत' नित वंदे, आनन्द कंदे, सुक्ख करन्दे हितकारी ।।
ॐ ह्री श्रीविष्णुकुमारमुनिभ्य नम महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
दोहा–विष्णुकुमार मुनिके चरण, जो पूजे धर प्रीत ।
'रघु-सुत' पावे स्वर्गपद, लहैं पुण्य नवनीत ।।

इत्याशीर्वादः

सलूना पर्व पूजा ।

[श्री अकम्पनाचार्यादि सप्तशत मुनि पूजा ।]

(चाल जोगीरासा)

पूज्य अकम्पन साधु शिरोमणि सात शतक मुनि ज्ञानी ।
आ हस्तिनापुर कानन मे हुए अचल दृढ़ ध्यानी ।
दुखद सहा उपसर्ग भयानक सुन मानव घबराये ।
आत्म-साधना के साधक वे, तनिक नहीं अकुलाये ।
योगिराज श्री विष्णु त्याग तप, वत्सलता-वश आये ।
किया दूर उपसर्ग, जगत-जन मुग्ध हुए हर्षाये ।।
सावन शुक्ला पन्द्रस पावन, शुभ दिन था सुखदाता ।
पर्व सलूना हुआ पुण्य-प्रद यह गौरवमय गाथा ।।
शान्ति दया समता का जिनसे नव आदर्श मिला है ।

जिनका नाम लिये से होती जागृति पुण्य-कला है।
करूं वन्दना उन गुरुपद की वे गुण मैं भी पाऊं।
आह्वानन संस्थापन सन्निधि-करण करूं हर्षाऊं॥

ॐ ह्रीं श्रीमकम्पनाचार्यादि सप्तशतमुनिसमूह अत्र अत्र अवतर २ संवौषट् इत्याह्वाननम्। अत्र तिष्ठ २ ठ ठ स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अथाष्टकम्—गीता—छन्द।

मैं उर—सरोवर से विमल जल भाव का लेकर अहो।
नत पाद—पद्मो मे चढाऊं मृत्यु जनम जरा न हो॥
श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर मुझे साहस शक्ति दें।
पूजा करूं पातक मिटें, वे सुखद समता भक्ति दें॥

ॐ ह्रीं श्रीमकम्पनाचार्यादिसप्तशतमुनिभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशाय जलं

सन्तोष मलयागिरिय चन्दन निराकुलता सरस ले।
नत पादपद्मों मे चढाऊ, विश्वताप नहीं जले॥श्रीगुरु॥चंदनं॥
तदुल अखंडित पूत आशाके नवीन सुहावने।
नत पाद-पद्मो मे चढाऊ दीनता क्षयता हने॥श्रीगुरु॥अक्षतं॥
ले विविध विमल विचार सुन्दर सरस सुमन मनोहरे।
नत पाद-पद्मों में चढाऊं काम की बाधा हरे॥श्रीगुरु. पुष्प॥
शुभ भक्ति घृत मे विनयके पकवान पावन मैं बना।
नत पाद-पद्मोमे चढा, मेटू क्षुधा की यातना॥श्रीगुरु.॥नैवेद्य॥
उत्तम कपूर विवेकका ले आत्म—दीपक मैं जला।
कर आरती गुरुकी हटाऊं मोह तमकी यह बला॥श्रीगुरु दी.
ले त्याग—तप की यह सुगन्धित धूप मैं खेऊं अहो।
गुरुचरण-करुणासे करमका कष्ट यह मुझको न हो॥श्रीगु.॥धूप

शुचि-साधना के मधुरतम प्रिय सरस फल लेकर यहां ।
नत पाद-पद्मोमे चढाऊ मुक्ति मै पाऊ यहां ।श्रीगुरु.।फल।
यह आठ द्रव्य अनूप श्रद्धा स्नेह से पुलकित हृदय ।
नत पाद-पद्मो मे चढा भवपार मै होऊ अभय ।श्रीगुरु.।अर्घ्यं

जयमाला

सोरठा—पूज्य अकम्पन आदि, सात शतक साधक सुधी ।
यह उनकी जयमाल, वे मुझको निज भक्ति दें ।।

(पद्धडि छन्द)

वे जीव दया पालें महान, वे पूर्ण अहिंसक ज्ञानवान ।
उनके न रोष उनके न राग, वे करें साधना मोह त्याग ।।
अप्रिय असत्य बोले न बैन, मन वचन कायमे भेद है न ।
वे महासत्य धारक ललाम, है उनके चरणो मे प्रणाम ।।
वे लें न कभी तृणजल अदत्त, उनके न धनादिक मे ममत्त ।
वे व्रत अचौर्य दृढ धरें सार, है उनको सादर नमस्कार ।।
वें करें विषय की नहीं चाह, उनके न हृदय मे काम—दाह ।
वे शील सदा पालें महान, कर मग्न रहे जिन आत्मध्यान ।।
सब छोड वसन भूषण निवास,माया ममता अरु स्नेह आस ।
वे धरें दिगम्बर वेष शान्त, होते न कभी विचलित न भ्रांत ।।
नित रहे साधना मे सुलीन, वे सहे परीषह नित नवीन ।
वे करें तत्त्वपर नित विचार, है उनको सादर नमस्कार ।।
पंचेन्द्रिय दमन करें महान, वे सतत बढावें आत्मज्ञान ।
संसार देह सब भोग त्याग, वे शिव-पथ साधे सतत जाग ।

जिनका नाम लिये से होती जागृति पुण्य-कला है ।
करू वन्दना उन गुरुपद की वे गुण मै भी पाऊ ।
आह्वानन सस्थापन सन्निधि-करण करू हर्षाऊं ।।

ॐ ह्री श्रीअकम्पनाचार्यादि सप्तशतमुनिसमूह अत्र अत्र अवतर २ सवौषट् इत्याह्वाननम् । अत्र तिष्ठ २ ठ ठ स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

अथाष्टकम्—गीता—छन्द ।

मै उर—सरोवर से विमल जल भाव का लेकर अहो ।
नत पाद—पद्मो मे चढाऊ मृत्यु जनम जरा न हो ।।
श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर मुझे साहस शक्ति दें ।
पूजा करूं पातक मिटें, वे सुखद समता भक्ति दें ।।

ॐ ह्री श्रीअकम्पनाचार्यादिसप्तशतमुनिभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशाय जल

सन्तोष मलयागिरिय चन्दन निराकुलता सरस ले ।
नत पादपद्मो मे चढाऊ, विश्वताप नही जले ।।श्रीगुरु।चदन।
तदुल अखडित पूत आशाके नवीन सुहावने ।
नत पाद-पद्मो मे चढाऊ दीनता क्षयता हने ।श्रीगुरु.।अक्षत।
ले विविध विमल विचार सुन्दर सरस सुमन मनोहरे ।
नत पाद-पद्मो मे चढाऊ काम की बाधा हरे ।।श्रीगुरु।पुष्प।
शुभ भक्ति घृत मे विनयके पकवान पावन मै बना ।
नत पाद-पद्मोमे चढा, मेटू क्षुधा की यातना ।श्रीगुरु।नैवेद्य।
उत्तम कपूर विवेकका ले आतम—दीपक मै जला ।
कर आरती गुरुकी हटाऊ मोह तमकी यह बला ।श्रीगुरु दी
ले त्याग—तप की यह सुगन्धित धूप मैं खेऊ अहो ।
गुरुचरण-करुणासे करमका कष्ट यह मुझको न हो।श्रीगु।धूप

शुचि-साधना के मधुर-रस प्रिय सरस फल लेकर यहाँ ।
नत पाद-पद्मोंमे चढ़ाऊं मुक्ति मैं पाऊं यहां ।श्रीगुरु.।फलं।
यह आठ द्रव्य अनूप श्रद्धा स्नेह से पुलकित हृदय ।
नत पाद-पद्मों में चढ़ा भवपार मैं होऊं अभय ।श्रीगुरु ।अर्घ्यं

जयमाला

सोरठा–पूज्य अकम्पन आदि, सात शतक साधक सुधी ।
यह उनकी जयमाल, वे मुझको निज भक्ति दें ।।

(पद्धडि छन्द)

वे जीव दया पाले महान, वे पूर्ण अहिंसक ज्ञानवान ।
उनके न रोष उनके न राग, वे करें साधना मोह त्याग ।।
अप्रिय असत्य बोले न बैन मन वचन कायमे भेद है न ।
वे महासत्य धारक ललाम, है उनके चरणो मे प्रणाम ।।
वे लें न कभी तृणजल अदत्त, उनके न धनादिक मे ममत्त ।
वे व्रत अचौर्य दृढ धरें सार, है उनको सादर नमस्कार ।।
वे करें विषय की नहीं चाह, उनके न हृदय मे काम–दाह ।
वे शील सदा पालें महान, कर मग्न रहे जिन आत्मध्यान ।।
सब छोड वसन भूषण निवास, माया ममता अरु स्नेह आस ।
वे धरें दिगम्बर वेष शान्त, होते न कभी विचलित न भ्रांत ।।
नित रहे साधना मे सुलीन, वे सहें परीषह नित नवीन ।
वे करें तत्त्वपर नित विचार, है उनको सादर नमस्कार ।।
पचेन्द्रिय दमन करें महान, वे सतत बढावें आत्मज्ञान ।
संसार देह सब भोग त्याग, वे शिव-पथ साधे सतत जाग ।

'कुमरेश' साधु वे हैं महान, उनसे पावे जग नित्य त्राण।
मैं करूं वन्दना बार बार, वे करें भवार्णव मुझे पार ॥

घत्ता-मुनिवर गुणधारक पर-उपकारक भवदुख हारक सुखकारी
वे करम नशायें सुगुण दिलायें, मुक्ति मिलायें भव-हारी ॥

ॐ ह्रीं श्रीअकम्पनाचार्यादि सप्तशतमुनिभ्यो महार्घ्यं निर्व०।

सोरठा-श्रद्धा भक्ति समेत, जो जन यह पूजा करे।
वह पाये निज ज्ञान, उसे न व्यापे जगत-दुख ॥

इत्याशीर्वाद

चौसठ-ऋद्धि (समुच्चय) पूजा

(गीता छन्द)-संसार सकल असार जामे सारता कछु है नहीं,
धनधाम धरणी और गृहणी त्यागि लीनी बनमहीं।
ऐसे दिगम्बर हो गये, अरु होयगे वरतत सदा,
इस थापि पूजों मन वचन करि देहु मंगल विधि तदा।१।

ॐ ह्रीं भूतभविष्यद्वर्तमानकालसम्बन्धि पंचप्रकारसर्वऋषीश्वरा अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्। अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठ ठ। अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट्।

चाल रेखता

लाय शुभ गंगजल भरिकै, कनक भृङ्गार धरि करिकै।
जन्म जरमृत्यु के हरनन, यजो मुनिराज के चरणन ॥२॥

ॐ ह्रीं भूतभविष्यद्वर्तमानकालसम्बन्धिपुलाकवकुशकुशीलनिर्ग्रंथ-स्नातकपञ्चप्रकारसर्वमुनीश्वरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि०।

घसों काश्मीर संग चंदन मिलावो केलिको नन्दन।
करत भवतापको हरनन, यजो मुनिराज के चरणन।२।चंदन

अक्षत शुभचन्द्रके करसे, भरो कणथालमे सरसे ।
अक्षयपद प्राप्तिके करणन, यजो मुनिराजके चरणन ।३।अक्षत
पहुप ल्यो घ्राणके रंजन, उड़त तामाहि मकरदन ।
मनोभव वाणके हरनन, यजो मुनिराजके चरणन ।।४।।पुष्पं
लेय पक्वान्न बहुविधिके, भरो शुभथाल सुवरणके ।
असातावेदनी क्षुरणन, यजो मुनिराजके चरणन ।।५।नैवेद्यं।।
जगमगे दीप लेकरिके, रकाबी स्वर्णमे धरिके ।
मोहविध्वंसके करणन, यजों मुनिराजके चरणन ।।६। दीपं।।
अगर मलयागिरी चदन, खेयकरि धूपके गंधन ।
होय कर्माष्टको जरनन, यजो मुनिराजके चरणन ।।७।धूपं।।
सिरीफल आदि फल ल्यायो, स्वर्ण को थाल भरवायो ।
होय शुभमुक्तिको मिलनन, यजो मुनिराजके चरणन ।।८।फलं
जलादिक द्रव्य मिलवाये, विविध वादित्र बजवाये ।
अधिक उत्साहकरि तनसे, चढावो अर्घ चरणनमे ।।९।अर्घ्यं।।

सोरठा—तारण तरण जिहाज, भवसमुद्र के माहि जो ।
ऐसे श्रीऋषिराज, सुमरि-सुमरि विनती करो ।।१।।

छन्द पद्धरि ।

जय जय जय श्रीमुनियुगल पाय, मैं प्रणमो मन वच शीशनाय ।
ये सब असार संसार जानि, सब त्याग कियो आतमकल्याण ।।
क्षेत्र वास्तु अरु रत्न स्वर्ण, धन धान्य द्विपद अरु चतुकचर्ण ।
अरु कौप्य भांड दश वाह्य भेद, परिग्रह त्यागे नहीं रंच खेद ।३।
मिथ्यात्व तज्या संसार मूल, मुनि हास्य अरति रति शोकशूल ।

भय सप्त जुगुप्सा स्त्रीय वेद, पुनि पुरुष वेद अरु क्लीव वेद ।४।
अरु क्रोध मान माया रु लोभ, ये अन्तरंग मे करत क्षोभ ।
इमि ग्रन्थ सबै चौबीस येह, तजि भये दिगम्बर नग्न जेह ।५।
गुणमूल धारि तजि रागदोष, तप द्वादश धरि तन करत शोष ।
तृण कंचन महल मसान मित्त, अरु शत्रुनिमे समभाव चित्त ।६।
अरु मणि पाषाण समान जास, पर-परणतिमे नहिं रच वास ।
यह जीव देह लखि भिन्न-भिन्न, जे निज स्वरूपमे भावकिन्न ।७।
ग्रीषमऋतु पर्वत शिखर वास, वर्षा मे तरुतल है निवास ।
जे शीतकाल मे करत ध्याव, तटनी तट चोहट शुद्ध थान ।८।
हो करुणासागर गुण अगार, मुझ देहि अखय सुखको भडार ।
मै शरण गही मुझ तार-तार, मो निज स्वरूप द्यो बारबार ।९।
घत्ता—यह मुनि गुणमाला, परम रसाला, जो भविजन कंठै धरही
सबविघ्नविनाशहि, मंगलभासहि मुक्तिरमा वह नर वरही
ॐ ह्रीं भूत-भविष्यत्-वर्तमानकालसम्बन्धि पचप्रकारऋषीश्वरायार्घ्यं ।
दोहा—सबै मुनिन की पूज यह, करै भव्य चित लाय ।
ऋद्धिसिद्धि घर मे बसै, विघ्न सबै नशि जाय ।।११।।
इत्याशीर्वाद ।

श्री वर्द्धमान जिन पूजा

मत्तगयन्द ।

श्रीमत वीर हरै भवपीर भरै सुखसीर अनाकुलताई ।
केहरि अङ्क अरीकरदंक नये हरि पकति मौलि सुआई ।।
मै तुमको इत थापतु हौं, प्रभु भक्ति समेत हिये हरषाई ।
हे करुणाधनधारक देव ! इहाँ अब तिष्ठहु शीघ्रहि आई ।।

हरिचन्दन अगर कपूर, चूर सुगन्ध करा।
तुम पदतर खेवत सूरि, आठो कर्म जरा ।।श्रीवीर०।।
ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूप नि० ।
ऋतुफल कलवर्जित लाय, कञ्चन थार भरो ।
शिवफल हित हे जिनराय, तुम ढिग भेंट धरो ।।श्रीवीर०।।
ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फल नि० ।
जल फल वसु सजि हिम थार, तन मन मोद धरो।
गुणगाऊँ भवदधि पार, पूजत पाप हरो ।।श्रीवीर०।।
ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अनर्घ्यंपदप्राप्तये अर्घ्यं नि० ।

पंचकल्याणक ।

मोहि राखो हो शरणा, श्री वर्धमान जिनरायजो । मोहि० ।
गरभ षाढ सित छट्ट लियो तिथि, त्रिशलाउर अघहरना ।।
सुर सुरपति तित सेवकरी नित, मैं पूजो भवतरना ।।मोहि.।।
ॐ ह्रींआषाढशुक्लाषष्ठ्या गर्भावतरणमगलप्राप्ताय श्रीमहावीरायार्घ्यं०
जनम चैत सित तेरसके दिन, कुण्डलपुर कनवरना ।
सुरगिरि सुरगुरु पूज रचायो मै पूजो भवहरना ।।मोहि०।।
ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लात्रयोदश्या जन्ममगलप्राप्ताय श्रीमहावीरायाऽर्घ्यं० ।
मंगसिर असित मनोहर दशमी, ता दिन तप आचरना ।
नृपकुमार घर पारण कीनो, मै पूजो तुम चरना । मोहि०।।
ॐह्रीं मार्गशीर्षकृष्णादशम्या तपोमगलमडिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्रायार्घ्यं
शुकल दशं वैशाख दिवस अरि, घाति चतुक क्षय करना ।
केवल लहि भवि भवसर तारे, जजो चरन सुखभरना ।मोहि०।।
ॐह्रीं वैशाखशुक्लादशम्या ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय श्रीमहावीर-
जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कार्तिक श्याम अमावस शिव तिय पावापुरतें वरना ।
गणफणिवृन्द जजें तित बहुविधि मैं पूजों भव हरना ।। मो०

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्या मोक्षमंगलमंडिताय श्रीमहावीर-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला (छन्द हरिगीता)

गणधर असनिधर चक्रधर हरधर गदाधर वरवदा ।
अरु चापधर विद्यासुधर, त्रिशूलधर सेवहि सदा ।।
दुख-हरन आनन्द-भरन, तारन तरन चरन रसाल है ।
सुकुमाल गुनमनिमाल उन्नत भाल की जयमाल है ।।१।।

छन्द घत्ता

जय त्रिशलानन्दन हरिकृतवन्दन जगदानन्दन चन्दवरं ।
भवतापनिकन्दन तनमनकन्दन रहित सपन्दन नयनधरं ।।२।।

छन्द त्रोटक

जय केवलभानु कला सदनं, भवि कोक विकासन कञ्जवनं ।
जगजीत महारिपु मोह हरं, रजज्ञान दृगांवर चूर करं ।।१।।
गर्भादिक मंगल मण्डित हो, दुख दारिद को नित खंडित हो ।
जगमांहि तुम्हीं सत पंडित हो,तुमही भव भावविहंडित हो ।२
हरिवंश सरोजनको रवि हो, बलवन्तमहन्त तुम्हीं कवि हो ।
लहि केवल धर्म प्रकाश कियो,अबलौं सोई मारग राजति यो ।३
पुनि आप तने गुनमांहि सही, सुरमग्न रहे जितने सबही ।
तिनकी वनिता गुन गावत हैं, लय माननि सों मन भावत हैं
पुनि नाचत रङ्ग उमङ्ग भरी, तव भक्ति विषै पग एम धरी ।
झननं झननं झननं झननं, सुरलेत तहा तनन तननं ।।५।।

घनन घनन घन घण्ट बजे, दृम दृम दृम दृम मिरदङ्ग सजे।
गगनागन-गर्भगता सुगता, ततता ततता अतता वितता ।।६।।
धृगतां धृगता गति बाजत है, सुरताल रसाल जु छाजत है।
सननं सनन सननं नभ मे, इकरूप अनेक जु धारि भ्रमै ।७।
केइ नारि सुवीन बजावति हैं, तुमरो जस उज्ज्वल गावति हैं
करताल विषै करताल धरै, सुरताल विशाल जु नाद करै ।८।
इन आदि अनेक उछाह भरी, सुर भक्ति करै प्रभुजी तुमरी।
तुमही जगजीवन के पितु हो, तुमही बिन कारनतें हितु हो।६
तुमही सब विघ्न विनाशक हो, तुमही निज आनन्द भासन हो
तुमही चित चिंतित दायक हो, जगमाहि तुमही सब लायकहो१०
तुमरे पन मङ्गल मांहि सही, जिय उत्तम पुण्य लियो सबही।
हमको तुमरी शरणागत है, तुमरे गुनमे मन पागत है ।११।
प्रभु मो हिय आप सदा बसिये, जबलौं वसु कर्म नहीं नसिये
तबलो तुम ध्यान हिये वरतो, तबलो श्रुतचिंतन चित्तरतो १२
तबलों सत सङ्गति नित्त रहो, तबलो मम संयम चित्तगहो १३
जबलो नहिं नाशकरौं अरिको शिवनारि वरो समताधरिको
यह द्यो तबलो हमको जिनजी, हम जाचतु हैं इतनी सुनजी १४
(घत्ता)-श्रीवीर जिनेशा, नमतसुरेशा, नागनरेशा, भगति भरा।
'वृन्दावन' ध्यावै, विघन नशावै, वांछित पावै, शर्मवरा ।१५।

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा—श्रीसन्मति के जुगलपद, जो पूजै धरि प्रीत।
"वृन्दावन" सो चतुर नर, लहै मुक्ति नवनीत ।।

इत्याशीर्वाद

सुनिये जिनराज त्रिलोक धनी । तुममे जितने गुन हैं तितनी ।
कहि कौन सके मुखसों सबही । तिहि पूजतहो गहि अर्घ यही।।
ॐ ह्रीं श्रीवृषभादि वीरान्तेभ्यो चतुर्विंशतिजिनेभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्वपा०।

कवित्त

ऋषभ देवको आदि अन्त, श्रीवर्द्धमान जिनवर सुखकार ।
तिनके चरण कमलको पूजे, जो प्राणी गुणमाल उचार ।।
ताके पुत्रमित्र धन जोबन, सुख समाज गुन मिलै अपार ।
सुरपदभोग भोगि चक्री ह्वै, अनुक्रम लहै मोक्षपद सार ।२।

इत्याशीर्वादः

महा अर्घ

प्रभुजी अष्ट द्रव्यजु ल्यायो भावसो ।
प्रभु थांका हर्ष हर्ष गुण गाऊ महाराज ।।
यो मन हरण्यो प्रभु थांकी पूजाजी के कारणे ।
प्रभुजी थाकी तो पुजा भवि जीव जो करै ।।
ताका अशुभ कर्म कट जाय महाराज ।। यो मन० ।।
प्रभुजी इन्द्र धरणेन्द्रजी सब मिलि गाय ।
प्रभु का गुणा को पार न पायो महाराज ।। यो मन० ।।
प्रभुजी थे छो जी अनन्ताजी गुणवान ।
थाने तो सुमरया संकट परिहरे महाराज ।। यो मन० ।।
प्रभुजी थे छो जी साहिब तीनो लोक का ।
जिनराज मैं छूं निपट अज्ञानी महाराज ।। यो मन० ।।
प्रभुजी थाका तो रूप को निरखन कारणे ।
सुरपति रचिया छै नयन हजार महाराज ।। यो मन० ।।

प्रभुजी नरक निगोद मे भव भव मै रुल्यो ।
जिनराज सहिया छै दु'ख अपार महाराज ।। यो मन० ।।
प्रभुजी अब तो शरणोजी थारो मै लियो ।
किस विधि कर पार लगावो महाराज ।। यो मन० ।।
प्रभुजी म्हारो तो मनडो थामे घुल रह्यो ।
ज्यों चकरी विच रेशम डोरी महाराज ।। यो मन० ।।
प्रभुजी तीन लोक मे हैं जिन बिम्ब ।
कृत्रिम अकृत्रिम चैत्यालय पूजस्या महाराज ।। यो मन०।।
प्रभुजी जल चन्दन अक्षत पुष्प नैवेद्य ।
दीप धूप फल अर्घ चढ़ाऊ महाराज ।।
जिन चैत्यालय महाराज,सब चैत्यालय जिनराज ।।यो मन.।।
प्रभुजी अष्ट द्रव्य जु ल्यायो बनाय ।
पूजा रचाऊ श्री भगवान की महाराज ।। यो मन० ।।

अरिहंता छियाला सिद्धट्ठा सूर छत्तीसा ।
उवज्झाया पणवीसा साहूण होंति अडवीसा ।।

(निम्नलिखित अर्घ्यं बोलते समय जलधारा छोडते रहना चाहिये)

ॐ ह्री श्री अरहन्त सिद्ध आचार्य उपाध्याय सर्वसाधु-पचपरमेष्ठिभ्यो नम दर्शनविशुद्धचादि-षोडशकारणेभ्यो नम , उत्तम क्षमादि दशलक्षणधर्मेभ्यो नम , सम्यग्दर्शन-सम्यक्ज्ञान-सम्यक् चारित्रेभ्यो नम', भूत-भविष्यत-वर्तमानकालचतुर्विंशति-तीर्थङ्करेभ्यो नम , सिद्धक्षेत्रेभ्यो नम , अतिशयक्षेत्रेभ्यो नम , मद्य संवत् मध्ये (नगर) मासे पक्षे तिथौ समये पूजाया सकलकर्मक्षयार्थ अनर्घ्यपदप्राप्तये जलाद्यर्घ्यं महार्घ्य निर्वपामीति स्वाहा । भाव पूजा वन्दनास्तवसमेतं कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(यहां कायोत्सर्गपूर्वक ९ बार णमोकार मंत्रका जाप्य करना चाहिये)

कई मतानुसार उक्त महा अर्घ्य के स्थान पर पंचपरमेष्ठी जयमाला बोलते हैं वह निम्न प्रकार है। दोनों में कोई एक बोलना ही पर्याप्त है।

अथ पंचपरमेष्ठि जयमाला प्राकृत

मणुय–णाइन्द–सुरधरियछत्तत्तया, पंचकल्याण-सुक्खावली पत्तया ।। दंसणं णाणझाण अणंतबलं ते जिणा-दितु अम्ह वर मंगल ।।१।। जेहि झाणग्गिवाणेहि अइथड्डय, जम्मजरमरणणयरत्तयं दड्डयं । जेहि पत्त सिव सासयं ठाणयं ते मह्म दितु सिद्धा वरं णाणयं ।।२।। पंचहाचार-पंचग्गिसंसाहया, बारसंगाइ सुयजलहि अवगाहया । मोक्खलच्छी महन्ति महं ते सया, सूरिणो दितु मोक्ख गया संगया ।। ३ ।। घोरसंसार–भीमाडवी काणणे, तिक्ख–वियराल–णह–पाव–पंचाणणे । णट्ठ मग्गाण–जीवाण पहदेसया, वंदिमो ते उवज्झाय अम्हे सया ।। ४ ।। उग्गत–वयरण करणेहि झीणं गया । धम्मवरझाणसुक्केक्क झाण-गया । णिब्भर तवसिरीये समालिंगया, साहुओ ते महामोक्ख पहमग्गया ।।५।। एण थोत्तेण जो पंचगुरु वंदए गुरुयसंसार-घणवेल्लि सो छिंदए । लहिए सो सिद्धसुक्खाइ वरमाणणं, कुणई कम्मिंधणं पुञ्जपज्जालणं ।

अरिहा सिद्धाइरिया, उवज्झाया साधुपञ्चपरमेट्ठी ।
एयाण णमुक्कारो, भवे भवे मम सुह दितु ।।१।।

ॐ ह्रीं अर्हंतसिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-पंचपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं महार्घ्यं

(यहा नौ वार णमोकार का जाप करे)

इच्छामि भन्ते पंचगुरुभत्ति-काओसग्गो कओ । तस्सा लोचेओ अट्ठ-महापाडिहेरसजुत्ताण अरहन्ताण । अट्ठगुण-सम्पण्णाण उड्ढलोयम्मि पयट्ठियाण सिद्धाण । अट्ठपवयणमाउसजुत्ताण आइरियाण । आयारादिसुदणाणोवदेसयाण उवज्झायाणं । तिरयणगुणपालणरयाणं सव्वसाहूण । णिच्चकाल अच्चेमि पूजेमि वदामि णमस्सामि । दुक्ख-खओ कम्म-खओ बोहिलाओ सुगइगमण समाहिमरण जिणगुण-सपत्ति होउ मज्झ । (पुष्पाजंलि, इत्याशीर्वाद)

शांति पाठ भाषा

[शाति पाठ बोलते समय पुष्प क्षेपण करते रहना चाहिये]

शातिनाथ मुख शशि उनहारी शील गुणव्रत सयमधारी ।
लखन एकसौआठ बिराजै, निरखत नयन कमलदल लाजै ।।
पंचम चक्रवर्ति पदधारी, सोलम तीर्थङ्कर सुखकारी ।
इन्द्र नरेन्द्र पूज्य जिन नायक, नमो शातिहित शांतिविधायक
दिव्य विटप पुहुपन की वरषा, दुन्दुभि आसन वाणी सरसा ।
छत्र चमर भामण्डल भारी, ये तुव प्रातिहार्य मनहारी ।।३।।
शांति जिनेश शाति सुखदाई, जगतपूज्य पूजों शिरनाई ।
परम शाति दीजै हम सबको, पढ़ै तिन्हे पुनि चार संघको ।४।

बसन्ततिलका—पूजैं जिन्हे मुकुट हार किरीट लाके ।
इन्द्रादि देव अरु पूज्य पदाब्ज जाके ।।
सो शान्तिनाथ वरवंश जगत्प्रदीप ।
मेरे लिये करहिं शांति सदा अनूप ।।५।।

इन्द्रवज्रा।

संपूजको को प्रतिपालको को यतीनको औ यतिनायको को।
राजा-प्रजा राष्ट्र सुदेशको ले कीजे सुखी हे जिन शांतिको दे॥

स्रग्धरा—होवे सारी प्रजाको सुख बलयुत हो धर्मधारी नरेशा।
होवे वर्षा समैपे तिलभर न रहे व्याधियों का अदेशा॥
होवे चोरी न जारी सुसमय वर्ते हो न दुष्काल भारी।
सारे ही देश धारें जिनवर वृषको जो सदा सौख्यकारी॥

दोहा—घातिकर्म जिन नाश करि, पायो केवलराज।
शान्ति करो सब जगत में, वृषभादिक जिनराज॥

मंदाक्रांता—शास्त्रों का हो पठन सुखदा लाभ सत्संगती का।
सद्वृत्तो का सुजस कहके, दोष ढाकूँ सभी का॥
बोलूँ प्यारे वचन हितके, आपका रूप ध्याऊँ।
तौलों सेऊँ चरण जिनके, मोक्ष जौलों न पाऊँ॥

आर्य्या—तव पद मेरे हियमे, ममहिय तेरे पुनीत चरणो मे।
तबलौं लीन रहौं प्रभु, जबलौं पाया न मुक्ति पद मैने।१०।
अक्षर पद मात्रा से दूषित, जो कुछ कहा गया मुझसे।
क्षमा करो प्रभु सो सब, करुणा करि पुनि छुड़ाहु भवदुख से॥
हे जगबन्धु जिनेश्वर, पाऊँ तव चरण शरण बलिहारी।
मरण समाधि सुदुर्लभ, कर्मों का क्षय सुबोध सुखकारी।१२।

(परिपुष्पांजलि क्षेपण)

[यहा पर नौ वार णमोकार मंत्र जपना चाहिये] भजन

नाथ ! तेरी पूजा को फल पायो, मेरे यो निश्चय अब आयो

मेंढक कमल पाखुडी मुख ले, वीर जिनेश्वर धायो।
श्रेणिक गज के पगतल मुवो, तुरत स्वर्गपद पायो ॥नाथ.॥
मैनासुन्दरी शुभ मन सेती, सिद्धचक्र गुण गायो।
अपने पति को कोढ गमायो, गंधोदक फल पायो ॥नाथ.॥
अष्टापदसे भरत नरेश्वर, आदिनाथ मन लायो।
अष्टद्रव्यसे पूज्या प्रभुजी, अवधिज्ञान दरशायो ॥नाथ॥
अंजन से सब पापी तारे, मेरो मन हुलसायो।
महिमा मोटी नाथ तुम्हारी, मुक्तिपुरी सुख पायो ॥नाथ.॥
थकि थकि हारे सुर नर खगपति, आगम सीख जतायो।
'देवेन्द्रकीर्ति' गुरुज्ञान 'मनोहर', पूजा ज्ञान बतायो ॥नाथ.॥

स्तुति–तुम तरणतारण भवनिवारण, भविकमन आनन्दनो।
श्रीनाभिनन्दन जगतवन्दन, आदिनाथ निरञ्जनो ॥१॥
तुम आदिनाथ अनादि सेऊ, सेय पदपूजा करूँ।
कैलाश गिरि पर ऋषभ जिनवर, पदकमल हिरदै धरूँ ।२।
तुम अजितनाथ अजीत जीते, अष्टकर्म महाबली।
यह विरद सुनकर शरण आयो, कृपा कीज्यो नाथजी ॥३॥
तुम चन्द्रवदन सु चन्द्रलच्छन, चन्द्रपुरी परमेश्वरो।
महासेननन्दन, जगतवन्दन चन्द्रनाथ जिनेश्वरो ॥ ४ ॥
तुम शान्ति पांचकल्याण पूजो, शुद्ध मनवचकाय जू।
दुर्भिक्ष चोरी पापनाशन, विघन जाय पलाय जू ॥ ५ ॥
तुम बालब्रह्म विवेकसागर, भव्य कमल विकासनो।
श्री नेमिनाथ पवित्र दिनकर, पापतिमिर विनाशनो ॥ ६ ॥

जिन तजी राजुल राजकन्या, कामसेना वश करी ।
चारित्र रथ चढि भये दूलह, जाय शिवरमणी वरी ॥ ७ ॥
कंदर्प दर्प सुसर्पलच्छन, कमठ शठ निर्मद कियो ।
अश्वसेन नन्दन जगतवन्दन, सकलसङ्घ मङ्गल कियो ॥ ८ ॥
जिनधरी बालकपणे दीक्षा, कमठ मान विदारकै ।
श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र के पद, मैं नमों शिरधारकै ॥ ९ ॥
तुम कर्मघाता मोक्षदाता, दीन जानि दया करो ।
सिद्धार्थनन्दन जगतवन्दन, महावीर जिनेश्वरो ॥ १० ॥
छत्र तीन सोहैं सुरनर मोहैं, वीनती अब धारिये ।
करजोडि सेवक वीनवै प्रभु, आवागमन निवारिये ॥ ११ ॥
अब होउ भव भव स्वामि मेरे, मैं सदा सेवक रहौं ।
करजोड़ यो वरदान माँगूं, मोक्षफल जावत लहौं ॥ १२ ॥
जो एक माहीं एक राजै, एक माहिं अनेकनो ।
इक अनेक की नहीं संख्या, नमूं सिद्ध निरञ्जनो ॥ १३ ॥

॥ चौपाई ॥

मैं तुम चरण कमल गुण गाय, बहुविधि भक्ति करो मनलाय
जनम जनम प्रभु पाऊँ तोहि, यह सेवाफल दीजे मोहि ॥१४॥
कृपा तिहारी ऐसी होय, जामन मरन मिटावो मोय ।
बार बार मैं विनती करूं, तुम सेये भवसागर तरूं ॥१५॥
नाम लेत सब दुख मिट जाय, तुम दर्शन देख्यो प्रभु आय ।
तुम हो प्रभु देवन के देव, मैं तो करूं चरण तव सेव ॥१६॥
जिन पूजा तैं सब सुख होय, जिन पूजा सम और न कोय ।

जिन पूजा तैं स्वर्ग विमान, अनुक्रमतैं पावैं निर्वाण ।।१७।।
मैं आयो पूजन के काज, मेरो जन्म सफल भयो आज ।
पूजा करके नवाऊं शीश, मुझ अपराध क्षमहु जगदीश ।१८।
दोहा—सुख देना दुख मेटना, यही तुम्हारी बान ।
मो गरीब की बीनती, सुन लीज्यो भगवान ।।१९।।
पूजन करते देव की, आदि मध्य अवसान ।
सुरगनके सुख भोग कर, पावैं मोक्ष निदान ।।२०।।
जैसी महिमा तुम विषैं, और धरैं नहिं कोय ।
जो सूरज मे जोति है, नहिं तारागण सोय ।।२१।।
नाथ तिहारे नामतैं, अघ छिनमाहिं पलाय ।
ज्यो दिनकर परकाशतैं, अन्धकार विनशाय ।।२२।।
बहुत प्रशंसा क्या करू, मैं प्रभु बहुत अजान ।
पूजाविधि जानूं नही, शरण राखि भगवान ।।२३।।
इस अपार संसार मे, शरण नाहिं प्रभु कोय ।
यातैं तव पद भक्त को, भक्ति सहाई होय ।२४।इति।
विसर्जन-बिन जाने वा जानके, रही टूट जो कोय ।
तव प्रसाद ते परमगुरु, सो सब पूरण होय ।।१।।
पूजनविधि जानो नहीं, नहिं जानो आह्वान ।
और विसर्जन हू नहीं, क्षमा करहु भगवान ।।२।।
मन्त्रहीन धनहीन हूं, क्रियाहीन देवदेव ।
क्षमा करहु राखहु मुझे, देहु चरणकी सेव ।।३।।
ध्याये जो-जो देवगण, पूजे भक्ति प्रमाण ।

ते सब मेरे मन बसो, चौबीसो भगवान ॥४॥

इत्याशीर्वाद

आशिका लेना-श्री जिनवर की आशिका, लीजै शीश चढ़ाय।

भव-भव के पातक कटे, दुःख दूर हो जाय ।१।

शांतिपाठ संस्कृत

शांतिजिन शशि-निर्मल-वक्त्रं, शील-गुण-व्रत-सयम-पात्र ।
अष्टशतार्चिचत-लक्षण-गात्र,नौमि जिनोत्तमम्बुज-नेत्रं ।१।
पञ्चमभीप्सित-चक्रधराणां पूजितमिद्र-नरेन्द्र गणैश्च ।
शांतिकर गण-शांतिमभीप्सुः षोडश-तीर्थंकरं प्रणमामि ।२।
दिव्य-तरुः सुर-पुष्प-सुवृष्टिर्दुन्दुभिरासन-योजन-घोषौ ।
आतपवारण-चामर-युग्मे यस्य विभाति च मंडलतेजः ॥३॥
त जगदर्चित-शांति-जिनेन्द्र शांतिकर शिरसा प्रणमामि ।
सर्वगणाय तु यच्छतु शान्ति मह्यमरं पठते परमां च ॥४॥

येऽभ्यर्चिता मुकुट-कुण्डल-हार-रत्नैः,
शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुत-पाद-पद्माः ।
ते मे जिनाः प्रवर-वंश-जगत्प्रदीपा-
स्तीर्थङ्कराः सतत-शान्तिकरा भवन्तु ।५।

संपूजकाना प्रतिपालकानां यतीन्द्र-सामान्य-तपोधनाना ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राजः करोतु शांति भगवान् जिनेन्द्रः ।
क्षेमं सर्व-प्रजाना प्रभवतु बलवान् धार्मिको भूमिपालः,
काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवा व्याधयो यान्तु नाशम् ।
दुर्भिक्ष चौर-मारी क्षणमपि जगतां मा स्म भूज्जीवलोके,

जैनेन्द्रं धर्मचक्र प्रसरतु सततं सर्व-सौख्य-प्रदायि ॥७॥

प्रध्वस्त-घाति-कर्माण. केवलज्ञान–भास्कराः ।
कुर्वन्तु जगतः शान्ति वृषभाद्याः जिनेश्वराः ॥८॥

अथेष्ट प्रार्थना प्रथम करण चरण द्रव्य नम

शास्त्राभ्यासो जिनपति-नुतिः सगतिः सर्वदार्य्यैः,
सद्वृत्ताना गुण-गण-कथा दोषवादे च मौन ।
सर्वस्यापि प्रिय-हित-वचो भावना चात्मतत्त्वे ।
सम्पद्यन्ता मम भव भवे यावदेतेऽपवर्गः ॥ ६ ॥

तव पादौ मम हृदये मम हृदय तव पद-द्वये लीन ।
तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद्यावन्निर्वाण-सप्राप्तिः ॥१०॥

अक्खर-पयत्थ-हीण मत्ता-हीण च जं मए भणिय ।
त खमउ णाणदेव य मज्झ वि दुक्ख-क्खय दितु ॥११॥

दुक्ख-खओ कम्म-खओ समाहिमरण च बोहि-लाहो य ।
मम होउ जगत-बधव तव जिणवर चरण-सरणेण ॥१२॥

त्रिभुवन-गरो ! जिनेश्वर ! परमानन्दैक-कारण ! कुरुष्व ।
मयि किंकरेऽत्र करुणा यथा तथा जायते मुक्तिः ॥१३॥

निर्विण्णोहं नितरामर्हन् ! बहुदु खया भवस्थित्या ।
अपुनर्भवाय भवहर ! कुरु करुणामत्र मयि दीने ॥१४॥

उद्धर मां पतितमतो विषमाद्–भवकूपतः कृपां कृत्वा ।
अर्हन्नलमुद्धरणे त्वमसीति पुनः पुनर्वच्मि ॥ १५ ॥

त्वं कारुणिकः स्वामी त्वमेव शरण जिनेश ! तेनाहं ।
मोह-रिपु-दलित-मान फूत्करणं तव पुरः कुर्वे ॥१६॥

प्रामपतेरपि करणा, परेण केनाप्युपद्रुते पुंसि ।
जगता प्रभो ! न किं तव, जिन ! मयि खलु कर्मभिः प्रहृते ॥१७
अपहर मम जन्म दयां कृत्वा चेत्येक-वचसि वक्तव्य ।
तेनातिदग्ध इति मे देव ! बभूव प्रलापित्व ॥ १८ ॥
तव जिनवर ! चरणाब्ज-युग करुणामृत-शीतलं यावत् ।
संसार-ताप-तप्तः करोमि हृदि तावदेव सुखी ॥ १९ ॥
जगदेक शरण ! भगवन् नौमि श्रीपद्मनन्दित-गुणौघ !
किं बहुना कुरु करुणामत्र जने शरणमापन्ने ।२०। पुष्पांजलि।
अथ विसर्जन–ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि शास्त्रोक्तं न कृतं मया ।
तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वर ! ॥१॥
आह्वाननं नैव जानामि नैव जानामि पूजन ।
विसर्जनं न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ! ॥२॥
मन्त्रहीन क्रियाहीन द्रव्यहीन तथैव च ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥३॥ समाप्त ॥

श्री त्रय जिनेन्द्र पूजा

(श्री चन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ महावीर जिन पूजा)

[स्व० प० भगवतस्वरूप जैन 'भगवत', फरीहा]

छप्पय छन्द

श्री चन्द्र–प्रभ नमों, अष्टमे जो तीर्थङ्कर ।
नमो शान्ति जिननाथ, मदन चक्रीत्रय पद धर ॥
वर्द्धमान जिनराय, चरण को शीश नवाऊँ ।
भक्ति हृदय मे धारि, अष्ट विधि पूज रचाऊँ ॥

पूजों युग पद श्री जिनेन्द्र के मिटै क्षुधा दुख म्हारा ।अष्टम।
ॐ ह्रीश्रीचन्द्रप्रभशातिनाथमहावीरजिनेन्द्रेभ्य क्षुधारोगविनाशनाथनैवेद्यं।
घृत कपूर का दीप जलाकर, प्रभु चरणो मे धारू ।
मोह अन्ध सो अनन्त काल का लगा उसे निरवारू ।अष्टम।
ॐ ह्रीचन्द्रप्रभशान्तिनाथमहावीरजिनेन्द्रेभ्य मोहांधकारविनाशनायदीपं।
लेय दशागो धूप अग्नि मे, खेऊ प्रभु पद आगे ।
धूम घटा बहु जोर उठै मिस, अष्ट करम मम भागे ।अष्टम।
ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभशातिनाथमहावीरजिनेन्द्रेभ्य अष्टकर्मविनाशनाय धूप ।
रसना नेत्र लगै जो सुन्दर, गिरट इष्टफल भारी,
महामोक्ष फल प्राप्ति हेतु जिन, पद पूजों भरि थारी ।अष्टम।
ॐ ह्री चन्द्रप्रभशातिनाथमहावीरजिनेन्द्रेभ्य महामोक्षफलप्राप्तये फल

गीता छन्द

जलगध अक्षत पुष्प नेवज, दीप धूप सुफल मिला,
करि अर्घ पद सुअनर्घ्य पावन को लगाया सिलसिला ।
चन्द्रप्रभ पद जजो पूजो शान्तिनाथ जिनेश जी ।
सन्मति चरण की करो पूजा, मिटै भव की क्लेश जी ।।
ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभशातिनाथमहावीरजिनेन्द्रेभ्यऽनर्घ्यपदप्राप्तयेर्घ्यं ।

पञ्च कल्याणक अर्घ

(दुमिल छन्द—राधेश्याम रामायण)

वदि चैत्र पंचमी सुखकारी, चन्द्रप्रभ गर्भ पधारे है ।
भादो वदि सप्तमि शांतिनाथ, माता सु उदर मे धारे है ।
शुक्ला आषाढ की तिथि षष्ठी, श्री वीर गर्भ मे आये है ।
यह गर्भ कल्याणक शुभदिन है मन वच तन अर्घ चढ़ाये है ।
ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभशातिनाथमहावीरजिनेन्द्रेभ्य गर्भमगलप्राप्तायार्घ्यं ।

शुभ पौष वदी ग्यारस जन्मे, चन्द्रप्रभ चन्द्रनगर माही ।
है जेठ वदी चौदह शुभ दिन जिन शाति जन्म गजपुर ठाही ।
कुण्डलपुर मे श्री महावीर, सित चैत्र त्रयोदश दिन प्रगटे ।
पद पूजो अर्घ चढाय यहा, जिससे भवभव के अघ विघटे ।
ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभशातिनाथमहावीरजिनेन्द्रेभ्य जन्ममगलप्राप्तायाार्घ्यं ।
वदि पौष एकादशि तपधारा, श्री चन्द्रप्रभ वन मे जाके ।
चौदशि वदि जेठ की शातिनाथ तपधरा चक्रपद ठुकराके ।
महावीर लिया तप मगसिरकी, दशमी अधियारो दिन भाई ।
शुभ तप कल्याणक जिनवर के, मैं जजो चरण मगल दाई ।
ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभशातिनाथमहावीरजिनेन्द्रेभ्य तपमगलप्राप्तायाऽर्घ्यं ।
फागुन वदी सप्तमी को, चन्द्रप्रभ केवल बोध लहा,
शुभ पौष शुक्ल दशमी दिनको, श्रीशांतिनाथ घातिया दहा ।
वैशाख सुदी दशमी के दिन, महावीर हुए केवलज्ञानी,
शुभ ज्ञान कल्याणक पद पूजों ले अर्घ जजूं भव दुख हानी ।
ॐह्रीश्रीचन्द्रप्रभशान्तिनाथमहावीरजिनेन्द्रेभ्य केवलज्ञानप्राप्तायार्घ्यं ।
है सुदी सप्तमी फाल्गुण की, चद्रप्रभ शिवपद प्राप्त किया,
श्रीशांतिनाथजी जेठ बदी, चौदस वसु कर्म समाप्त किया ।
है कार्तिक मावस श्याम घटा, पावापुर से महावीर प्रभो,
निर्वाण पधारे मै पूजू पाऊँ तुम सम ही नाथ विभो ।
ॐ ह्री श्रीचन्द्रप्रभशातिनाथमहावीरजिनेन्द्रेभ्य मोक्षमंगल प्राप्तायार्घ्यं

जयमाला

दोहा—शान्तिनाथ चन्द्र प्रभो, महावीर भगवान ।
भक्ति हृदय मे धारिके, सगुण करूं गुणगान ।

[पद्धरि छन्द]

जय मात लक्ष्मणा के सपूत । चन्द्रप्रभ स्वामी गुण अकूत ।
है चन्द्र चिह्न शोभा अपार । जय श्वेत वरण तन दिपै सार ।
जय भवतन भोग विराग चित्त । तप धरो जाय वन हो विरक्त ।
घातिया करम चकचूर आप । पायो सुबोध केवल प्रताप ।
भवि जीवन को शिव पथ लगाय । सम्मेदाचल पर गये आय ।
कहा ललित कूट सुन्दर सुथान । पायो वहां से शिव पद महान
गुरु समतभद्र तुम ध्यान कीन । प्रगटी प्रतिमा शिवपिंडक्षीण ।
जिनधर्म ध्वजा जग लहलहाय । मैं नमों चरण वसु अंगनाय ।

॥ तर्ज मल्हार ॥

शान्तिनाथ पद पूजिये, शान्ति हेतु भवि लोय ।।टेर।।
नगर हस्तिनापुर महा ऐरा देवी मात ।
पिता नृपति विश्वसेन गृह, प्रगट भये शुभ गात ।शान्तिनाथ
कामदेव चक्री भये, छहों खण्ड का राज ।
नव निधि चौदह रतन के, धारी श्री जिनराज ।।शान्तिनाथ।।
सब विभूति को त्याग के, वन जा कीनो ध्यान ।
घाति घातिया ध्यान बल, पायो केवल-ज्ञान ।।शान्तिनाथ।।
पुन गये सम्मेदगिरि, कुन्द प्रभु शुभ कूट ।
योग निरोध स्वध्यान बल, सब कर्मों से छूट ।।शातिनाथ।।
सिद्ध निरजन जगपति, ध्यान करै जो कोय ।।
मिटे असाता क्षणिक मे, बहु सुख साता होय ।।शातिनाथ।।

[छन्द त्रोटक]

महावीर जिनराज नमस्ते । त्रिसला नन्दन वीर नमस्ते ।
बाल ब्रह्मचारी सु नमस्ते । कल्मष हारी धीर नमस्ते ।।
वीर धीर अति वीर नमस्ते । सन्मति गुण गम्भीर नमस्ते ।
मिथ्यामत परिहार नमस्ते । दया धर्म प्रचार नमस्ते ।।
शिवमारग दर्शाय नमस्ते । भवि जीवन सुखदाय नमस्ते ।
भव भव भजनकार नमस्ते । सकट मोचन हार नमस्ते ।।
अधम उधारन हार नमस्ते । सुख अनन्त दातार नमस्ते ।
गुण अपार सुखकार नमस्ते । भगवन भवदधि पार नमस्ते ।

घत्ता

जिनवर गुण गाथा, जग विख्याता, सुर गुरु कथनी न पार लहे
'भगवत्' बुद्धि थोरी शरण सु तोरी, भक्ति सुफल भवि पार चहे

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभ-शान्तिनाथ-महावीर-जिनेन्द्रेभ्य महार्घ्यं ।

(शार्दूल विक्रीडित छन्द)

जो पूजै जिनराज नित्य चित सो, वहु भक्ति उर धारिके ।
वह पावे सब रिद्धि सिद्धि निशदिन, आपत्ति सब टारिके ।।
पावै पद सु नरेन्द्र इन्द्र सुखदा, पावें अतुल सम्पदा ।
अन्तिम होय अनन्त शिव सुख घनो, करिनाश भव आपदा ।।

इत्याशीर्वाद । पुष्पांजलिं क्षिपेत्

श्री बाहुबली स्वामी की पूजा

दोहा—कर्म अरिगण जीति के, दर्शायो शिवपथ ।
प्रथम सिद्धपथ जिन लियो, भोगभूमि के अन्त ।।

नव ग्रहो की जापे

ॐ ह्रीं क्लो श्री श्री सूर्यग्रह अरिष्ट निवारक श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः शान्ति कुरु कुरु स्वाहा ॥१॥ ७७०० जाप्य ।

ॐ ह्रीं क्रौ श्री क्लीं चन्द्रारिष्ट निवारक श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय नम शान्ति कुरु कुरु स्वाहा ॥२॥ ११००० जाप्य ।

ॐ श्रा ह्रीं क्रौ श्री भौमारिष्ट निवारक पद्मप्रभजिनेन्द्राय नम शान्ति कुरु कुरु स्वाहा ॥३॥ १०००० जाप्य ।

ॐ ह्रीं क्रो आं श्री बुधग्रहारिष्ट निवारक श्री विमल अनन्त धर्म शान्ति कुन्थु अर नमि वर्द्धमान अष्ट जिनेन्द्रेभ्यो नम शान्ति कुरु कुरु स्वाहा ॥४॥ ८००० जाप्य ।

ॐ क्रौं ह्रीं श्री क्लीं ऐं गुरु अरिष्ट निवारक श्री ऋषभ अजित सभव अभिनन्दन सुमति सुपार्श्व शीतल श्रेयास अष्ट जिनेन्द्रेभ्यो नम शान्ति कुरु कुरु स्वाहा ॥५॥ १९००० जाप्य ।

ॐ ह्रीं श्री शुक्रग्रह अरिष्ट निवारक श्री पुष्पदन्त जिनेन्द्राय नम· शान्ति कुरु कुरु स्वाहा ॥६॥ ११००० जाप्य ।

ॐ ह्रीं क्रौं श्री शनिग्रह अरिष्ट निवारक श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय नम शान्ति कुरु कुरु स्वाहा ॥७॥ २३००० जाप्य ।

ॐ ह्रीं श्री क्लीं ह्रीं राहु अरिष्ट निवारक श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय नम शान्ति कुरु कुरु स्वाहा ॥८॥ १८००० जाप्य ।

ॐ ह्रीं श्री क्लीं ऐं केतु अरिष्ट निवारक मल्लिनाथ जिनेन्द्राय नम शान्ति कुरु कुरु स्वाहा ॥९॥ ७००० जाप्य ।

श्री अनन्त चतुर्दशी मन्त्र

ॐह्रीं अं ह हमी अनन्त केवली भगवान अनन्तदान-लाभ-भोगोपभोगवीर्याभिवृद्धि कुरु कुरु स्वाहा ।

चौथी आरती श्री उवज्झाया,
दर्शन करता पाप पलाया ।। यह० ।।
पांचवीं आरतो साधु तुम्हारी,
कुमति विनाशन शिव अधिकारी ।यह०।
छट्ठी ग्यारह प्रतिमा धारी,
श्रावक बन्दौं आनन्दकारी ।। यह० ।।
सातवीं आरतो श्रीजिनवाणी,
"द्यानत" स्वर्ग मुक्ति सुखदानी ।।यह० ।

भगवान पार्श्वनाथ की स्तुति

तुम से लागी लगन, ले लो अपनी शरण ।
पारस प्यारा, मेटो मेटो जी, सकट हमारा ।।टेर।।
निशदिन तुमको जपूं, पर से नेहा तजूं ।
जीवन सारा, तेरे चरणो मे बीते हमारा ।।
अश्वसेन के राजदुलारे, वामा देवी के सुत प्राण प्यारे ।
सबसे नेहा तोड़ा, जगसे, मु ह को मोड़ा, सयम धारा ।१।मैंटो।
इन्द्र और धरणेन्द्र भी आये, देवी पद्मावती मंगल गाये ।
आशा पूरो सदा, दुख नही पावे कदा, सेवक थारा ।२।मेटो.।
जग के दुःख की तो परवाह नही है,स्वर्ग सुखकी भी चाह नहीं है
मेटो जामन-मरण, होवे ऐसा यतन, पारस प्यारा ।३।मेटो ।
लाखों बार तुम्हे शीश नवाऊं, जग के नाथ तुम्हें कैसे पाऊ ।।
'पंकज' व्याकुल भया, दर्शन बिन ये जिया, लागे खारा ।४।मे.

—※ समाप्त ※—



स्तोत्र पाठ संग्रह

णमो अरिहंताण, णमो सिद्धाण, णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणम् ।

चत्तारि मंगलं– अरिहंता मंगलं, सिद्धा मगलं, साहूमंगल, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगल ।। चत्तारि लोगुत्तमा—अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहूलोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरण पव्वज्जामि—अरिहंते सरण पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहूसरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्म सरण पव्वज्जामि ।।

दर्शन पाठ संस्कृत

दर्शन देवदेवस्य दर्शन पापनाशम् । दर्शन स्वर्गसोपानं दर्शनं मोक्षसाधनम् ।। १ ।। दर्शनेन जिनेन्द्राणां साधूना वन्दनेन च । न चिरं तिष्ठते पाप छिद्रहस्ते यथोदकम् ।।२।। वीतरागमुख दृष्ट्वा पद्मरागसमप्रभम् । जन्मजन्मकृत पाप दर्शनेन विनश्यति ।। ३ ।। दर्शनं जिनसूर्यस्य ससारध्वान्त-नाशनम् । बोधन चितपद्मस्य समस्तार्थप्रकाशनम् ।। ४ ।।

दर्शनं जिनचन्द्रस्य सद्धर्मामृतवर्षणं । जन्मदाहविनाशाय वर्धनं सुखवारिधे ।। ५ ।। जीवादितत्त्वप्रतिपादकाय सम्यक्त्व-मुख्याष्टगुणार्णवाय । प्रशांतरूपाय दिगम्बराय देवाधिदेवाय नमो जिनाय ।। ६ ।। चिदानन्दैकरूपाय जिनाय परमात्मने, परमात्मप्रकाशाय नित्यं सिद्धात्मने नमः ।। ७ ।। अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम । तस्मात् कारुण्यभावेन रक्ष २ जिनेश्वर ।।८।। न हि त्राता न हि त्राता न हि त्राता जगत्त्रये । वीतरागात्परो देवो न भूतो न भविष्यति ।।९।। जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्दिनेदिने । सदामेऽस्तु सदा-मेऽस्तु सदामेऽस्तु भवे भवे ।।१०।। जिनधर्मविनिर्मुक्तो मा भवेचक्रवर्त्यपि । स्याच्चेटोऽपिदरिद्रोऽपि जिनधर्मानुवासितः ।।११।। जन्म जन्म कृतं पापं जन्मकोटिमुपार्जितम् । जन्म-मृत्यु जरातंकं हन्यते जिनदर्शनात् ।।१२।।

विनती बुधजनजी कृत

प्रभु पतित पावन मैं अपावन चरण आयो शरणजी ।
यो बिरद आप निहार स्वामी मेट जामन मरणजी ।।
तुम ना पिछान्या आन मान्या देव विविध प्रकारजी ।
या बुद्धिसेती निज न जान्यो भ्रम गिन्यो हितकारजी ।।
भव विकट वन में कर्म वैरी ज्ञान धन मेरो हरयो ।
तब इष्ट भूल्यो भ्रष्ट होय अनिष्टगति धरतो फिरयो ।।
धन घडी यो धन दिवस योही धन जनम मेरो भयो ।
अब भाग मेरो उदय आयो दरश प्रभु को लखलयो ।।

छवि वीतरागी नग्न मुद्रा, दृष्टि नाशा पै धरै।
वसु प्रातिहार्य अनन्त गुण युत कोटि रवि छवि को हरै।।
मिट गयो तिमिर मिथ्यात्व मेरो, उदय रवि आतम भयो।
मो उर हरष ऐसो भयो मनु रङ्क चिन्तामणि लयो।।
मैं हाथ जोडि नवाय मस्तक बीनऊं तव चरणजी।
सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपति जिन सुनहु तारन तरनजी।।
याचूं नहीं सुरवास पुनि नर राज परिजन साथजी।
'बुध' याचहूं तुम भक्ति भव भव दीजिये शिवनाथजी।।

दर्शन पाठ (पं० दौलतरामजी कृत)

दोहा—सकल ज्ञेय ज्ञायक तदपि, निजानन्द-रस-लीन।
सो जिनेन्द्र जयवन्त नित, अरि-रज-रहस-विहीन।।

पद्धरि छन्द

जय वीतराग विज्ञान पूर, जय मोह-तिमिर को हरन सूर।
जय ज्ञान अनन्तानन्त धार, दृग-सुख-वीरज-मण्डित अपार।
जय परम शान्ति मुद्रा समेत, भवि-जनको निज अनुभूति देत।
भवि-भागनवश जोगे वशाय, तुम ध्वनि ह्वै सुनि विभ्रम नशाय।
तुम गुण चिन्तत निज-पर-विवेक, प्रकटै विघटै आपद अनेक।
तुम जगभूषण दूषण-विमुक्त, सब महिमायुक्त विकल्प-मुक्त।
अविरुद्ध शुद्ध चेतन स्वरूप, परमात्म परम पावन अनूप।
शुभ अशुभ विभाव अभाव कीन, स्वाभाविक परणतिमय अछीन
अष्टादश दोष विमुक्त धीर, स्वचतुष्टय मय राजत गंभीर।

मुनि गणधरादि सेवत महन्त, नव केवल-लब्धि-रमा धरन्त।
तुम शासन सेय अमेय जीव, शिव गये जाहिं जैहैं सदीव।
भवसागर मे दुख क्षार वारि, तारण को और न आप टारि
यह लखि निज दुख-गदहरण काज,तुमही निमित्तकारण इलाज
जाने तातैं मै शरण आय, उचरो निज दुख जो चिर लहाय।
मै भ्रम्यो अपनपो विसरि आप, अपनाये विधि फल पुण्यपाप,
निजको परको करता पिछान, परमे अनिष्टता इष्ट ठान।६
आकुलित भयो अज्ञान धारि, ज्यो मृग मृग-तृष्णा जानिवारि
तन-परणति मे आपो चितार,कबहू न अनुभवो स्व-पदसार
तुम को जाने बिन जो कलेश,पाये सो तुम जानत जिनेश।
पशु नारक-नर-सुर-गति मझार,भव धर२ मरचो अनन्तबार।
अब काल-लब्धि बलतै दयालु तुम दर्शन पाय भयो खुशाल।
मन शात भयो मिटि सकलद्वन्द्व,चाख्यो स्वातमरस दुख निकंद
तातै अब ऐसी करहु नाथ, बिछुडे न कभी तुम चरण साथ।
तुम गुणगण को ना छेव देव, जगतारण को तुम विरद एव
आतम के अहित विषय कषाय,इनमे मेरी परिणति न जाय।
मै रहूँ आपमे आप लीन, सो करो होउं जो निजाधीन।।
मेरे न चाह कछु और ईश, रत्नत्रय निधि दीजे मुनीश।
मुझ कारज के कारणसु आप, शिव करहु हरहु मम मोह ताप
शशि शातिकरण तपहरण हेत,स्वयमेव तथा तुम कुशल देत
पीवत पियूष ज्यो रोग जाय त्यो तुम अनुभव ते भव नशाय

त्रिभुवन तिहुंकाल मझार कोय, नहिं तुमबिन निजसुखदाय होय
मो उर यह निश्चय भयो आज,दुख जलधि उबारन तुम जहाज

दोहा—तुम गुणगण-मणि गणपती, गणत न पावहिं पार ।
'दौल' स्वल्पमति किम कहे, नमूं त्रियोग सम्हार ।।

विनती भूधरदासजी कृत

अहो जगत गुरु एक, सुनियो अरज हमारी ।
तुम हो दीन दयालु, मैं दुखिया ससारी ।।
इस भव वनमे वादि, काल अनादि गमायो ।
भ्रमत चतुर्गति माहिं, सुख नहीं दुख बहु पायो ।
कर्म महारिपु जोर, एक न कान करें जी ।
मन मानो दुख देय, काहूं सो नाहीं डरें जी ।।
कबहूं इतर निगोद, कबहूं नरक दिखावे ।
सूर नर पशु गति माहिं, बहु विधि नाच नचावें ।
प्रभु इनको परसंग, भव भव माहिं बुरो जी ।
जो दुख देखे देव ! तुम से नाहिं दुरोजी ।।
एक जनम की बात, कहि न सकों सुन स्वामी ।
तुम अनन्त परजाय, जानत अन्तरजामी ।
मैं तो एक अनाथ, ये मिलि दुष्ट घनेरे ।
कियो बहुत बेहाल, सुनियो साहिब मेरे ।
ज्ञान महानिधि लूट, रङ्क निबल कर डारयो ।
इन ही तुम मुझ माहिं, हे जिन ! अन्तर पारयो ।।

पाप पुण्य मिल दोय, पायनि बेडी डारी ।
तन कारागृह माँहि, मोहि दियो दुख भारी ।
इनको नेक बिगार, मैं कछु नाँहि कियो जी ।
बिन कारण जग बन्धु ! बहुविधि बैर लियो जी ॥
अब आयो तुम पास, सुनके सुयश तिहारो ।
नीति निपुण महाराज, कीजे न्याय हमारो ॥
दुष्टन देहु निकार साधुन को रख लीजे ।
बिनवै "भूधरदास", हे प्रभु ढील न कीजे ॥

आलोचना पाठ

दोहा—वन्दों पाँचों परमगुरु, चौबीसों जिनराज ।
करूं शुद्ध आलोचना, शुद्धिकरण के काज ॥१॥

सखी छन्द चौदह मात्रा

सुनिये जिन अरज हमारी, हम दोष किये अति भारी ।
तिनकी अब निवृत्ति काजा, तुम शरण लही जिनराजा ।२।
इक बे ते चउ इन्द्री वा, मनरहित सहित जे जीवा ।
तिनकी नहिं करुणा धारी, निरदई ह्वै घात विचारी ।३।
समरंभ समारंभ आरंभ, मनवचतन कीने प्रारंभ ।
कृत कारित मोदन करिके, क्रोधादि चतुष्टय धरिकै ।४।
शत आठ जु इमि भेदनतैं, अघ कीने पर छेदनते ।
तिनकी कहुं कोलौं कहानी, तुम जानत केवलज्ञानी ।५।

विपरीत एकांत विनयके, संशय अज्ञान कुनय के ।
वश होय घोर अघ कीने, वचतैं नहिं जात कहीने ।६।
कुगुरुनकी सेवा कीनी, केवल अदयाकरि भीनी ।
याविधि मिथ्यात्व भ्रमायो, चहुंगति मधि दोष उपायो ।७।
हिंसा पुनि झूठ जु चोरी, परवनितासौं दृग जोरी ।
आरम्भ परिग्रह भीनो, पनपाप जु या विधि कीनो ।८।
सपरस रसना घ्राननको, दृग कान विषय सेवनको ।
बसुकर्म किये मनमानी, कछु न्याय अन्याय न जानी ।९।
फल पञ्च उदंबर खाये, मधु मास मद्य चितचाहे ।
नहिं अष्टमूलगुणधारी, विषयन सेये दुखकारी ।१०।
दुइबीस अभख जिनगाये, सो भी निशदिन भुञ्जाये ।
कछु भेदाभेद न पायो, ज्यौं त्यौं करि उदर भरायो ।११।
अनन्तानुबन्धी जानो, प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो ।
संज्वलन चौकरी गुनिये, सब भेद जु षोडश मुनिये ।१२।
परिहास अरति रति शोग, भय ग्लानि तिवेद संयोग ।
पन-बीस जु भेद भये इम, इनके वश पाप किये हम ।१३।
निद्रावश शयन कराई, सुपने मधि दोष लगाई ।
फिर जाग विषयवन धायो, नानाविधि विषफल खायो १४।
आहार निहार विहारा, इनमे नहिं जतन विचारा ।
बिन देखी धरी उठाई, बिन शोधी वस्तु जु खाई ।१५।
तब ही परमाद सतायो, बहुविधि विकल्प उपजायो ।
कुछ सुधि बुधि नाहिं रही है, मित्यामति छाय गई है १६।

मरयादा तुमढिग लीनी, ताहू मे दोष जु कीनी ।
भिन भिन अब कैसे कहिये, तुम ज्ञानविषै सब पइये ।१७।
हा हा ! मैं दुठ अपराधी, त्रसजीवनराशि विराधी ।
थावरकी जतन न कीनी, उर मे करुना नहिं लीनी ।१८।
पृथिवी बहु खोद कराई महलादिक जागा चिनाई ।
पुनि बिन गाल्यो जल ढोल्यो, पखातैं पवन बिलोल्यो ।१९।
हा हा ! मैं अदयाचारी, बहुहरितकाय जु विदारी ।
तामधि जीवन के खदा, हम खाये धरि आनन्दा ।२०।
हा हा ! परमाद बसाई, बिन देखे अगनि जलाई ।
तामधि जे जीव जु आये, ते हू परलोक सिधाये ।२१।
बीध्यो अन रात पिसायो, ईंधन बिन सोधि जलायो ।
झाड़ू ले जागा बुहारी, चिउटी आदिक जीव विदारी ।२२।
जल छानि जिवानी कीनी, सो हू पुनि डारि जु दीनी ।
नहिं जलथानक पहुंचाई, किरिया बिन पाप उपाई ।२३।
जल मल मोरिन गिरवायो, कृमिकुल बहु घात करायो ।
नदियन बिच चीर धुवाये, कोसन के जीव मराये ।२४।
अन्नादिक शोध कराई, ता मे जु जीव निसराई ।
तिनका नहिं जतन कराया, गलियारे धूप डराया ।२५।
पुनि द्रव्य कमावन काजे, बहु आरम्भ हिंसा साजे ।
किये तिसनावश अघ भारी, करुना नहिं रंच बिचारी ।२६।
इत्यादिक पाप अनन्ता, हम कीने श्री भगवन्ता ।
संतति चिरकाल उपाई, बानी तैं कहिय न जाई ।२७।

ताको जु उदय अब आयो, नानाविधि मोहि सतायो ।
फल भुञ्जत जिय दुख पावे, वचतें कैसे करि गावे ।२८।
तुम जानत केवलज्ञानी, दुख दूर करो शिवथानी ।
हम तो तुम शरण लही है, जिन तारन विरद सही है ।२६।
जो गावपति इक होवे, सो भी दुखिया दुख खोवे ।
तुम तीन भवन के स्वामी, दुख मेटहु अन्तरजामी ।३०।
द्रोपदि को चीर बढायो, सीताप्रति कमल रचायो ।
अजन से किये अकामी दुख मेटहु अन्तरजामी ।३१।
मेरे अवगुण चित न चितारो, प्रभु अपनो विरद निहारो ।
सब दोषरहित कर स्वामी, दुख मेटहु अन्तरजामी ।३२।
इन्द्रादिक पदवी न चाहूँ, विषयन मे नाहि लुभाऊं ।
रागादिक दोष हरीजे, परमातम निज पद दीजे ।३३।
दोहा—दोषरहित जिनदेवजी, निज पद दीज्यो मोय ।
सब जीवन के सुख बढे, आनन्द मङ्गल होय ।।३४।।
अनुभव माणिक पारखी, जौहरी आप जिनद ।।
ये ही वर मोहि दीजिये, चरण शरण आनन्द ।३५।

भाषा सामायिक पाठ

अथ प्रथम प्रतिक्रमण कर्म

काल अनन्त भ्रम्यो जग मे सहिया दुख भारी । जन्म-मरण नित किये पाप को ह्वै अधिकारी ।। कोटि भवातर माहि मिलन दुर्लभ सामायिक । धन्य आज मैं भयो योग मिलियो सुखदायक ।१। हे सर्वज्ञ जिनेश, किये जे पाप जु मैं अब । ते सब मनवचकाय योग की गुप्ति बिना लभ ।।

आप समीप हजूरमाँहि मै खड़ो २ सब । दोष कहूँ सो सुनो करो नठ दु:ख देहिं जब ।३। क्रोध मान मद लोभ मोह मायावशि प्रानी । दुःख सहित जे किये दया तिनकी नहिं आनी ।। विना प्रयोजन एकेन्द्रिय बि ति चउ पचेन्द्रिय । प्राप प्रसादहि मिटै दोष जो लग्यो मोहि जिय ।३। आपस मे इक ठोर थापि कर जे दुख दीने । पेलि दिये पग तलें दाबकरि प्राण हरीने । आप जगत के जीव जिते तिन सबके नायक । अरज करौं मैं सुनो दोष मेटो सुखदायक ।४। अंजन आदिक चोर महा घनघोर पापमय । तिनके जे अपराव भये ते क्षमा २ किय । मेरे जे अब दोष भये ते क्षमो दयानिधि । यह पडिकोणो कियो आदि षटकर्म माँहि विधि ।५।

अथ द्वितीय प्रत्याख्यान कर्म

जो प्रमादवशि होय विराधे जीव घनेरे । तिनको जो अपराध भयो मेरे अघ ढेरे ।। सो सब झूठो होउ जगतपति के परसादे । जा प्रसादते मिले सर्व सुख दुख न लाधे ।६। मै पापी निर्लज्ज दयाकरि हीन महाशठ । किये पाप अति घोर पापमति होय चित्त दुठ ।। निंदूं हूँ मै बार बार निज जियको गरहूँ । सब विध धर्म उपाय पाय फिर पापहि करहूँ ।। ७ ।। दुर्लभ है नरजन्म तथा श्रावककुल भारी । सतसगति संयोग धर्म जिन श्रद्धाधारी ।। जिनवचनामृतधार समावर्ते जिनवानी । तोहू जीव संहारे धिक धिक धिक हम

जानी ।।८।। इन्द्रियलम्पट होय खोय जिन ज्ञान जमा सब। अज्ञानी जिम करै तिस विधि हिंसक ह्वै अब ।। गमनागमन करन्तो जीव विराधे भोले। ते सब दोष किये निंदू मन वच तन तोले ।। ९ ।। आलोचनविधि थकी दोष लागे जु घनेरे। ते सब दोष विनाश होउ तुमते जिन मेरे ।। बार बार इस भांति मोह मद दोष कुटिलता। ईर्षादिकतैं भये निंदिये जे भयभीता ।।१०।।

अथ तृतीय सामायिक कर्म

सब जीवनमे मेरे समता भाव जग्यो है। सब जिय मो सम समता राखो भाव लग्यो है ।। आर्त्त रौद्र द्वय ध्यान छांडि करिहूँ सामायिक। संयम मो कब शुद्ध होय यह भाव बधायक ।।११।। पृथ्वी जल अरु अग्नि वायु चउ काय वनस्पति। पंचहि थावरमांहि तथा त्रस जीव बसै जित ।। बे इन्द्रिय तिय चउ पचेन्द्रियमांहि जीव सब। तिनतैं क्षमा कराऊँ मुझ पर क्षमा करो अब ।।१२।। इस अवसर मे मेरे सब सम कचन अरु तृण। महल मसान समान शत्रु अरु मित्र ही सम गण। जामन मरन समान जानि हम समता कीनी। सामायिकका काल जितै यह भाव नवीनी ।।१२।। मेरो है इक आतम तामै ममतजु कीनों। और सबै मम भिन्न जानि समतारस भीनो। मात-पिता-सुत-बन्धु मित्रतिय आदि सबै यह

मोतैं न्यारे जानि जथारथरूप करचो गह ।१४। मैं अनादि जगजालमांहि फसि रूप न जाण्यो। एकेन्द्रिय दे आदि जन्तु को प्राण हणाण्यो। ते अब जीवसमूह सुनो मेरी यह अरजी। भवभव को अपराध क्षमा कीज्यो करि मरजी ।१५।

अथ चतुर्थ स्तवन कर्म

नमूं ऋषभ जिनदेव अजित जिन जीत कर्मको। संभव भव-दुखहरण करण अभिनन्द शर्मको ।। सुमति सुमतिदातार तार भवसिंधु पार कर। पद्मप्रभ पद्माभ भानि भवभीति प्रीतिधर ।।१६।। श्रीसुपार्श्वकृत पाप नाश भव जास शुद्ध कर। श्रीचन्द्रप्रभ चन्द्रकांति सम देहकांति धर ।। पुष्पदन्त दमि दोषकोष भवि पोष रोषहर। शीतल शीतल करन हरन भवताप दोषहर ।। १७ ।। श्रेयरूप जिन श्रेय ध्येय नित सेय भव्यजन। वासुपूज्य शतपूज्य वासवादिक भवभय हन। विमल विमल-मति-देन अंतगत हैं अनन्त जिन। धर्म शर्म शिवकरन शांतिजिन शांतिविधायिन ।१८। कुन्थु कुन्थ सुखजीवपाल अरनाथ जालहर। मल्लि मल्लसम मोहमल्ल मारनप्रचारधर मुनिसुव्रत व्रतकरण नमत सुरसंघहि नमि जिन। नेमिनाथ जिन नेमि धर्मरथ मांहि ज्ञान धन ।१९। पार्श्वनाथ जिन पार्श्व उपलसम मोक्षरमापति। वर्द्धमान जिन नमूं वमूं भवदुःख कर्मकृत। याविध मैं जिनसंघरूप चउवीस सल्य-धर। स्तवूं नमूं हूं बार बार बन्दौं शिवसुखकर ।२०।

अथ पञ्चम वन्दना कर्म

वन्दूं मै जिनवर धीर महावीर सुसन्मति । वर्द्धमान अतिवीर वन्दि हौं मनवचतनकृत ।। त्रिशलातनुज महेश धीश विद्यापति वन्दूं । बन्दूं नितप्रति कनकरूपतनु पाप निकन्दूं ।२१। सिद्धारथ नृपनद द्वन्द्व दुखदोष मिटावन । दुरित दवानल ज्वलित ज्वाल जगजीव उधारन ।। कुण्डलपुर करि जन्म जगतजिय आनन्दकारन । वर्ष बहत्तरि आयु पाय सबही दुख टारन ।२२। सप्त हस्त तनु तुंग भग कृत जन्म मरण भय । वालब्रह्ममय ज्ञेय हेय आदेय ज्ञानमय ।। दे उपदेश उधारि तारि भवसिंधु जीवघन । आप बसे शिवमाहि ताहि बन्दौं मनवचतन । २३ । जाके बन्दनथकी दोष दुख दूरहि जावै । जाके बन्दनथकी मुक्ति तिय सन्मुख आवै ।। जाके बन्दनथकी बन्ध होवे सुरगनके । ऐसे वीर जिनेश वंदि हूँ पदयुग तिनके । २४ । सामायिक षट्कर्ममाहिं बन्दन यह पञ्चम । बन्दे वीरजिनेन्द्र इन्द्रशतवंद्य वद्य मम ।। जन्म मरण भय हरो करो अघ शात शातिमय । मैं अघकोश सुपोष दोषको दोष विनाशय ।२५।

अथ षष्ठम कायोत्सर्ग कर्म

कायोत्सर्ग विधान करूं अन्तिम सुखदाई । काय त्यजनमय होय काय सबका दुखदाई । पूरब दक्षिण नमूं दिशा पश्चिम उत्तर मैं । जिनगृह बन्दन करू हरूं भव पापतिमिर

मै । २६ । शिरोनती मै करू नमू मस्तक करि धरिकै । आवर्त्तादिक क्रिया करू मनवचमदहरिकै ।। तीन लोक जिनभवनमांहि जिन हैं जु अकृत्रिम । कृत्रिम है द्वय अर्द्ध-द्वीपमाही बन्दौं जिन । २७ । आठ कोडि पर छप्पन लाख जु सहस सत्याणू । चारि शतक परि असी एक जिनमन्दिर जाणू ।। व्यंतर ज्योतिषमांहि सख्य रहिते जिनमन्दिर । जिनगृह बन्दन करू हरहु मम पाप सङ्कुकर । २८ । सामायिक सम नांहि और कोउ वैर मिटायक । सामायिक सम नांहि और कोउ मैत्रीदायक । श्रावक अणुव्रत आदि अन्त सप्तम गुणथानक । यह आवश्यक किये होय निश्चय दुखहानक । २९ । जे भवि आतम काज करण उद्यम के धारी । ते सब काज विहाय करो सामायिक सारी ।। राग दोष मद मोह क्रोध लोभादिक जे सब । बुध 'महाचन्द्र' विलाय जाय तातै कीज्यो अब । ३० ।

इति सामायिक भाषा पाठ समाप्त



निर्वाण काण्ड (भाषा)

दोहा—वीतराग बदौं सदा, भाव सहित सिर नाय ।
कहूँ काड निर्वाण की, भाषा सुगम बनाय । १ ।

चौपई ५ मात्रा

अष्टापद आदीसुरस्वामि, वासुपूज्य चपापुरि नामि ।
नेमिनाथस्वामी गिरनार । वदौं भावभगति उरधार । २ ।

चरम तीर्थङ्कर चरम शरीर, पावापुरि स्वामी महावीर ॥
शिखरसमेद जिनेसुर बीस, भावसहित बन्दौं निशदीस ।३
वरदतराय रु इन्द्र मुनिंद, सायरदत्त आदि गुणवृन्द ॥ नगर-
तारवर मुनि अठकोडि, वदौं भावसहित करजोडि ॥४॥ श्री
गिरनार शिखर विख्यात, कोडि बहत्तर अरु सौ सात ।
शंबुप्रद्युम्नकुमर द्वै भाय, अनिरुद्ध आदि नमूं तसु पाय ।५।
रामचंद्र के सुत द्वै वीर, लाडनरिन्द आदि गुणधीर । पाच
कोडि मुनि मुक्ति-मझार, पावागिरि वन्दौं निरधार ॥६॥
पांडव तीन द्राविडराजान, आठकोडि मुनि मुकति पयान ।
श्रीशत्रुञ्जयगिरि के शीष, भावसहित वदौं निशदीश ॥७॥
जे बलभद्र मुकति मे गये, आठकोडि मुनि औरहु भये । श्री
गजपंथशिखर सुविशाल, तिनके चरण नमूं तिहुकाल ॥८॥
रामहणुसुग्रीव सुडौल, गवयगवाख्य नील महानील । कोडि
निन्याणवे मुक्ति पयान, तुङ्गीगिरि वदौं धरि ध्यान ॥९॥
नङ्ग अनङ्ग कुमार सुजान, पाचकोडि अरु अर्ध प्रमान । मुक्ति
गये सोनागिर शीष, ते वदौं त्रिभुवनपति ईश ॥१०॥
रावणके सुत आदिकुमार, मुक्ति गये रेवातट सार । कोटि
पञ्च अरु लाख पचास, ते बदौं धरि परम हुलास ॥११॥
रेवा नदी सिद्धवर कूट, पश्चिम दिशा देह जह छूट । द्वै
चक्री दश कामकुमार, आठकोडि वदौं भव पार ॥१२॥
बडवानी बडनगर सुचङ्ग, दक्षिण दिशि गिरिचूल उतङ्ग ।
इन्द्रजीत अरु कुम्भ जु कर्ण, ते बदौं भवसागर तर्ण ॥१३॥

सुवरण भद्र आदि मुनिचार पावागिरि वर शिखर मझार ।
चेलना नदीतीर के पास मुक्ति गये वन्दौं नित तास ॥१४॥
फलहोडी बड़गाम अनूप, पश्चिम दिशा द्रोणगिरि रूप,
गुरुदत्तादि मुनीश्वर जहां, मुक्ति गये वन्दौं नित तहां १५॥
बाल महाबाल मुनि दोय, नागकुमार मिले त्रय होय ।
श्री अष्टापद मुक्ति मझार, ते वन्दौं नित सुरत सभार ।१६।
अचलापुर की दिश ईशान, तहाँ मेढगिरि नाम प्रधान ।
साढे तीन कोडि मुनिराय, तिनके चरण नमूं चितलाय ।१७।
वंसस्थल वनके ढिग होय, पश्चिम दिशा कुंथुगिरि सोय ।
कुल-भूषण देशि-भूषण नाम, तिनके चरणनिकरूं प्रणाम।१८
जसधर राजा के सुत कहे, देश कलिंग पाचसौं लहे ।
कोटिशिला मुनि कोटि प्रमान, वन्दन करूं जोरजुगपान ।१९।
समवसरण श्रीपार्श्वजिनंद, रेसिंदीगिरि नयनानन्द ।
वरदत्तादि पञ्चऋषिराज, ते वन्दौं नित धरमजिहाज ।२०।
मथुरापुर पवित्र उद्यान, जम्बू स्वामीजी निर्वाण ।
चरम केवली पञ्चमकाल, ते वन्दौं नित दीनदयाल ।२१।
तीनलोक के तीरथ जहां, नित प्रति वन्दन कीजै तहां ।
मनवचकाय सहित सिरनाय, वन्दनकरहिं भविकगुणगाय।२२
सम्वत् सतरहसौ इकताल, आश्विन सुदि दशमी सुविशाल ।
'भैया' वन्दन करहिं त्रिकाल, जय निर्वाणकाण्ड गुणमाल ।२३

॥ इति ॥

मेरी भावना

जिसने राग द्वेष कामादिक जीते, सब जग जान लिया ।
सब जीवो को मोक्ष मार्ग का, निस्पृह हो उपदेश दिया ।।
बुद्ध, वीर, जिन, हरि, हर ब्रह्मा या उसको स्वाधीन कहो ।
भक्ति-भाव से प्रेरित हो, यह चित्त उसीमे लीन रहो ।१।
विषयो की आशा नहि जिनके, साम्य-भाव धन रखते हैं ।
निज-परके हित साधन मे जो, निशिदिन तत्पर रहते हैं ।
स्वार्थ-त्याग की कठिन तपस्या, बिना खेद जो करते हैं ।
ऐसे ज्ञानी साधु जगत के, दुःख समूह को हरते हैं ।।२।।
रहे सदा सत्सग उन्हीं का, ध्यान उन्ही का नित्य रहे ।
उनही जैसी चर्या मे यह, चित्त सदा अनुरक्त रहे ।।
नहीं सताऊं किसी जीवको, झूठ कभी नही कहा करूं ।
पर धन *वनिता पर न लुभाऊं, सतोषामृत पिया करूं ।३।
अहङ्कार का भाव न रक्खू, नहीं किसी पर क्रोध करूं ।
देख दूसरो की बढती को, कभी न ईर्ष्या-भाव धरूं ।
रहे भावना ऐसी मेरी, सरल-सत्य-व्यवहार करू ।
बने जहा तक इस जीवन मे, औरो का उपकार करूं ।।४।।
मैत्रीभाव जगत मे मेरा, सब जीवों से नित्य रहे ।
दीन-दुखी जीवो पर मेरे, उरसे करुणा स्रोत बहे ।।
दुर्जन क्रूर-कुमार्ग रतो पर, क्षोभ नहीं मुझको आवे ।

---

* महिलायें "वनिता" के स्थान पर "भर्त्ता" पढ़ें ।

साम्यभाव रखूं मैं उन पर, ऐसी परिणति हो जावे ॥५॥
गुणीजनों को देख हृदय मे, मेरे प्रेम उमड़ आवे ।
बने जहां तक उनकी सेवा, करके यह मन सुख पावे ॥
होऊं नहीं कृतघ्न कभी मैं, द्रोह न मेरे उर आवे ।
गुण-ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावे ॥६॥
कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे ।
लाखो वर्षों तक जीऊं या, मृत्यु आज ही आ जावे ॥
अथवा कोई कैसा ही भय, या लालच देने आवे ।
तो भी न्याय-मार्ग से मेरा, कभी न पद डिगने पावे ॥७॥
होकर सुख मे मग्न न फूले, दुःख में कभी न घबरावे ।
पर्वत नदी-श्मशान-भयानक, अटवी से नहिं भय खावे ॥
रहे अडोल-अकम्प निरन्तर, यह मन दृढ़तर बन जावे ।
इष्ट-वियोग अनिष्ट-योग में, सहनशीलता दिखलावे ॥८॥
सुखी रहे सब जीव जगत के, कोई कभी न घबरावे ।
वैर-पाप अभिमान छोड़ जग, नित्य नये मङ्गल गावे ।
घर घर चर्चा रहे धर्म की, दुष्कृत दुष्कर हो जावे ।
ज्ञान-चरित उन्नत कर अपना, मनुज जन्मफल सब पावे ।९।
ईति-भीति व्यापे नहि जगमे, वृष्टि समय पर हुआ करे ।
धर्म-निष्ठ होकर राजा भी, न्याय प्रजा का किया करे ।
रोग-मरी दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शांति से जिया करे ।
परम अहिंसा धर्म जगत मे, फैल सर्व हित किया करे ।१०।
फैले प्रेम परस्पर जग मे, मोह दूर पर रहा करे ।

अप्रिय-कटुक-कठोर शब्द नहिं, कोई मुख से कहा करे ।।
बनकर सब 'युग-वीर' हृदय से, देशोन्नति रत रहा करे ।
वस्तु स्वरूप विचार खुशी से, सब दुःख सङ्कट सहा करे ।११

समाधि मरण छोटा

(चाल जोगीरासा)

गौतम स्वामी बन्दो नामी मरण समाधि भला है ।
मै कब पाऊँ निशदिन ध्याऊँ गाऊँ वचन कला है ।
देव धर्म गुरु प्रीति महा दृढ सात व्यसन नहीं जाने ।
त्यागि बाईस अभक्ष संयमी बारह व्रत नित ठानै । १ ।
चक्की चूली उखरी बुहारी पानी त्रस ना विरोधे ।
बनिज करे पर द्रव्य हरे नहीं छहो करम इमि सोधे ।
पूजा शास्त्र गुरुन की सेवा संयम तप चहुं दानी ।
पर उपकारी अल्प अहारी सामायिक विधि ज्ञानी ।२।
जाप जपे तिहु योग धरे दृढ तन की ममता टारे ।
अन्त समय वैराग्य सम्हारे ध्यान समाधि विचारे ।
आग लगे अरु नाव जब डूबे धर्म विघन जब आवे ।
चार प्रकार आहार त्यागि के मन्त्र सु मन मे ध्यावे ।३।
रोग असाध्य जरा बहु देखे कारण और निहारे ।
बात बड़ी है जो बनि आवे भार भवन को डारे ।
जो न बने तो घर में रह करि सब सों होय निराला ।
मात पिता सुत त्रिय को सोंपे निज परिग्रह अहिकाला ।४।

कुछ चैत्यालय कुछ श्रावक जन कुछ दुखिया धन देही।
क्षमा क्षमा सबही सों कहिके मनकी शल्य हनेई।
शत्रुन सो मिल मिल कर जोरे मै बहु करी है बुराई।
तुमसे प्रीतम को दुख दीने ते सब बकसो भाई। ५।
धन धरती जो मुख सो मागे सो सब दे सन्तोषे।
छहो काय के प्रानी ऊपर करुणा भाव विशेषे।
ऊच नीच घर बैठ जगह इक कुछ भोजन कुछ पय ले।
दूधा धारी क्रम क्रम तज के छाछ अहार गहे ले। ६।
छाछ त्यागि के पानी राखे पानी तजि सथारा।
भूमि माहि थिर आसन माडे साधर्मी ढिग प्यारा।
जब तुम जानो यह न जपै है तब जिनवाणी पढिये।
यो कहि मौन लियो सन्यासी पञ्च परम पद लहिये।७।
चार अराधन मन मे ध्यावे बारह भावना भावे।
दस लक्षण मन धर्म बिचारे रत्नत्रय मन ल्यावे।
पैंतिस सोलह षट पन चारो दुइइक वरण बिचारे।
काया तेरी दुख की ढेरी ज्ञान मई तू सारे। ८।
अजर अमर निज गुणसो पूरे परमानन्द सुभावे।
आनन्द कन्द चिदानन्द साहब तीन जगतपति ध्यावे।
क्षुधा तृषादिक होइ परीषह सहे भाव सम राखे।
अतीचार पाच सब त्यागे ज्ञान सुधारस चाखे। ९।
हाड मांस सब सूख जाय जब धरम लीन तन त्यागे।
अद्भुत पुण्य उपाय सुरग मे सेज उठे ज्यो जागे।

ते आवे शिव पद पावे विलसे सुक्ख अनन्तो ।
स' वह गति होय हमारी जैन धरम जयवन्तो । १० ।

॥ इति समाधिमरण समाप्त ॥

बारह भावना

(भूधरदास कृत)

राजा राणा छत्रपति, हथियन के असवार ।
मरना सबको एक दिन, अपनी अपनी बार । १ ।
दल बल देवी देवता, मात पिता परिवार ।
मरती बिरिया जीव को, कोई न राखनहार ।२।
दाम बिना निर्धन दुखी, तृष्णावश धनवान ।
कहीं न सुख संसार मे, सब जग देखो छान । ३ ।
आप अकेला अवतरे, मरे अकेला होय ।
यूं कबहू इस जीवका, साथी सगा न कोय । ४ ।
जहां देह अपनी नहीं, तहां न अपना कोय ।
घर सम्पत्ति पर प्रगट ये, पर हैं परिजन लोय । ५ ।
दिपे चाम चादर मढी, हाड पींजरा देह ।
भीतर या सम जगत मे, और नहीं घिनगेह । ६ ।
सोरठा—मोह नींद के जोर, जगवासी घूमे सदा ।
कर्मचोर चहुं ओर, सरबस लूटे सुध नहीं । ७ ।
सतगुरु देय जगाय, मोहनींद जब उपशमे ।
तब कुछ बने उपाय, कर्म चोर आवत रुके । ८ ।
दोहा—ज्ञान दीप तप तेल भर, घर सोधे भ्रम छोर ।
याविधि बिन निकसे नहीं, बैठे पूर्व चोर । ९ ।

पञ्चमहाव्रत सञ्चरण, समिति पंच परकार।
प्रबल पंच इन्द्री विजय, धार निर्जरा सार। १०।
चौदह राजु उतङ्ग नभ, लोक पुरुष संठान।
तामें जीव अनादि से, भरमत हैं बिन ज्ञान।११।
यांचे सुरतरु देय सुख चिंतत चिन्ता रैन।
बिन यांचे बिन चितवे, धर्म सकल सुख दैन।१२।
धनकन कंचन राजसुख सबै सुलभकर जान।
दुर्लभ है संसार में, एक यथारथ ज्ञान १३।

प्रात:कालीन स्तुति

वीतराग सर्वज्ञ हितङ्कर, भविजन की अब पूरो आस।
ज्ञान-भानु का उदय करो, मम मिथ्यातम का होय विनाश।
जीवों की हम करुणा पालें, झूठ वचन नहिं कहें कदा।
पर धन कबहूं न हरहूं स्वामी, ब्रह्मचर्य व्रत रहे सदा॥
तृष्णा लोभ बढ़े न हमारा, तोष-सुधा नित पिया करें।
श्री जिनधर्म हमारा प्यारा, उसकी सेवा किया करें॥
दूर भगावें बुरी रीतियाँ सुखद रीति का करें प्रचार।
मेल मिलाप बढ़ावें हम सब, धर्मोन्नति का करें विचार॥
सुख दुख में हम समता धारें, रहे अचल जिमि सदा अटल।
न्याय मार्ग को लेश न त्यागें, वृद्धि करें निज आतम बल।
अष्ट कर्म जो दुख देते हैं, तिनके क्षय का करें उपाय।
नाम आपका जपें निरन्तर, रोग शोक सब ही टर जाय।
आतम शुद्ध हमारा होवे पाप मैल नहिं चढ़े कदा।
विद्या की हो उन्नति हम में धर्म ज्ञान हू बढ़े सदा।

हाथ जोड़ कर शीश नमावें, तुमको भविजन खड़े खड़े ।
यह सब पूरो आश हमारी, चरण शरण में आन पड़े ।।

सायंकालीन स्तुति

हे सर्वज्ञ वीर जिनदेवा, चरण शरण हम आते हैं ।
ज्ञान अनन्त गुणाकर तुमको, चरणन शीश नवाते हैं ।।१।।
कथन तुम्हारा सबको प्यारा, कहीं विरोध नहीं पाता ।
अनुभव बोध अधिक जिनके है, उन पुरुषों के मन भाता ।।२।।
दर्शन ज्ञान चरित्र स्वरूपी, मारग तुमने दिखलाया ।
यही मार्ग हितकारी सबका, पूर्व ऋषीगण ने गाया ।।३।।
रत्नत्रय को भूल न जावें, इसीलिए उपनयन करें ।
ब्रह्मचर्य को दृढ़तम पालें, सप्तव्यसन का त्याग करें ।।४।।
नीतिमार्ग पर नित्य चलें हम, योग्याहार विहार करें ।
पालें योग्याचार सदा हम, वर्णाचार विचार करें ।।५।।
धर्ममार्ग अरु वैद्यमार्ग से, देशोद्धार विचार करें ।
आर्षवचन हम दृढ़तम पालें, सत्सिद्धान्त प्रचार करें ।।६।।
श्रीजिनधर्म बढ़े दिन दूनो, पच आप्तनुति नित्य करें ।
सत्संगति को पाकर स्वामिन्, कर्म कलंक समूल हरें ।।७।।
फलें भाव ये सभी हमारे, यही निवेदन करते हैं ।
'लाल' बाल मिल भाल वीरके, चरणों में शिर धरते हैं ।।८।।

भावना भजन

भावना दिन रात मेरी सब सुखी संसार हो ।
सत्य संयम शील का व्यवहार घर घर बार हो ।।टेक।।

धर्म का प्रचार हो अरु देश का उद्धार हो ।
और यह उजड़ा हुआ भारत चमन गुलजार हो ॥१॥
रोशनी से ज्ञान का संसार मे परकाश हो ।
धर्म की तलवार से हिंसा का सत्यानाश हो ॥२॥
शांति अरु आनन्द का हर एक घर मे वास हो ।
वीर वाणी पर सभी संसार का विश्वास हो ॥३॥
रोग और भय शोक होवें दूर सब परमात्मा ।
कर सके कल्याण 'ज्योति' सब जगत की आत्मा ॥ ४ ॥

श्रीचौवीस तीर्थंकरों के चिह्न

वृषभनाथ का 'वृषभ' जु जान । अजितनाथ के 'हाथी' मान।
संभवजिनके 'घोडा' कहा । अभिनन्दनपद 'बन्दर' लहा ॥१॥
सुमतिनाथ के 'चकवा' होय । पद्मप्रभ के 'कमल' जु जोय ।
जिनसुपास के 'सथिया' कहा । चन्द्रप्रभ पद 'चन्द्र' जु लहा ।२
पुष्पदन्त पद 'मगर' पिछान । 'कल्पवृक्ष' शीतल पद मान ।
श्री श्रेयांस पद 'गेंडा' होय । वासुपूज्य के 'भैंसा' जोय ॥३॥
विमलनाथ पद 'शूकर' मान । अनन्तनाथ के 'सेही' जान ।
धर्मनाथ के 'वज्र' कहाय । शान्तिनाथ पद 'हिरन' लहाय ।४
कुन्थुनाथ के पद 'अज' चीन । अरजिनके पदचिह्न जु 'मीन'।
मल्लिनाथ पद 'कलश' कहा । मुनिसुव्रत के 'कछुआ' लहा ।५
'लालकमल' नमिजिनके होय । नेमिनाथ-पद 'शङ्ख' जु जोय।
पार्श्वनाथ के 'सर्प' जु कहा । वर्द्धमान पद 'सिंह' हि लहा ।६

समाधिमरण भाषा

वन्दों श्री अरहन्त परमगुरु जो सबको सुखदाई।
इस जग में दुख जो मैं भुगते, सो तुम जानो राई॥
अब मैं अरज करूँ प्रभु तुमसे, कर समाधि उर मांहीं।
अन्त समय में यह वर मांगूं, सो दीजै जग-राई ॥ १ ॥
भव भवमें तनधार नया मैं, भव भव शुभ संग पायो।
भव भवमें नृपऋद्धि लई मैं, मात पिता सुत थायो॥
भव भव में तन पुरुषतनों धर, नारी हू तन लीनो।
भव भव में मैं भयो नपुंसक, आतम गुण नहिं चीन्हों ॥२॥
भव भव में सुरपदवी पाई, ताके सुख अति भोगे।
भव भव में गति नरकतनी धर, दुख पाये विधि योगे॥
भव भव में तिर्यञ्च योनि धर, पायो दुख अति भारी।
भव भव में साधर्मीजनको, संग मिल्यो हितकारी ॥ ३ ॥
भव भव में जिनपूजन कीनी, दान सुपात्रहि दीनो।
भव भव में मैं समवसरण में, देख्यो जिनगुण भीनो॥
एती वस्तु मिली भव भव में, सम्यक्गुण नहिं पायो।
नहिं समाधियुत मरण कियो मैं, तातैं जग भरमायो॥४॥
काल अनादि भयो जग भ्रमतें, सदा कुमरणहिं कीनों।
एकबार हू सम्यक्युत मैं, निज आतम नहिं चीन्हों॥
जो निज पर को ज्ञान होय तो, मरण समय दुख कांई।
देह विनाशी मैं निज भाषी, ज्योति स्वरूप सदाई ॥५॥

विषय कषायन के वश होकर, देह आपनो जान्यो ।
कर मिथ्या सरधान हिये विच, आतम नाहिं पिछान्यो ।।
यो कलेश हियधार मरणकर, चारों गति भरमायो ।
सम्यग्दर्शन-ज्ञान चरन ये, हिरदे मे नहिं लायो ।।६।।
अब या अरज करूं प्रभु सुनिये, मरण समय यह माँगो ।
रोगजनित पीडा मत होवे, अरु कषाय मत जागो ।।
ये मुझ मरण समय दुखदाता, इन हर साता कीजै ।
जो समाधियुत मरण होय मुझ, अरु मिथ्यामद छीजै ।।७।।
यह तन सात कुधातमई है, देखत ही घिन आवै ।
चर्म लपेटी ऊपर सोहै, भीतर विष्टा पावै ।
अति दुर्गन्ध अपावनसो यह, मूरख प्रीति बढावै ।
देह विनाशी जिय अविनाशी, नित्यस्वरूप कहावै ।। ८ ।।
यह तन जीर्ण कुटी सम आतम, यातै प्रीति न कीजै ।
नूतन महल मिलै जब भाई, तब यामे क्या छीजै ।
मृत्यु होन से हानि कौन है, याको भय मत लावो ।
समता से जो देह तजोगे, तो शुभतन तुम पावो ।।६।।
मृत्यु मित्र उपकारी तेरो, इस अवसर के माही ।
जीरण तन से देत नयो यह, या सम काहू नाही ।।
या सेती इस मृत्यु समय पर, उत्सव अति ही कीजै ।
क्लेश भाव को त्याग सयाने, समता भाव धरीजै ।।१०।।
जो तुम पूरब पुण्य किये हैं, तिनको फल सुखदाई ।
मृत्यु मित्र बिन कौन दिखावे, स्वर्ग सम्पदा भाई ।।

राग रोष को छोड़ सयाने सप्त व्यसन दुखदाई।
अन्त समय में समता धारो पर भव पंथ सहाई ॥११॥
कर्म महादुठ बैरी मेरो, तासेती दुख पावै।
तन पिंजरे में बंद कियो मोहि यासों कौन छुड़ावै ॥
भूख तृषा दुख आदि अनेकन, इस ही तन में गाढ़े।
मृत्युराज अब आय दयाकर, तन पिंजरसों काढ़े ॥ १२ ॥
नाना वस्त्राभूषण मैंने, इस तन को पहराये।
गन्ध सुगन्धित अतर लगाये, षट्रस अशन कराये।
रात दिना मैं दास होयकर, सेव करी तन केरी।
सो तन मेरे काम न आयो, भूल रह्यो निधि मेरी ॥१३॥
मृत्युरायको शरण पाय, तन नूतन ऐसो पाऊँ।
जामें सम्यक् रतन तीन लहि, आठों कर्म खपाऊँ॥
देखो तन सम और कृतघ्नी, नाहिं सु या जगमाहीं।
मृत्यु समय में ये ही परिजन, सबही हैं दुखदाई ॥१४॥
यह सब मोह बढ़ावनहारे, जियको दुर्गति दाता।
इनसे ममत निवारो जियरा, जो चाहो सुख साता।
मृत्युकल्पद्रुम पाय सयाने, मांगो इच्छा जेती।
समता धरकर मृत्यु करो तो, पावो सम्पति तेती ॥१५॥
चौआराधन सहित प्राण तज, तौ ये पदवी पावो।
हरि प्रतिहरि चक्री तीर्थेश्वर, स्वर्गमुक्ति में जावो ॥
मृत्युकल्पद्रुम सम नहिं दाता, तीनों लोक मंझारे।
ताको पाय कलेश करो मत, जन्म जवाहर हारे ॥१६॥

इस तन मे क्या राचै जियरा, दिन दिन जीरण हो है ।
तेजकाति बल नित्य घटत है, या सम अथिर सु को है ॥
पाचो इन्द्री शिथिल भई अब, स्वास शुद्ध नहि आवै ।
तापर भी ममता नहि छोडै, समता उर नहि लावै ॥१७॥
मृत्युराज उपकारी जियको, तनसों तोहि छुडावै ।
नातर या तन बन्दीगृह मे, परचो परचो बिललावै ॥
पुद्गल के परमाणु मिलकै, पिण्डरूपतन भासी ।
याही मूरत मै अमूरती, ज्ञानज्योति गुणवासी ॥१८॥
रोगशोक आदिक जो वेदन, ते सब पुद्गल लारै ।
मै तो चेतन व्याधि बिना नित, है सो भाव हमारे ॥
या तनसो इस क्षेत्र सम्बन्धी. कारन आन बन्यो है ।
खान पान दे याको पोष्यो. अब सम भाव ठन्यो है ॥१९॥
मिथ्यादर्शन आत्मज्ञान बिन, यह तन अपनो मान्यो ।
इन्द्रीभोग गिने सुख मैने, आपो नाहि पिछान्यो ॥
तन विनशनतै नाश जानि,निज यह अयान दुखदाई ॥
कुटुम्ब आदि को अपनो जान्यो,भूल अनादि छाई ॥२०॥
अब निज भेद जथारथ समझ्यो, मै हू ज्योतिस्वरूपी ।
उपजै विनशै सो यह पुद्गल, जान्यो याको रूपी ॥
इष्ट अनिष्ट जेते सुख दुख हैं, सो सब पुद्गल लागैं ।
मैं जब अपनो रूप विचारो, तब वे सब दुख भागैं ॥२१॥
बिन समता तनऽनन्त धरे मै, तिनमें ये दुख पायो ।
शस्त्रघाततै अनन्त बार मर, नाना योनि भ्रमायो ॥

बार अनन्तहि अग्नि माहिं जर मूयो सुमति न लायो ।
सिंह व्याघ्र अहिऽनन्त बार मुझ नाना दुःख दिखायो ।।२२।।
बिन समाधि ये दुःख लहे मैं, अब उर समता आई ।
मृत्युराज को भय नहिं मानो, देवं तन सुखदाई ।।
यातें जब लग मृत्यु न आवें, तबलग जप तप कीजे ।
जपतप बिन इस जग के माहीं, कोई भी नहिं सीजें ।।२३।।
स्वर्गसम्पदा तपसों पावें, तपसो कर्म नशावें ।
तपहीसो शिवकामिनिपति ह्वै, यासों तप चित लावें ।।
अब मैं जानो समता बिन, मुझ कोऊ नाहिं सहाई ।
मात पिता सुत बान्धव तिरिया, ये सब हैं दुखदाई ।।२४।।
मृत्यु समय में मोह करें ये, तातें आरत हो है ।
आरततें गति नीची पावें, यों लख मोह तज्यो है ।।
और परिग्रह जेते जग में, तिनसों प्रीति न कीजे ।
परभव मे ये संग न चालें, नाहक आरत कीजे ।।२५।।
जे जे वस्तु लखत हैं ते पर, तिनसों नेह निवारो ।
परगति मे ये साथ न चालें, ऐसो भाव विचारो ।।
जो परभवमें सङ्ग चलें तुझ, तिनसे प्रीति सु कीजे ।
पञ्च पाप तज समता धारो, दान चार विधि कीजे ।।२६।।
दश लक्षणमय धर्म धरो उर, अनुकम्पा उर लावो ।
षोडशकारण नित्य चितवो, द्वादश भावना भावो ।।
चारों परवी प्रोषध कीजे, असन रातको त्यागो ।
समता धर दुरभाव निवारो, संयमसो अनुरागो ।। २७ ।।

अन्तसमय मे ये शुभ भावहि, होवें आनि सहाई ।
स्वर्ग मोक्षफल ताहि दिखावें, ऋद्धि देहि अधिकाई ॥
खोटे भाव सकल जिय त्यागो, उरमे समता लाके ।
जासेती गति चार दूर कर, बसो मोक्षपुर जाके ॥ २८ ॥
मन थिरता करके तुम चिन्तो, चौ आराधन भाई ।
ये ही तोको सुख की दाता, और हितू कोउ नाहीं ॥
आगे बहु मुनिराज भये हैं, तिन गहि थिरता भारी ।
बहु उपसर्ग सहे शुभ भावन, आराधन उरधारी ॥२९॥
तिनमे कछुइक नाम कहूं मैं सुनो जिया चित लाके ।
भावसहित अनुमोदे तासे, दुर्गति होय न जाके ॥
अरु समता निज उरमे आवें, भाव अधीरज जावे ।
यों निशदिन जो उन मुनिवरको, ध्यान हिये बिच लावे ।३०।
धन्य धन्य सुकुमाल महामुनि, कैसे धीरज धारी ।
एक श्यालनी युगबच्चायुत पाव भख्यो दुखकारी ॥
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी ।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है मृत्यु महोत्सव बारी ॥३१॥
धन्य धन्य जु सुकौशल स्वामी, व्याघ्रीने तन खायो ।
तो भी श्रीमुनि नेक डिगो नहि, आतमसो हित लायो ॥
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी ।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्यु महोत्सव बारी ॥३२॥
देखो गजमुनिके सिर ऊपर, विप्र अगनि बहु बारी ।
शीश जलै जिमि लकड़ी तनको, तो भी नाहि चिगारी ॥

यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी ।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्यु महोत्सव बारी ।।३३।।
सनत्कुमार मुनिके तनमे, कुष्टवेदना व्यापी ।
छिन्नभिन्न तन तासो हूवो, तब चित्यो गुण आपो ।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी ।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्यु महोत्सव बारी ।।३४।।
श्रेणिकसुत गङ्गा मे डूब्यो, तब जिन नाम चितारघो ।
धर सलेखना परिग्रह छोड्यो, शुद्ध भाव उर धारघो ।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता आराधन चितधारी ।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्यु महोत्सव बारी ।।३५।।
समन्तभद्र मुनिवर के तनमे क्षुधावेदना आई ।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी ।
ता दुख मे मुनि नेक न डिगियो, चित्यो निजगुण भाई ।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्युमहोत्सव बारी ।।३६।।
ललितघटादिक तीस दोय मुनि, कौशाम्बीतट जानो ।
नन्दीमे पुनि वहकर डूबे, सो दुख उन नहि मानो ।।
यह उपसग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी ।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्युमहोत्सव बारी ।।३७।।
धर्मकोष मुनि चम्पानगरी, वाह्य ध्यान धर ठाडो ।
एक मास की कर मर्यादा, तृषा दुःख सह गाढो ।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी ।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्युमहोत्सव बारी ।।०८।।

यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्युमहोत्सव बारी ॥४४॥
अभिनन्दन मुनि आदि पांच सौ, घानि पेलि जु मारे।
तो भी श्रीमुनि समता धारी, पूरब कर्म विचारे।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी॥
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्युमहोत्सव बारी ॥४५॥
चाणक मुनि गोघर के माहीं, मन्द अगनि परजाल्यो।
श्रीगुरु उर समभाव धारके, अपनो रूप सम्हाल्यो।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्युमहोत्सव बारी ॥४६॥
सात शतक मुनिवर ने पायो, हथनापुर में जानो।
बलि-ब्राह्मणकृत घोर उपद्रव, सो मुनिवर नहिं मानो॥
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्युमहोत्सव बारी ॥४७॥
लोहमयी आभूषण गढ़के, ताते कर पहराये।
पांचो पांडव मुनिके तनमें तो भी नाहिं चिगाये।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी॥
तो तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्युमहोत्सव बारी ॥४८॥
और अनेक भये इस जगमें, समता रसके स्वादी।
वे ही हमको हो सुखदाता, हरहैं टेव प्रमादी॥
सम्यक्-दर्शन ज्ञान चरन तप, ये आराधन चारो।
ये ही मोकूं सुख के दाता, इन्हे सदा उर धारो ॥४९॥

यो समाधि उरमाहीं लावो, अपनो हित जो चाहो।
तज ममता अरु आठो मदको, ज्योतिस्वरूपी ध्यावो ॥
जो कोई नित करत पयानो, ग्रामान्तर के काजै।
सो भी शकुन विचारै नीके, शुभ के कारण साजै ॥५०॥
मातादिक अरु सर्व कुटुम्ब सौं, नीको शकुन बनावे।
हल्दी धनिया पुङ्गी अक्षत, दूब दही फल लावै ॥
एक ग्राम के कारण एते, करैं शुभाशुभ सारे।
जब परगतिको करत पयानो, तउ नहिं सोचैं प्यारे ॥५१॥
सर्व कुटुम्ब जब रोवन लागैं, तोही रुलावैं सारे।
ये अपशकुन करैं सुन तोको, तू यो क्यों न विचारे ॥
अब परगति की चालत बिरिया, धर्मध्यान उर आनो।
चारो आराधन आराधों, मोहतनो दुख हानो ॥५२॥
ह्वै निःशल्य तजो सब दुविधा, आतमराम सुध्यावो।
जब परगति को करहु पयानो, परम तत्त्व उर लावो।
मोह जालको काट पियारे, अपनो रूप विचारो ॥
मृत्यु मित्र उपकारी तेरो, यों उर निश्चय धारो। ५३॥

दोहा—मृत्युमहोत्सव पाठको, पढो सुनो बुधिवान।
सरधा धर नित सुख लहो, सूरचन्द शिवथान ॥
पञ्च उभय नव एक नभ, सनतै सो सुखदाय।
आशिवन श्यामा सप्तमी, कह्यो पाठ मनलाय ॥

—*—

जिनको तुमरी शरणागत है, तिनसौं यमराज डराना है।
यह सुजस तुम्हारे सांचेका, सब गावत वेद पुराना है। श्री.।५।
जिसने तुमसे दिलदर्द कहा, तिसका तुमने दुख हाना है।
अघ छोटा मोटा नाशि तुरत, सुख दिया तिन्हें मनमाना है।
पावक सो शीतल नीर किया, श्रौ चीर बढ़ा असमाना है।
भोजन था जिसके पास नहीं सो किया कुबेर समाना है। श्री.६
चिन्तामणि पारस कल्पतरु, सुखदायक ये परधाना है।
तव दासन के सब दास यही, हमरे मनमे ठहराना है।
तुम भक्तन को सुरइन्द्रपदी, फिर चक्रपति पद पाना है।
क्या बात कहौं विस्तार बढ़े, वे पावें मुक्ति ठिकाना है। श्री.७
गति चार चौरासी लाख विषैं, चिन्मूरत मेरा भटका है।
हो दीनबन्धु करुणानिधान, अबलों न मिटा यह खटका है।
अब जोग मिला शिवसाधन का, सब विघन कर्मने हटका है।
अब विघन हमारे दूर करो, सुखदेहु निराकुल घटका है। श्री.८
गजग्राहग्रसित उद्धार लिया, ज्यों अञ्जन तस्कर तारा है।
ज्यों सागर गोपदरूप किया, मैना का सङ्कट टारा है।
ज्यों सूली तें सिंहासन श्रौर, बेडी को काट बिडारा है।
त्यों मेरा संकट दूर करो, प्रभु मोकूं आश तुम्हारा है। श्री.९
ज्यो फाटक टेकत पांय खुला, श्रौ सांप सुमन कर डारा है।
ज्यों खड्गकुसुम का माल किया, बालक का जहर उतारा है।
ज्यों सेठ विपत चकचूर पूर, घर लक्ष्मीसुख विस्तारा है।
त्यों मेरा सङ्कट दूर करो, प्रभु मोकूं आश तुम्हारा है। श्री.।
यद्यपि तुमको रागादि नहीं, यह सत्य सर्वथा जाना है।

चिन्मूरति आप अनन्तगुनी, नित शुद्धदशा शिवथाना है।
तदपि भक्तन की भीड़ हरो, सुखदेत तिन्हे जु सुहाना है।
यह शक्ति अचिन्त्य तुम्हारी का, क्या पावै पार सयाना है।श्री.
दुख खंडन श्री सुखमण्डनका, तुमरा प्रण परम प्रमाना है।
वरदान दया यश कीरत का, तिहुँ लोक धुजा फहराना है।
कमलाधरजी! कमलाकरजी, करिये कमला अमलाना है।
अब मेरीविथा अवलोकि रमापति,रंच न बार लगाना है।श्री.
हो दीनानाथ अनाथ हितू, जन दीन अनाथ पुकारी है।
उदयागत कर्म विपाक हलाहल, मोह विथा विस्तारी है।
ज्यों आप और भवि जीवन की, ततकाल विथा निरवारी है
त्यों 'वृन्दावन' यह अरज करै, प्रभु आज हमारी बारी है।श्री.

भक्तामर स्तोत्र

भक्तामर-प्रणत-मौलि-मणि-प्रभाणा—
मुद्योतकं दलित-पाप-तमो-वितानम्।
सम्यक्प्रणम्य जिन पादयुगं युगादा—
वालम्बनं भव-जले पततां जनानाम्॥१॥
यः संस्तुतः सकल-वाङ्मय-तत्त्व-बोधा—
दुद्भूत-बुद्धि-पटुभिः सुर-लोक-नाथैः।
स्तोत्रैर्जगत्त्रितय-चित्त-हरैरुदारैः,
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम्॥२॥

बुद्धया विनापि विबुधार्चित-पाद-पीठ !
स्तोतुं समुद्यत—मतिर्विगत-त्रपोऽहं ।
बाल विहाय जल-संस्थितमिन्दु-बिम्ब—
मन्यः क इच्छति जनः सहसा गृहीतुम् ॥३॥
वक्तुं गुणान् गुण-समुद्र ! शशांक-कान्तान्,
कस्ते क्षमः सुर-गुरु-प्रतिमोऽपि बुद्धया ।
कल्पांत-काल-पवनोद्धत-नक्र-चक्रं,
को वा तरीतुमलमम्बुनिधिं भुजाभ्याम् ॥४॥
सोऽहं तथापि तव भक्ति-वशान्मुनीश !
कर्तुं स्तवं विगत-शक्तिरपि प्रवृत्तः ।
प्रीत्याऽऽत्म-वीर्यमविचार्य मृगी मृगेन्द्रम्,
नाभ्येति किं निज-शिशोः परिपालनार्थम् ॥५॥
अल्प-श्रुतं श्रुतवतां परिहास-धाम,
त्वद्भक्तिरेव मुखरीकुरुते बलान्माम् ।
यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति,
तच्चाम्र-चारु-कलिका-निकरैक-हेतुः ॥६॥
त्वत्संस्तवेन भव-सन्तति-सन्निबद्धं,
पापं क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभाजाम् ।
आक्रांत-लोकमलि-नीलमशेषमाशु,
सूर्यांशु-भिन्नमिव शार्वरमधकारम् ॥७॥
मत्वेति नाथ तव संस्तवनं मयेद—
मारभ्यते तनु-धियापि तव प्रभावात् ॥

चेतो हरिरप्रति नता नलिनी-दलेषु,

मुक्ता-फलद्युतिमुपैति ननूद-बिन्दु' ॥८॥

आस्तां तव स्तवनमस्त-समस्त-दोष,

त्वत्संकथाऽपि जगतां दुरितानि हंति ।

दूरे सहस्रकिरण कुरुते प्रभैव,

पद्माकरेषु जलजानि विकासभाञ्जि ॥९॥

नात्यद्भुत भुवन-भूषण ! भूतनाथ !

भूतैर्गुणैर्भुवि भवन्तमभिष्टुवन्तः ।

तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा,

भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति ॥१०॥

दृष्ट्वा भवंतमनिमेष-विलोकनीयं,

नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षुः ।

पीत्वा पयः शशिकर-द्युति-दुग्ध-सिन्धो. ।

क्षार जल जल-निधेरसितु क इच्छेत्? ॥११॥

यैः शांत-राग-रुचिभि. परमाणुभिस्त्व,

निर्मापितस्त्रिभुवनैक-ललामभूत ।

तावत एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्यां,

यत्ते समानमपर न हि रूपमस्ति ॥१२॥

वक्त्र क्व ते सुर-नरोरग-नेत्रहारि,

नि.शेष-निर्जित—जगत्त्रितयोपमान ।

बिम्बं कलंकमलिनं क्व निशाकरस्य,

यद्वासरे भवति पांडुपलाश-कल्पं ॥१३॥

संपूर्ण-मंडल-शशांक-कला-कलाप—
शुभ्रागुणास्त्रिभुवन तव लंघयन्ति ।
ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वर ! नाथमेकं,
कस्तान्निवारयति सचरतो यथेष्टम् ।।१४।।
चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशांगनाभि—
र्नीत मनागपि मनो न विकार-मार्गम् ।
कल्पांत-काल-मरुता चलिताचलेन,
किं मंदराद्रि-शिखरं चलितं कदाचित्? ।।१५।।
निर्धूम-वर्तिरपवर्जित-तैल-पूरः,
कृत्स्नं जगत्त्रयमिदं प्रकटीकरोषि ।
गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानां,
दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ ! जगत्प्रकाशः ।।१६।।
नास्तं कदाचिदुपयासि न राहु-गम्यः,
स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्जगंति ।
नांभोधरोदर-निरुद्ध-महा-प्रभावः,
सूर्यातिशायि-महिमासि मुनीन्द्र ! लोके ।।१७।।
नित्योदयं दलित-मोह-महांधकारं,
गम्यं न राहु—वदनस्य न वारिदानां ।
विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्पकांति,
विद्योतयज्जगदपूर्व-शशांक-बिम्बम् ।।१८।।
किं शर्वरीषु शशिनाऽह्नि विवस्वता वा ?
युष्मन्मुखेंदु-दलितेषु तमःसु नाथ ।

निष्पन्न-शालि-वन-शालिनि जीव-लोके,
कार्यं कियज्जलधरैर्जल-भार-नम्रैः ।।१९।।
ज्ञान यथा त्वयि विभाति कृतावकाश,
नैव तथा हरि-हरादिषु नायकेषु ।
तेजः स्फुरन्मणिषु याति यथा महत्त्व.
नैव तु काच-शकले किरणाकुलेऽपि ।।२०।।
मन्ये वरं हरि-हरादय एव दृष्टा,
दृष्टेषु येषु हृदय त्वयि तोषमेति ।
कि वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः,
कश्चिन्मनो हरति नाथ ! भवान्तरेऽपि ।।२१।।
स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्,
नान्या सुत त्वदुपम जननी प्रसूता ।
सर्वा दिशो दधति भानि सहस्ररश्मि,
प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालम् ।।२२।।
त्वामामनन्ति मुनयः परम पुमांस–
मादित्य-वर्णममल तमसः पुरस्तात् ।
त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्यु,
नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनीन्द्र ! पन्थाः ।।२३।।
त्वामव्यय विभुमचिन्त्यमसंख्यमाद्य,
ब्रह्माणमीश्वरमनन्तमनङ्गकेतुम् ।
योगीश्वर विदित-योगमनेकमेक,
ज्ञान-स्वरूपममल प्रवदन्ति संतः ।।२४।।

बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चित-बुद्धि-बोधात्,
त्वं शङ्करोऽसि भुवन-त्रय-शङ्करत्वात् ।
धाताऽसि धीर ! शिव-मार्ग-विधेर्विधानाद्,
व्यक्तं त्वमेव भगवन् पुरुषोत्तमोऽसि ॥२५॥
तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्त्तिहराय नाथ !
तुभ्य नमः क्षिति-तलामल-भूषणाय ॥
तुभ्य नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय,
तुभ्यं नमो जिनभवोदधि-शोषणाय । २६॥
को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणैरशेषै--
स्त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश !
दोषैरुपात्तविविधाश्रय-जात-गर्वैः,
स्वप्नांतरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि ॥२७॥
उच्चैरशोक-तरु-संश्रितमुन्मयूख-
माभातिरूपममलं भवतो नितांतम् ।
स्पष्टोल्लसत्किरणमस्त-तमो-वितान,
बिम्बं रवेरिव पयोधर-पार्श्ववर्ति ॥२८॥
सिंहासने मणि-मयूख-शिखा-विचित्रे,
विभ्राजते तव वपुः कनकावदातम् ।
बिम्बं वियद्विलसदंशुलता-वितानं,
तुङ्गोदयाद्रिशिरसीव सहस्र-रश्मेः ॥२९॥
कुन्दावदात-चल-चामर-चारु-शोभं,
विभ्राजते तव वपुः कलधौत-कान्तं ।

उद्यच्छशांक-शुचि-निर्झर-वारि-धार—

मुच्चैस्तट सुरगिरेरिव शातकौम्भम् ॥३०॥

छत्र-त्रय तव विभाति शशांककात—

मुच्चैः स्थितं स्थगित-भानु-कर-प्रताप ।

मुक्ता-फल-प्रकर-जालविवृद्ध-शोभ,

प्रख्यापत्त्रिजगत परमेश्वरत्व ॥३१॥

गभीर-तार-रव-पूरित-दिग्विभाग-

स्त्रैलोक्य-लोक-शुभ-सगम-भूतिदक्षः ।

सद्धमराज-जय-घोषण-घोषकः सन्,

खे दुन्दुभिध्वनति ते यशस प्रवादी ॥३२॥

मदार-सुन्दर-नमेरु-सुपारिजात—

सतानकादि-कुसुमोत्कर-वृष्टिरुद्धा ।

गंधोद-बिंदु-शुभ-मद-मरुत्प्रपाता,

दिव्यादिवः पतति ते वचसा ततिर्वा ॥३३॥

शुम्भत्प्रभा-वलयभूरि-विभा विभोस्ते,

लोक-त्रये द्युतिमता द्युतिमाक्षिपंति ।

प्रोद्यद्दिवाकर-निरतर-भूरि-सख्या,

दीप्त्या जयत्यपि निशामपि सोम-सौम्या म्॥३४॥

स्वर्गापवर्ग-गम-मार्ग-विमार्गणेष्टः,

सद्धर्म-तत्त्व-कथनैक-पटुस्त्रिलोक्या. ।

दिव्य-ध्वनिर्भवति ते विशदार्थ-सर्व—

भाषा-स्वभाव-परिणाम-गुणैः प्रयोज्यः ॥३५॥

उन्निद्र-हेम-नव-पङ्कज-पुञ्ज-कान्ती,

पर्युल्लसन्नख-मयूख-शिखाभिरामौ।

पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र ! धत्तः,

पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति ॥३६॥

इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेन्द्र !

धर्मोपदेशन-विधौ न तथा परस्य।

यादृक्प्रभा दिनकृतः प्रहतांधकारा,

तादृक् कुतो ग्रह गणस्य विकासिनोऽपि ॥३७॥

श्च्योतन्मदाविल-विलोल-कपोल-मूल—

मत्त-भ्रमद्-भ्रमर नाद-विवृद्ध-कोपं।

ऐरावताभमिभमुद्धतमापतन्तम्,

दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानां।३८।

भिन्नेभ-कुम्भ-गलदुज्ज्वल-शोणिताक्त—

मुक्ता-फल-प्रकर-भूषित-भूमि-भागः।

बद्ध-क्रमः क्रम-गत हरिणाधिपोऽपि,

नाक्रामति क्रम-युगाचल-संश्रितं ते ॥३९॥

कल्पांत-काल-पवनोद्धत वह्नि-कल्प,

दावानल ज्वलितमुज्ज्वलमुत्स्फुलिंग।

विश्व जिघित्सुमिव सम्मुखमापतन्तं,

त्वन्नाम-कीर्त्तन—जल शमयत्यशेष ॥४०॥

रक्तेक्षण समद-कोकिल-कंठ-नील,

क्रोधोद्धतं फणिनमुत्फणमापतन्तं।

आक्रामति क्रम-युगेण निरस्तशक—
स्त्वन्नाम-नाग-दमनी हृदि यस्य पुंसः ॥४१॥
वलगत्तुरग-गज-गर्जित-भीमनाद—
माजौ बलं बलवतामपि भूपतीना।
उद्यद्दिवाकर-मयूख-शिखापविद्धं,
त्वत्कीर्त्तनात्तम इवाशु भिदामुपैति ॥४२॥
कुन्ताग्र-भिन्न-गज-शोणित-वारिवाह—
वेगावतार तरणातुर-योध-भीमे।
युद्धे जयं विजित-दुर्जय-जेय पक्षा—
स्त्वत्पाद-पङ्कज-वनाश्रयिणो लभन्ते ॥४३॥
अम्भोनिधौ क्षुभित-भीषणनक्र-चक्र—
पाठीन-पीठभय-दोल्वण-वाडवाग्नौ।
रगत्तरग-शिखर-स्थित-यान-पात्रा—
स्त्रास विहाय भवतः स्मरणाद् व्रजन्ति ॥४४॥
उद्भूत-भीषण-जलोदर-भार-भुग्ना,
शोच्या दशामुपगताश्च्युत-जीविताशाः।
त्वत्पाद-पङ्कज-रजोऽमृत-दिग्ध-देहा,
मर्त्या भवन्ति मकरध्वज-तुल्यरूपाः ॥४५॥
आपाद-कण्ठमरु-शृङ्खल-वेष्टिताङ्गा,
गाढं बृहन्निगड-कोटि-निघृष्ट-जघाः।
त्वन्नाम-मन्त्रमनिशं मनुजाः स्मरन्तः,
सद्यः स्वयं विगत-बन्ध-भया भवन्ति।

मत्तद्विपेन्द्र—मृगराज—दवानलाहि—
संग्राम-वारिधि-महोदर—बन्धनोत्थं ।
तस्याशु नाशमुपयाति भय भियेव,
यस्तावकं स्तवमिम मतिमानधीते ।।४७।।
स्तोत्रस्रजं तव जिनेन्द्र ! गुणैर्निबद्धां,
भक्त्या मया रुचिर-वर्ण-विचित्र-पुष्पां ।
धत्ते जनो य इह कंठ-गतामजस्रं,
त मानतुङ्गमवशा समुपैति लक्ष्मीः ।।४८।।
इति श्रीमानतुङ्गाचार्य विरचितमादिनाथस्तोत्र (भक्तामर स्तोत्र)

मोक्ष-शास्त्रं

मोक्षमार्गस्य नेतारं भेत्तारं कर्मभूभृता ।
ज्ञातार विश्वतत्त्वाना वन्दे तद्गुणलब्धये ।।
त्रैकाल्यं द्रव्य-षट्क नव-पद-सहित जीव-षट्काय-लेश्याः ।
पञ्चान्ये चास्तिकाया व्रत-समिति-गति-ज्ञान-चारित्र भेदाः।।
इत्येतन्मोक्षमूल त्रिभुवनमहितैः प्रोक्तमर्हद्भिरीशैः ।
प्रत्येति श्रद्धधाति स्पृशति च मतिमान् यः स वै शुद्धदृष्टिः।।१।
सिद्धे जयप्पसिद्धे चउविहाराहणाफलं पत्ते ।
वन्दित्ता अरहन्ते वोच्छं आराहणा कमसो ।।२।।
उज्जोवणमुज्जवणं णिव्वहणं साहणं च णिच्छरणं ।
दंसण-णाण-चरित्तं तवाणमाराहणा भणिया ।।३।।

सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्राणि मोक्षमार्ग. ॥१ । तत्त्वार्थ-श्रद्धान सम्यग्दर्शनम् ॥२॥ तन्निसर्गादधिगमाद्वा ॥३॥ जीवा-जीवास्रवबध-सवर-निर्जरा-मोक्षास्तत्त्वं ॥४॥ नाम-स्थापना-द्रव्य-भावतस्तन्न्यास· ॥५॥ प्रमाण-नयैरधिगम ॥६॥ निर्देशस्वामित्व-साधनाधिकरण-स्थितिविधानत· ॥७॥ सत्सख्याक्षेत्र स्पर्शन-कालांतर भावाल्पबहुत्वैश्च ॥ ८ ॥ मतिश्रुतावधिमन पर्यय-केवलानि ज्ञान ॥९॥ तत्प्रमाणे ॥१०॥ आद्ये परोक्ष ॥११॥ प्रत्यक्षमन्यत् ।१२। मतिः स्मृतिः सज्ञा चिताभिनिबोध इत्यनर्थान्तर ॥१३॥ तदिन्द्रियानिन्द्रियनिमित्तं ॥ १४ ॥ अवग्रहेहावायधारणाः ।१५। बहुबहुविधक्षिप्रानिःसृतानुक्तध्रुवाणासेतराणा ।१६। अर्थस्य ॥१७॥ व्यञ्जनस्यावग्रहः ॥१८ ॥ न चक्षुरनिन्द्रि-याभ्या ॥१९॥ श्रुत मतिपूव द्व्यनकेद्वादशभेद ॥ २० ॥ भवप्रत्ययोऽवधिर्देवनारकाणा ॥२१॥ क्षयोपशमनिमित्तः षड्विकल्प·शेषाणा ॥२२॥ ऋजुविपुलमती मनःपर्ययः ॥२३॥ विशुद्धचप्रतिपाताभ्या तद्विशेषः ॥२४॥ विशुद्धि-क्षेत्रस्वामिविषयेभ्योऽवधिमन पर्यययोः ॥२५॥ मतिश्रुतयो निबन्धो द्रव्येष्वसर्वपर्यायेष ॥२६॥ रूपिष्ववधेः ॥२७॥ तदनन्तभागे मनःपर्ययस्य ॥२८॥ सर्वद्रव्यपर्यायेषु केवल· ॥२९॥ एकादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥३० मतिश्रुतावधयो विपर्ययश्च ॥३१॥ सदसतोरविशेषाद्यदृच्छो-पलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ नैगमसग्रहव्यवहारर्जुसूत्रशब्द समभिरूढैवभूता नयाः ॥३३॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे प्रथमोऽध्याय ॥२॥

औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्त्व-मौदयिकपारिणामिकौ च । १ । द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रि-भेदा यथाक्रमं । २ । सम्यक्त्वचारित्रे । ३ । ज्ञानदर्शनदान-लाभभोगोपभोगवीर्याणि च । ४ । ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्धयश्च-तुस्त्रित्रिपञ्चभेदाः सम्यक्त्वचारित्रसंयमासंयमाश्च ।५ गति-कषायलिंगमिथ्यादर्शनाज्ञानासंयतासिद्धलेश्याश्चतुश्चतुस्त्र्येकै-कैकैकषड्भेदाः । ६ । जीवभव्याभव्यत्वानि च । ७ । उप-योगो लक्षणं । ८ । सद्विविधोऽष्टचतुर्भेदः । ९ । संसारिणो मुक्ताश्च । १० । समनस्काऽमनस्काः ।११। संसारिणस्त्रस-स्थावराः । १२ । पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतयः स्थावराः । १३ । द्वीन्द्रियादयस्त्रसाः । १४ । पंचेन्द्रियाणि । १५ । द्विविधानि । १६ । निर्वृत्त्युपकरणे द्रव्येन्द्रियं । १७ । लब्ध्युपयोगौ भावेन्द्रियं ।१८। स्पर्शन–रसन–घ्राण–चक्षुः–श्रोत्राणि ।१९। स्पर्श–रस–गंध–वर्ण–शब्दास्तदर्थाः ।२०। श्रुतमनिन्द्रियस्य ।२१। वनस्पत्यन्तानामेकम् ।२२। कृमि-पिपीलिका-भ्रमर-मनुष्यादीनामेकैकवृद्धानि । २३ । संज्ञिनः समनस्काः ।२४। विग्रह-गतौ कर्म-योगः । २५ । अनुश्रेणि गतिः । २६ । अविग्रहा जीवस्य ।२७। विग्रहवती च संसा-रिणः प्राक् चतुर्भ्यः । २८ । एकसमयाऽविग्रहा । २९ । एकं द्वौ त्रीन्वानाहारकः । ३० । सम्मूर्च्छन–गर्भोपपादा जन्म । ३१ । सचित्त-शीतसंवृताः सेतरा मिश्राश्चैकशस्तद्योनयः । ३२ । जरायुजाण्डजपोतानां गर्भः । ३३ । देवनारकाणा-

मुपपादः । ३४ । शेषाणा सम्मूर्च्छनं । ३५ । औदारिक-वैक्रियिकाहारक-तैजस-कार्मणानि शरीराणि । ३६ । परं परं सूक्ष्म । ३७ । प्रदेशतोऽसंख्येयगुण प्राक् तैजसात् ।३८। अनन्त-गुणे परे । ३९ । अप्रतीघाते । ४० । अनादि सबंधे च । ४१ । सर्वस्य । ४२ । तदादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः । ४३ । निरुपभोगमन्त्यम् । ४४ । गर्भसम्मूर्च्छनजमाद्यम् । ४५ । औपपादिक वैक्रियिकम् । ४६ । लब्धि-प्रत्यय च । ४७ । तैजसमपि । ४८ । शुभं विशुद्धमव्याघाति चाहारक प्रमत्तसयतस्यैव । ४९ । नारकसमूर्च्छिनो नपुंसकानि ।५०। न देवाः । ५१ । शेषास्त्रिवेदाः ।५२। औपपादिक-चरमोत्तमदेहाऽसख्येय-वर्षायुषोऽनपवर्त्यायुषः ।५३।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे द्वितोयोऽध्याय ॥२॥

रत्न-शर्करा-बालुका-पङ्क-धूम-तमो-महातमः-प्रभा-भूमयो घनांबुवाताकाशप्रतिष्ठाः सप्ताऽधोऽधः । १ । तासु त्रिंशत्पञ्चविंशति पञ्चदश-दश-त्रि-पञ्चोनैक-नरक—शतसहस्राणि-पञ्च चैव यथाक्रम । २ । नारका नित्याऽशुभतर—लेश्या-परिणाम-देहवेदना-विक्रियाः ।३। परस्परोदीरित-दुःखाः ।४। संक्लिष्टाऽसुरो-दीरित-दुःखाश्च प्राक् चतुर्थ्याः ।५। तेष्वेक त्रि-सप्त-दश-सप्तदश-द्वाविंशति-त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमा सत्त्वाना परा स्थितिः । ६ । जंबूद्वीप-लवणोदादयः शुभनामानो द्वीपसमुद्राः ।७। द्विर्द्विर्विष्कम्भाः पूर्व-पूर्वपरिक्षेपिणो वलया

कृतयः । ८ । तन्मध्ये मेरु-नाभिर्वृत्तो योजन-शतसहस्र-विष्कम्भो जम्बूद्वीपः । ९ । भरत-हैमवत-हरि-विदेह-रम्यक-हैरण्यवतैरावतवर्षाः क्षेत्राणि ।१०। तद्विभाजिनः पूर्वापरायता हिमवन्महाहिमवन्निषध-नील-रुक्मि-शिखरिणो वर्ष-धरपर्वताः । ११ । हेमार्जुन-तपनीय-वैडूर्य-रजत-हेममयाः । १२ । मणिविचित्रपार्श्वा उपरि मूले च तुल्य-विस्ताराः ।१३। पद्म-महापद्म-तिगिंछ-केशरि-महापुण्डरीक-पुण्डरीकाः ह्रदास्तेषामुपरि । १४ । प्रथमो योजन-सहस्रायामस्तदर्द्ध-विष्कम्भो ह्रदः । १५ । दशयोजनावगाहः । १६ । तन्मध्ये योजनं पुष्करम् । १७। तद्द्विगुण-द्विगुणाः ह्रदाः पुष्कराणि च । १८ । तन्निवासिन्यो देव्यः श्री-ह्री-धृति-कीर्ति-बुद्धि-लक्ष्म्यः पल्योपमस्थितयः ससामानिक—परिषत्काः । १९ । गङ्गा-सिन्धु-रोहिद्रोहितास्या-हरिद्धरिकान्ता-सीता-सीतोदा-नारी-नरकान्ता-सुवर्ण-रूप्यकूला-रक्ता-रक्तोदाः सरितस्त-न्मध्यगाः ।२०। द्वयोर्द्वयोः पूर्वाः पूर्वगाः । २१ । शेषास्त्व-परगाः ।२२। चतुर्दश-नदीसहस्र-परिवृता गंगा-सिन्ध्वादयो नद्यः ।२३। भरतः षड्विंशति—पञ्चयोजनशत-विस्तारः षट् चैकोनविंशति भागा योजनस्य ।२४। तद्द्विगुण-द्विगुण-विस्तारा वर्षधर-वर्षा विदेहान्ताः । २५ । उत्तरा दक्षिण-तुल्याः ।२६। भरतैरावतयोर्वृद्धि-ह्रासौ षट्समयाभ्यामुत्स-र्पिण्यवसर्पिणीभ्याम् । २७ । ताभ्यामपरा भूमयोऽवस्थिताः ।२८। एक-द्वि-त्रि-पल्योपमस्थितयो हैमवतक-हारिवर्षक-

देवकुरवका । २६ । तथोत्तरा । ३० । विदेहेषु सख्येय-काला । ३१ । भरतस्य विष्कम्भो जम्बूद्वीपस्य नवति शत-भाग । ३२ । द्विर्धातकीखण्डे । ३३ । पुष्कराद्धे च ।३४। प्राङ्मानुषोत्तरान्मनुष्या ।३५। आर्या म्लेच्छाश्च । ३७ । नृस्थिती परावरे त्रिपल्योपमान्त-र्मुहूर्ते । ३८ । तिर्यग्योनि-जानां च ।।३६।।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे तृतीयोऽध्याय ।।३।।

देवाश्चतुर्णिकाया ।१। आदितस्त्रिषु पीतान्तलेश्या ।२। दशाष्ट-पञ्च-द्वादशविकल्पा. कल्पोपपन्न-पर्यन्ता. । ३ । इन्द्र-सामानिक-त्रायस्त्रिंश-पारिषदात्मरक्ष लोकपालानीक-प्रकीर्णकाभियोग्य-किल्विषिकाश्चैकश. । ४ । त्रायस्त्रिंश-लोकपालवर्ज्या व्यन्तरज्योतिष्का. । ५ । पूर्वयोर्द्वीन्द्राः ।६। कायप्रवीचारा--आ- ऐशानात् । ७ । शेषाः स्पर्श-रूप-शब्द-मनःप्रवीचाराः । ८ । परेऽप्रवीचाराः ।६। भवनवासिनोऽसुर-नागविद्युत्सुपर्णाग्नि-वात-स्तनितो-दधि-द्वीप-दिक्कुमारा. ।१०। व्यन्तरा. किन्नर-किंपुरुष-महोरग-गन्धर्व-यक्ष-राक्षस-भूत-पिशाचाः । ११ । ज्योतिष्काः सूर्या-चन्द्रमसौ ग्रह-नक्षत्र-प्रकीर्णकतारकाश्च । १२ । मेरु-प्रद-क्षिणा नित्य-गतयो नृ-लोके । १३ । तत्कृतः काल-विभाग- ।।१४।। बहिरवस्थिताः । १५ । वैमानिकाः । १६ । कल्पो-पपन्नाः कल्पातीताश्च । १७ । उपर्युपरि । १८ । सौधर्मे-

शान-सानत्कुमार-माहेन्द्र-ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर-लान्तव-कापिष्ठ-शुक्र-महाशुक्र-शतार-सहस्रारेष्वानत-प्राणतयोरारणाच्युतयो-र्नवसु ग्रैवेयकेषु विजय-वैजयन्त-जयन्तापराजितेषु सर्वार्थसिद्धौ च ।१९। स्थिति-प्रभाव-सुख-द्युति-लेश्या विशुद्धीन्द्रियावधि-विषयतोऽधिकाः ।२०। गतिशरीर-परिग्रहाभिमानतो हीनाः । २१ । पीत-पद्म-शुक्ल-लेश्या द्वि-त्रि-शेषेषु । २२ । प्राग्ग्रैवेयकेभ्यः कल्पाः । २३ । ब्रह्म-लोकालया लौकान्तिकाः ।२४। सारस्वतादित्य-वह्न्यरुण-गर्दतोय-तुषिताव्याबाधा-रिष्टाश्च । २५ । विजयादिषु द्वि-चरमाः । २६। औपपादिक-मनुष्येभ्यः शेषास्तिर्यग्योनयः ।२७। स्थितिरसुर-नाग-सुपर्ण-द्वीप-शेषाणां सागरोपम-त्रिपल्योपमार्द्ध-हीनमिताः ।२८। सौधर्मैशानयोः सागरोपमेऽधिके । २९। सानत्कुमार-माहेन्द्रयोः सप्त ।३०। त्रि-सप्त-नवैकादश त्रयोदश-पञ्च-दशभिरधिकानि तु । ३१ । आरणाच्युतादूर्ध्वमेकैकेन नवसु ग्रैवेयकेषु विजयादिषु सर्वार्थसिद्धौ च । ३२ । अपरा पल्यो-पममधिकम् । ३३ । परतः परतः पूर्वापूर्वाऽनन्तराः । ३४ । नारकाणां च द्वितीयादिषु । ३५ । दश-वर्ष-सहस्राणि प्रथमायाम् । ३६ । भवनेषु च । ३७ । व्यन्तराणां च । ३८ । परापल्योपममधिकम् । ३९ । ज्योतिष्काणां च । ४० । तदष्ट-भागोऽपरा ।४१। लौकान्तिकानामष्टौ सागरोपमाणि सर्वेषाम् ।४२।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे चतुर्थोऽध्याय ॥४॥

अजीव-काया धर्माधर्माकाश-पुद्गलाः । १ । द्रव्याणि । २ । जीवाश्च । ३ । नित्यावस्थितान्यरूपाणि । ४ । रूपिणः पुद्गलाः । ५ । आ आकाशादेकद्रव्याणि । ६ । निष्क्रियाणि च । ७ । असंख्येयाः प्रदेशा धर्माधर्मैकजीवानाम् । ८ । आकाशस्याऽनन्ताः । ९ । संख्येयासंख्येयाश्च पुद्गलानाम् । १० । नाणोः । ११ । लोकाकाशेऽवगाहः । १२ । धर्माधर्मयोः कृत्स्ने । १३ । एकप्रदेशादिषु भाज्यः पुद्गलानाम् । १४ । असंख्येयभागादिषु जीवानाम् । १५ । प्रदेश-संहार-विसर्पाभ्यां प्रदीपवत् । १६ । गति-स्थित्युपग्रहौ धर्माधर्मयोरुपकारः । १७ । आकाशस्यावगाहः । १८ । शरीरवाङ्मनः-प्राणापानाः पुद्गलानाम् । १९ । सुख-दुःख-जीवित-मरणोपग्रहाश्च । २० । परस्परोपग्रहो जीवानाम् । २१ । वर्तना-परिणाम-क्रिया-परत्वापरत्वे च कालस्य । २२ । स्पर्श-रस-गन्ध-वर्णवन्तः पुद्गलाः । २३ । शब्द-बन्ध-सौक्ष्म्य-स्थौल्य-संस्थान-भेद-तमश्छायातपोद्योतवन्तश्च । २४ । अणवः स्कन्धाश्च ।२५। भेद-संघातेभ्यः उत्पद्यन्ते ।२६। भेदादणुः । २७ । भेद-संघाताभ्यां चाक्षुषः । २८ । सद्-द्रव्य-लक्षणम् । २९ । उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य-युक्तं सत् । ३० । तद्भावाव्ययं नित्यम् । ३१ । अर्पितानर्पितसिद्धेः । ३२ । स्निग्ध-रूक्षत्वाद्बन्धः ।३३। न जघन्य-गुणानाम् । ३४ । गुणसाम्ये सदृशानाम् । ३५ । द्व्यधिकादि गुणानां तु । ३६ । बन्धेऽधिकौ पारिणामिकौ च

। ३७ । गुणपर्ययवद् द्रव्यम् । ३८ । कालश्च । ३९ । सोऽनन्तसमयः । ४० । द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः । ४१ । तद्भावः परिणामः । ४२ ।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे पञ्चमोऽध्यायः ॥५॥

काय-वाङ्मनः कर्म योगः । १ । स आस्रवः । २ । शुभः पुण्यस्याशुभः पापस्य । ३ । सकषायाकषाययोः साम्परायिकेर्यापथयोः । ४ । इन्द्रिय-कषायाव्रत-क्रियाः पञ्च-चतुः-पंच-पंचविंशति-संख्याः पूर्वस्य भेदाः । ५ । तीव्र-मन्द-ज्ञाताज्ञात भावाधिकरण-वीर्य-विशेषेभ्यस्तद्विशेषः ।६। अधिकरणं जीवाजीवाः । ७ । आद्यं संरम्भ-समारम्भारम्भ-योग-कृत-कारितानुमत-कषाय-विशेषैस्त्रिस्त्रिस्त्रिश्चतुश्चैकशः । ८ । निर्वर्तना-निक्षेप-संयोग-निसर्गा द्वि-चतुर्द्वि-त्रि-भेदाः परम् ।९। तत्प्रदोष-निह्नव-मात्सर्यान्तरायासाद-नोपघाता ज्ञान-दर्शनावरणयोः । १० । दुःख-शोक-तापाक्रन्दन-वध-परिदेवनान्यात्म-परोभय-स्थानान्यसद्-वेद्यस्य । ११ । भूतव्रत्यनुकम्पादान-सरागसंयमादियोगः क्षान्तिः शौचमिति सद्वेद्यस्य । १२ । केवलि-श्रुत-संघ-धर्म-देवावर्णवादो दर्शनमोहस्य । १३ । कषायोदयात्तीव्रपरिणामश्चारित्रमोहस्य । १४ । बह्वारम्भ-परिग्रहत्वं नारकस्यायुषः । १५ । माया तैर्यग्योनस्य । १६ । अल्पारम्भ-परिग्रहत्वं मानुषस्य । १७ । स्वभाव-मार्दवं च । १८ । निःशील-व्रतत्वं च सर्वेषाम् । १९ । सरागसंयम-संयमासंयमाकाम-

निर्जरा बालतपांसि देवस्य । २० । सम्यक्त्वं च । २१ । योगवक्रता विसंवादनं चाशुभस्य नाम्नः । २२ । तद्विपरीतं शुभस्य । २३ । दर्शनविशुद्धिर्विनयसम्पन्नता-शीलव्रतेष्वनतीचारोऽभीक्ष्ण-ज्ञानोपयोग - संवेगौ शक्तितस्त्याग-तपसी साधु—समाधिर्वैयावृत्यकरणमर्हदाचार्य-बहुश्रुत-प्रवचन-भक्तिरावश्यकापरिहाणिर्मार्गप्रभावना प्रवचन-वत्सलत्वमिति तीर्थंकरत्वस्य । २४ । परात्म-निंदा-प्रशंसे सदसद्गुणोच्छादनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य । २५ । तद्विपर्ययो नीचैर्वृत्त्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य ।२६। विघ्नकरणमन्तरायस्य ।२७।

।। इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे षष्ठोऽध्याय ।।६।।

हिंसानृत—स्तेयाब्रह्म—परिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतम् । १ । देश—सर्वतोऽणु—महती । २ । तत्स्थैर्यार्थं—भावनाः पंच-पंच । ३ । वाङ्मनोगुप्तीर्यादाननिक्षेपण—समित्यालोकित-पान-भोजनानि पंच । ४ । क्रोध-लोभ-भीरुत्व-हास्य—प्रत्याख्यानान्यनुवीचि—भाषणं च पंच । ५ । शून्यागार-विमोचितावास-परोपरोधाकरण-भैक्ष्यशुद्धि-सधर्माऽविसंवादाः पंच ।६। स्त्रीरागकथाश्रवण-तन्मनोहरांगनिरीक्षण—पूर्वरतानुस्मरण—वृष्येष्टरस—स्वशरीरसंस्कारत्यागाः पंच । ७ । मनोज्ञामनोज्ञेन्द्रिय-विषय-राग-द्वेष-वर्जनानि पंच । ८ । हिंसादिष्विहामुत्रापायावद्यदर्शनम् । ९ । दुःखमेव वा । १० । मैत्री-प्रमोद-कारुण्य-माध्यस्थ्यानि च सत्त्व-गुणाधिक-क्लिश्यमानाऽविनयेषु ।११। जगत्काय—स्वभावौ वा संवेग-वैराग्या-

र्थम् । १२ । प्रमत्तयोगात्प्राण व्यपरोपणं हिंसा । १३ ।
असदभिधानमनृतम् । १४ । अदत्तादानं स्तेयम् । १५ ।
मैथुनमब्रह्म । १६ । मूर्च्छा परिग्रहः । १७ । निःशल्यो
व्रती । १८ । अगार्यनगारश्च । १९ । अणुव्रतोऽगारी
। २० । दिग्देशानर्थदण्ड विरति-सामायिक-प्रोषधोपवासोप-
भोग-परिभोग-परिमाणातिथि-संविभाग-व्रत-सम्पन्नश्च।२१।
मारणान्तिकीं सल्लेखनां जोषिता । २२ । शङ्का-कांक्षा-
विचिकित्सान्यदृष्टि-प्रशंसा-संस्तवाः सम्यग्दृष्टेरतीचाराः ।२३।
व्रत-शीलेषु पञ्च पञ्च यथाक्रमम् । २४। बन्ध-वध-च्छेदा-
तिभारारोपणान्नपान-निरोधाः । २५ । मिथ्योपदेश-रहो-
भ्याख्यान-कूटलेखक्रिया-न्यासापहार-साकारमन्त्रभेदाः ।२६।
स्तेनप्रयोग-तदाहृतादान-विरुद्धराज्यातिक्रम-हीनाधिकमानो-
न्मान-प्रतिरूपकव्यवहाराः । २७। परविवाहकरणेत्वरिका-
परिगृहीतापरिगृहीतागमनानङ्गक्रीडा– कामतीव्राभिनिवेशाः
। २८ । क्षेत्रवास्तु-हिरण्यसुवर्ण-धनधान्य–दासीदास–कुप्य-
प्रमाणातिक्रमाः । २९ । ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्व्यतिक्रम-क्षेत्रवृद्धि-
स्मृत्यन्तराधानानि । ३० । आनयन-प्रेष्यप्रयोग-शब्द-रूपानु-
पात-पुद्गलक्षेपाः । ३१ । कन्दर्प-कौत्कुच्य-मौखर्यासमीक्ष्या-
धिकरणोपभोगपरिभोगानर्थक्यानि ।३२। योग-दुःप्रणिधाना-
नादर-स्मृत्यनुपस्थानानि ।३३। अप्रत्यवेक्षिताप्रमार्जितोत्स-
र्गादान-संस्तरोपक्रमणानादर-स्मृत्यनुपस्थानानि।३४।सचित्त-
सम्बन्ध सम्मिश्राभिषव-दुःपक्वाहाराः ।३५। सचित्त-निक्षेपा-

पिधान-परव्यपदेश-मात्सर्य-कालातिक्रमाः ।३६। जीवित-मरणाशंसा-मित्रानुराग-सुखानुबन्ध-निदानानि । ३७ । अनुग्रहार्थं स्वस्यातिसर्गो दानम् । ३८ । विधि-द्रव्य-दातृ-पात्र-विशेषात्तद्विशेषः । ३९ ।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः ॥७॥

मिथ्यादर्शनाविरति-प्रमाद-कषाय-योगा बन्धहेतवः ।१। सकषायत्वाज्जीवः कर्मणो योग्यान् पुद्गलानादत्ते स बन्धः ।२। प्रकृति-स्थित्यनुभाग-प्रदेशास्तद्विधयः । ३ । आद्योज्ञान-दर्शनावरण-वेदनीय-मोहनीयायुर्नाम गोत्रान्तरायाः ।४। पञ्च नव-द्व्यष्टाविंशति-चतुर्द्विचत्वारिंशद्-द्वि-पञ्च-भेदो यथा-क्रमम् ।५। मति-श्रुतावधि-मनःपर्यय-केवलानाम् ।६। चक्षुर-चक्षुरवधिकेवलानां निद्रा-निद्रानिद्रा-प्रचला-प्रचलाप्रचला-स्त्यानगृद्धयश्च ।७। सदसद्वेद्ये ।८। दर्शन-चारित्र-मोहनीया-कषायाकषायवेदनीयाख्यास्त्रि-द्वि-नव-षोडशभेदाः सम्यक्त्व-मिथ्यात्व-तदुभयान्यकषायकषायौ हास्य-रत्यरतिशोक-भय-जुगुप्सा-स्त्री-पुन्नपुंसक-वेदाः अनन्तानुबन्ध्यप्रत्याख्यान-प्रत्या-ख्यान-संज्वलन विकल्पाश्चैकशः क्रोध-मान-माया-लोभाः ।९। नारक-तैर्यग्योन-मानुषदैवानि ।१०। गति-जाति-शरीराङ्गो-पाङ्ग-निर्माण-बन्धन-संघात-संस्थान-संहनन-स्पर्श-रस-गन्ध-वर्णानुपूर्व्यागुरुलघूपघात-परघातातपो-द्योतोच्छ्वासविहायोग-तयः प्रत्येकशरीर-त्रस-सुभग-सुस्वर-शुभ-सूक्ष्म-पर्याप्ति-स्थिरा-देय-यशः कीर्ति-सेतराणि तीर्थंकरत्व च ॥ ११ ॥ उच्चैर्नी-

यंश्च । १२ । दान-लाभ-भोगोपभोग-वीर्याणाम् । १३ ।
आदितस्तिसृणामन्तरायस्य च त्रिंशत्सागरोपम-कोटीकोट्यः
परा स्थितिः । १४ । सप्ततिर्मोहनीयस्य । १५ । विंशति-
र्नाम-गोत्रयोः । १६ । त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाण्यायुषः ।१७।
अपरा द्वादश-मुहूर्ता वेदनीयस्य । १८ । नाम-गोत्रयोरष्टौ
।१९। शेषाणामन्तर्मुहूर्ता । २० । विपाकोऽनुभवः । २१ ।
स यथानाम ।२२। ततश्च निर्जरा । २३ । नाम-प्रत्ययाः
सर्वतो योग-विशेषात् सूक्ष्मैक-क्षेत्रावगाढ-स्थिताः सर्वात्म-प्रदे-
शेष्वनन्तानन्त-प्रदेशाः । २४ । सद्वेद्य-शुभायुर्नाम-गोत्राणि
पुण्यम् ।२५। अतोऽन्यत्पापम् । २६ ।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रेऽष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

आस्रव-निरोधः संवरः । १ । स गुप्ति-समिति-धर्मानु-
प्रेक्षा-परीषहजय-चारित्रैः । २ । तपसा निर्जरा च । ३ ।
सम्यग्योग-निग्रहो गुप्तिः । ४ । ईर्याभाषैषणादाननिक्षेपो-
त्सर्गाः समितयः ।५। उत्तम-क्षमा-मार्दवार्जव-शौच-सत्य-
संयम-तपस्त्यागाकिञ्चन्य-ब्रह्मचर्याणि धर्मः । ६ । अनि-
त्याशरण-संसारैकत्वान्यत्वाशुच्यास्रव-संवर-निर्जरा-लोक-बोधि-
दुर्लभ-धर्मस्वाख्या-तत्त्वानुचिन्तनमनुप्रेक्षाः ।७। मार्गाच्यवन-
निर्जरार्थं परिषोढव्याः परीषहाः ।८। क्षुत्पिपासा-शीतोष्ण-
दंशमशक-नाग्न्यारति-स्त्री-चर्या-निषद्या-शय्याक्रोश-वध-याचना-
लाभ-रोग-तृणस्पर्श-मल-सत्कारपुरस्कार-प्रज्ञाऽज्ञानादर्शनानि
। ९ । सूक्ष्मसाम्पराय-छद्मस्थ-वीतरागयोश्चतुर्दश । १० ।

एकादश जिने । ११ । बादरसाम्पराये सर्वे ।१२। ज्ञानावरणे प्रज्ञ ज्ञाने ।१३। दर्शनमोहान्तराययोरदर्शनालाभौ ।१४। चारित्र-मोहे नाग्न्यारति-स्त्री-निषद्याक्रोश-याचना-सत्कारपुरस्काराः । १५ । वेदनीये शेषाः । १६ । एकादयो भाज्या युगपदेकस्मिन्नैकोनविंशतेः ।१७। सामायिक–छेदोपस्थापना-परिहारविशुद्धि-सूक्ष्मसाम्पराय-यथाख्यातमिति चारित्रम् ।१८ अनशनावमौदर्य-वृत्तिपरिसख्यान-रसपरित्याग-विविक्तशय्यासन-कायक्लेशा बाह्यं तपः ।१९। प्रायश्चित-विनय-वैयावृत्य-स्वाध्याय-व्युत्सर्ग-ध्यानान्युत्तर । २० । नव-चतुर्दश-पंच-द्वि-भेद यथाक्रमं प्राग्ध्यानात् । २१ । आलोचन–प्रतिक्रमण–तदुभय-विवेक-व्युत्सर्ग तपश्छेद-परिहारोपस्थापनाः।२२।ज्ञान-दर्शन-चारित्रोपचाराः ।२३। आचार्योपाध्याय-तपस्वि-शैक्ष-ग्लान-गण-कुल-सङ्घ-साधु-मनोज्ञानाम् ।२४। वाचना-पृच्छना-नुप्रेक्षाम्नाय-धर्मोपदेशः ।२५। बाह्याभ्यन्तरोपध्योः । २६ । उत्तमसहननस्यैकाग्रचिन्ता-निरोधो ध्यानमान्तर्मुहूर्तात् ।२७। आर्त्तरौद्र-धर्म्य–शुक्लानि । २८ । परे मोक्ष-हेतू । २९ । आर्तममनोज्ञस्य संप्रयोगे तद्विप्रयोगाय स्मृति-समन्वाहारः । ३० । विपरीत मनोज्ञस्य । ३१ । वेदनायाश्च । ३२ । निदान च ।३३। तदविरत-देशविरत-प्रमत्तसयतानाम् ।३४। हिंसानृत-स्तेय-विषयसरक्षणेभ्यो रौद्रमविरत-देशविरतयोः । ३५ । आज्ञापाय-विपाक-सस्थान-विचयाय धर्म्यम् । ३६ । शुक्ले चाद्ये पूर्वविदः । ३७ । परे केवलिनः । ३८ । पृथ-

त्त्वैकत्ववितर्क--सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति---व्युपरतक्रियानिवर्तीनि । ३९ । त्र्येकयोगकाययोगानाम् । ४० । एकाश्रये सवितर्क-वीचारे पूर्वे । ४१ । अवीचारं द्वितीयम् । ४२ । वितर्कः श्रुतम् । ४३ । वीचारोऽर्थव्यञ्जन-योग-संक्रान्तिः । ४४ । सम्यग्दृष्टि-श्रावक-विरतानन्तवियोजक-दर्शनमोह-क्षपकोपशमकोपशान्तमोह-क्षपक-क्षीणमोह-जिनाः क्रमशोऽसंख्येयगुण-निर्जराः । ४५ । पुलाक-वकुश-कुशील-निर्ग्रन्थ-स्नातकाः निर्ग्रन्थाः ।४६। संयम-श्रुत-प्रतिसेवना-तीर्थ-लिङ्ग-लेश्योपपाद-स्थान-विकल्पतः साध्याः । ४७ ।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्ष शास्त्रे नवमोऽध्याय ।९॥

मोहक्षयाज्ज्ञान-दर्शनावरणान्तराय-क्षयाच्च-केवलम् ।१। बन्धहेत्वभाव-निर्जराभ्यां कृत्स्न-कर्म-विप्रमोक्षो मोक्षः । २ । औपशमिकादि-भव्यत्वानां च । ३ । अन्यत्र केवलसम्यक्त्व-ज्ञान-दर्शन-सिद्धत्वेभ्यः । ४ । तदनन्तरमूर्ध्वं गच्छत्यालोकान्तात् । ५ । पूर्वप्रयोगादसङ्गत्वाद् बन्धच्छेदात्तथागतिपरिणामाच्च । ६ । आविद्धकुलालचक्रवद्-व्यपगतलेपालाबूवदेरण्डबीजवदग्निशिखावच्च । ७ । धर्मास्तिकायाभावात् ।८। क्षेत्र–काल–गति–लिङ्ग–तीर्थ–चारित्र–प्रत्येकबुद्ध–बोधित–ज्ञानावगाहनान्तर-संख्याल्पबहुत्वतः साध्याः । ९ ।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे दशमोऽध्यायः ॥१०॥

कोटिशतं द्वादश चैव कोट्यो लक्षाण्यशीतिस्त्र्यधिकानि चैव ।
पञ्चाशदष्टौ च सहस्रसंख्यामेतद्श्रुतं पञ्चपदं नमामि ॥१॥
।अरहंत–भासियत्थं गणहरदेवेहिं गंथियं सव्वं ।

पणमामि-भत्ति-जुत्तो, सुदरगारगमहोवय सिरसा ।। २ ।।
अक्षर-मात्र-पद-स्वर-हीनं व्यञ्जन-संधि-विविजत-रेफम् ।
साधुभिरत्र मम क्षमितव्य को न विमुह्यति शास्त्रसमुद्रे ।
दशाध्याये परिच्छिन्ने तत्वार्थे पठिते सति ।
फलं स्यादुपवासस्य भाषित मुनिपुङ्गवैः । ४।।
तत्त्वार्थसूत्रकर्त्तारं गृद्ध्रपिच्छोपलक्षितम् ।
वन्दे गणीन्द्र-संजातमुमास्वामिमुनीश्वरम् ।। ५ ।।
जं सक्कइ त कीरइ, ज पुण सक्कइ तहेव सद्दहणं ।
सद्दहमाणो जीवो पावइ अजरामरं ठाणं ।। ६ ।।
तवयरणं वयधरण, सञ्जमसरण च जीवदयाकरणम् ।
अते समाहिमरण, चउविह दुक्ख णिवारेई ।। ७ ।।

इति तत्त्वार्थसूत्रापरनाम तत्त्वार्थाधिगममोक्षशास्त्रम् समाप्तम् ।

भक्तामर-स्तोत्र भाषा

(स्व० प० हेमराजजी कृत)

दोहा—आदि पुरुष आदीश जिन, आदि सुविधिकरतार ।
धरमधुरन्धर परमगुरु, नमो आदि अवतार ।।१।।

चौपई १५ मात्रा

सुर-नत-मुकुट-रतन छवि करं, अंतरपापतिमिर सब हरं ।
जिन पद बन्दौं मनवचकाय, भवजल पतित-उधरन सहाय।१।
श्रुतपारग इन्द्रादिकदेव, जाकी थुति कीनी कर सेव ।
शब्दमनोहर अरथ विशाल, तिस प्रभु की वरनो गुणमाल ।२।
विबुध-वद्यपद मैं मतिहीन, हो निलज्ज थुति-मनसा कीन ।
जल-प्रतिबिम्ब बुद्ध को गहै, शशिमण्डल बालक ही चहै ।३।

गुणसमुद्र तुम गुण अविकार, कहत न सुरगुरु पावै पार ।
प्रलयपवन उद्धत जलजन्तु, जलधि तिरै को भुज-बलवन्तु।४।
सो मैं शक्तिहीन थुति करूं । भक्तिभाववश कछु नहिं डरूं ।
ज्यों मृगि निजसुत पालन हेत, मृगपति सन्मुख जाय अचेत।५।
मैं शठ सुधी हंसन को धाम, मुझ तव भक्ति बुलावै राम ।
ज्यों पिक अम्बकली परभाव, मधुऋतु मधुर करै आराव ।६।
तुम जस जपत जन छिनमांहि, जनम जनम के पाप नशांहि ।
ज्यों रवि उगै फटै ततकाल, अलिवत् नील निशा-तम-जाल।७।
तव प्रभावतैं कहूं विचार, होसी यह थुति जन-मन-हार ।
ज्यों जल कमलपत्र पै परै, मुक्ताफल की दुति विस्तरै ।८।
तुम गुण महिमा हत-दुख-दोष, सो तो दूर रहो सुख-पोष ।
पापविनाशक है तुम नाम, कमलविकासी ज्यों रविधाम ।९।
नहिं अचम्भ जो होंहि तुरन्त, तुमसे तुम गुण वरनत सन्त ।
जो अधीन को आप समान,करै न सो निन्दित धनवान ।१०।
इकटक जन तुमको अविलोय, और विषै रति करै न सोय ।
को करि क्षीर-जलधि-जलपान, क्षारनीर पीवै मतिमान।११।
प्रभु तुम वीतराग गुणलीन, जिन परमाणु देह तुम कीन ।
हैं तितने ही ते परमानु, यातैं तुम सम रूप न आनु ।१२।
कहं तुम मुख अनुपम अविकार, सुर-नर-नाग-नयन-मनहार ।
कहां चन्द्र–मण्डल सकलंक, दिन मे ढाकपत्र सम रंक ।१३।
पूरणचन्द्र–ज्योति छविवंत, तुम गुण तीन जगत लंघत ।
एक नाथ त्रिभुवन आधार, तिन विचरत को करै निवार ।१४

महत तोहि जानके न होय वश्य काल के,
न और मोहि मोखपंथ देय तोहि टालके ।२३,
अनन्त नित्य चित्त के अगम्य रम्य आदि हो,
असख्य सर्वव्यापि विष्णु ब्रह्म हो अनादि हो ।
महेश कामकेतु योग–ईश योग–ज्ञान हो,
अनेक एक ज्ञानरूप शुद्ध सत-मान हो ।२४।
तुही जिनेश बुद्ध है सुबुद्धि के प्रमानतैं,
तुही जिनेश शङ्करो जगत्त्रये विधानतैं ।
तुही विधात है सही सुमोखपथ धारतैं,
नरोत्तमो तुही प्रसिद्ध अर्थ के विचारतैं ।२५।
नमो करूं जिनेश तोहि आपदा–निवार हो,
नमो करूं सुभूरि भूमिलोक के सिगार हो ।
नमो करूं भवाब्धि-नीर-राशि-शोख हेतु हो,
नमो करूं महेश तोहि मोक्ष-पथ देतु हो ।२६।

चौपाई १५ मात्रा

तुमजिन पूरन गुणगण भरे, दोष गर्व करि तुम परिहरे ।
और देवगण आश्रय पाय, स्वप्न न देखे तुम फिर आय ।२७।
तरु अशोकतर किरन उदार, तुम तन शोभित है अविकार ।
मेघ निकट ज्यो तेज फुरंत,दिनकर दिपै ज्यो तिमिर निहृत।२
सिंहासन मणिकिरण विचित्र, तापर कंचनवरन पवित्र ।
तुम तनु शोभित किरण विथार, ज्यो उदयाचल रवि तमहार
कुन्द-पुहुप-सित-चमर ढुरत, कनक–वरण तुम तन शोभत ।

ज्यों सुमेरुतट निर्मल कांति, झरना झरैं नीर उमगांति ।३०।
ऊंचे रहैं सूरि-दुति लोप, तीन छत्र तुम दिपैं अगोप ।
तीन लोक की प्रभुता कहैं, मोती झालरसो छवि लहैं ।३१।
दुंदुभि शब्द गहर गम्भीर, चहु दिशि होय तुम्हारे धीर ।
त्रिभुवनजन शिवसंगम करैं, मानों जय जय रव उच्चरैं ।३२।
मन्द पवन गंधोदक इष्ट, विविध कल्पतरु पुहुप सुवृष्ट ।
देव करैं विकसित दल सार, मानो द्विजपंक्ति अवतार ।३३।
तुमतन भामन्डल जिनचन्द, सब दुतिवंत करत है मन्द ।
कोटि शंख रवितेज छिपाय, शशि निर्मल निशि करैं अछाय ।३४
स्वर्ग मोक्ष मारग संकेत, परम धरम उपदेशन हेत ।
दिव्य वचन तुम खिरैं अगाध, सबभाषा-गर्भित हितसाध ।३५।
दोहा—विकसित सुवरन कमल दुति, नख-दुति मिलि चमकाहिं
तुमपद पदवी जहँ धरो, तहँ सुर कमल रचाहिं ।।३६।।
जैसी महिमा तुम विषैं, और धरै नहिं कोय ।
सूरज मे जो ज्योति है, नहि तारागण होय ।।३७।।

पट्पद

मद अवलिप्त कपोल-मूल, अलि कुल झंकारे,
तिन सुन शब्द प्रचंड, क्रोध उद्धत अति धारे ।
कालवरन विकराल, कालवत् सन्मुख आवै,
ऐरावत सो प्रबल, सकल जन भय उपजावै ।।
देखि गयन्द न भय करैं, तुम पद महिमा लीन ।
विपतिरहित सम्पति सहित, वरतैं भक्त अदीन ।।३८।।

अति मदमत्त-गयन्द, कुम्भथल नखन विदारै,
मोती रक्त समेत, डारि भूतल सिंगारे।
बांकी दाढ विशाल, बदन में रसना लोलै,
भीम-भयानक रूप देखि, जन थरहर डोलै।
ऐसे मृगपति पगतलै, जो नर आयो होय।
शरण गये तुम चरण की, बाधा करै न सोय ॥३९॥
प्रलय पवन कर उठी, आग जो तास पटतर,
वमैं फुलिंग शिखा-उतङ्ग पर जलै निरन्तर।
जगत समस्त निगल्ल, भस्म करदेगी मानों,
तडतडाट दव- अनल, जोर चहुँदिशा उठानो।
सो इक छिन में उपशमे, नाम नीर तुम लेत।
होय सरोवर परिणमे, विकसित कमल समेत ॥४०॥
कोकिलकण्ठ समान श्यामतन क्रोध जलंता।
रक्त नयन फुंकार, मार विष-कण उगलता ॥
फण को ऊंचो करैं, वेग ही सनमुख धाया।
तब जन होय निशङ्क, देख फणपति को आया।
जो चांपै निज पगतलै, व्यापै विष न लगार।
नागदमनि तुम नाम की, है जिनके आधार ॥४१॥
जिस रण माँहि भयानक, रव कर रहे तुरङ्गम,
घन सम गज गरजाहि,मत्त मानों गिरि-जङ्गम।
अति कोलाहल माँहि, बात जहँ नाँहि सुनीजै,
राजन को परचंड, देख बल धीरज छीजै।

नाथ तिहारे नाम तें, सो छिन माँहि पलाय ।
ज्यो दिनकर परकाशतें अन्धकार विनशाय ।।४२।।
मारे जहाँ गयन्द, कुम्भ हथियार विदारे,
उमगे रुधिर–प्रवाह, वेग जलसम विस्तारे,
होय तिरन असमर्थ, महाजोधा बलपूरे ।
तिस रन मे जिन तोर, भक्त जे हैं नर सूरे ।
दुर्जय अरिकुल जीत के, जय पावैं निकलङ्क ।
तुम पदपङ्कज मन वसैं, ते नर सदा निशङ्क ।।४३।।
नक्र चक्र मगरादि, मच्छकरि भय उपजावैं,
जामे वड़वा अग्नि, दाहतैं नीर जलावैं ।
पार न पावैं जास, थाह नहिं लहिए जाकी,
गरजैं अति गम्भीर, लहर की गिनती न ताकी ।
सुखसो तिरे समुद्र को, जे तुम गुण सुमराँहि ।
लोल कलोलन के शिखर, पार यान ले जाँहि ।।४४।।
महा जलोदर रोग, भार पीडित नर जे हैं,
वात पित्त कफ कुष्ट, आदि जो रोग गहे हैं ।
सोचत रहैं उदास, नाहिं जीवन की आशा,
अति घिनावनी देह, धरैं दुर्गन्धि निवासा ।
तुम पद-पङ्कज धूल को, जो लावैं निज अङ्ग ।
ते नीरोग शरीर लहि, छिन मे होंहि अनङ्ग ।।४५।।
पांव कंठतैं जकर बांध सांकल अति भारी,
गाढी वेडी पैर माँहि जिन जाघ विदारी ।

भूख प्यास चिन्ता शरीर, दुख जे बिललाने,
शरण नाँहि जिन कोय, भूप के बन्दीखाने ।
तुम सुमरत स्वयमेवही, बन्धन सब खुल जाँहि ।
छिन मे ते सम्पति लहैं, चिन्ता भय विनशाँहि ॥४६॥
महामत्त गजराज, और मृगराज दवानल,
फणपति रण-परचंड, नीरनिधि रोग महाबल ।
बन्धन ये भए आठ, डरपकर मानों नाशै ।
तुम सुमरत छिनमाँहि, अभय थानक परकाशै ॥
इस अपार ससार मे शरण नाँहि प्रभु कोय ।
यातैं तुम पद भक्त को, भक्ति सहाई होय ।४७॥
यह गुणमाल विशाल, नाथ तुम गुणन संवारी,
विविध वर्णमय पुहुप, गून्थ मैं भक्ति विथारी ।
जे नर पहिरैं कठ भावना मन मैं भावैं,
मानतुङ्ग से निजाधीन, शिव लक्ष्मी पावैं ।
भाषा भक्तामर कियो, 'हेमराज' हितहेत ।
जे नर पढै सुभाव सों, ते पावैं शिव-खेत ॥४८॥ इति ॥

संकट हरण स्तुति

हो दीन बन्धु श्रीपति, करुणानिधानजी ।
अब मेरी विथा क्यो न हरो, वार क्या लगी ॥
मालिक हो तो जहान के जिनराज आपही । ऐबो हुनर हमारा तुमसे छिपा नहीं । बेजान में गुनाह जो मुझसे बना सही । कंकरी के चोर को कटार मारिये नहीं ।हो दीन.।१।

दुख दर्द दिल का आपसे जिसने कहा सही। मुश्किल कहर बहर से लई है भुजा गही ।। सब वेद औ पुराण मे प्रमाण है यही। आनंदकंद श्री जिनेन्द्रदेव है तुही ।दीन.२।

हाथी पै चढ़ी जाती थी सुलोचना सती। गंगा मे ग्राह ने गही गजराज की गति। उस वक्त मे पुकार किया था तुम्हें सती। भय टार के उबार लिया हो कृपापती ।हो दीन.।३।

पावक प्रचण्ड कुण्ड में उमण्ड जब रहा। सीता से शपथ लेने को तब रामने कहा। तुम ध्यान धर जानकी पग धारती तहाँ। तत्काल ही सर स्वच्छ हुआ कमल लहलहा ।दीन ।४

जब द्रौपदी का चीर दु:शासन ने था गहा। सबही सभाके लोग कहते थे ह हा ह हा। उस वक्त भीर पीरमे तुमने करी सहा। पडदा ढका सती का सुयश जगत मे रहा ।हो दी.।५।

सम्यक्त्व शुद्धशीलवति चंदना सती। जिसके नजीक लगती थी जाहिर रती रती। बेडी में पडी थीं तुम्हें जब ध्यावती हुती। तब वीर धीर ने हरी दुख द्वन्द्व को गति।हो.।६।

श्रीपाल को सागर विषै जब सेठ गिराया। उसकी रमा से रमने को आया था बेहया। उस वक्त संकट में सतीने तुमको जो ध्याया, दुख द्वन्द्व फंद मेटके आनन्द बढाया ।हो दी.।७।

हरिषेण की माता को जब सौत सताया। रथ जैन का तेरा चले पीछे मे बताया। उस वक्त अनशन मे सती तुमको जो ध्याया। चक्रीश हो सुत उसकेने रथ जैन चलाया।होदी.८

जब अंजना सती को हुआ गर्भ उजाला। तब सासुने कलंक

सगा घर से निगाला । वन बर्ग के उपसर्ग में सती तुमको चितारा । प्रभु भक्तियुत जानकें भय देव निवारा ।होदी.।६

सोमा से कहा जो तू सती शील विशाला । सो कुंभ में से काढ भला नाग हो काला । उस वक्त तुम्हें ध्याय के सती हाथ जो डाला । तत्काल ही वह नाग हुआ फूल की माला ।हो.१०

जब कुष्टरोग था हुआ श्रीपाल राज को । मैनासती तब आपको पूजा इलाजको । तत्काल ही सुन्दर किया श्रीपालराज को । वह राज भोग भोगि गया मुक्तिराज को ।हो दीन.।११।

जब सेठ सुदर्शन को मृषा दोष लगाया । रानी के कहे भूप ने शूली पे चढाया । उस वक्त तुम्हें सेठ ने निज ध्यान में ध्याया । शूली उतार उसको सिंहासन पे बिठाया हो.।१२।

जब सेठ सुधन्नाजी को वापी में गिराया । ऊपर से दुष्ट था उसे वह मारने आया । उस वक्त तुम्हें सेठ ने दिल अपने में ध्याया । तत्काल ही जजाल से तब उसको बचाया ।हो.१३

इक सेठ के घर मे किया दारिद्र ने डेरा । भोजन का ठिकाना भी न था सांझ सवेरा । उस वक्त तुम्हें सेठ ने जब ध्यान मे घेरा । घर उसके मे तब कर दिया लक्ष्मी का बसेरा ।हो.१४

बलि वाद में मुनिराज सो जब पार न पाया । तब रात को तलवार ले शठ मारने आया । मुनिराज ने निज ध्यान मे मन लीन लगाया । उस वक्त हो परतक्ष तहां देव बचाया ।हो.१५

जब राम ने हनुमंत को गढ लंक पठाया । सीता की खबर लेने को बिलफौर सिधाया । मग बीच दो मुनिराज की

लख आग मे काया। झट वारि मूसलधार से उपसर्ग बुझाया ।। हो दीन० ।।१६।।

जिननाथ ही को माथ नवाता था उदारा। घेरे मे पडा था वह कु भकरण विचारा। उस वक्त तुम्हे प्रेम से सकट मे उचारा । रघुवीर ने सब पीर तहां तुरत निवारा। हो. ।१७।

रणपाल कु वर के पडी थी पाव मे बेरी, उस वक्त तुम्हें ध्यान मे आया था सबेरी। तत्काल ही सुकुमार की सब झड पडी बेरी। तुम राजकु वर की सभी दुख द्वन्द्व निवेरी।हो.१८

जब सेठ के नन्दन को डसा नाग जु कारा। उस वक्त तुम्हे पीर मे धर धीर पुकारा। तत्काल ही उस बालका विषभूरि उतारा। वह जाग उठा सो के मानो सेज सकारा।हो १६।

मुनि मानतु ग को दई जब भूप ने पीरा। ताले मे किया बंद भारी लोह जंजीरा। मुनीश ने आदीश की थुति की है गंभीरा। चक्रेश्वरी तब आन के झट दूर की पीरा।हो।२०।

शिवकोटि ने हठ था किया सामतभद्र सों। शिवपिंड को बंदन करो शर्को अभद्र सो। उस वक्त स्वयभू रचा गुरु भाव भद्र सो। जिन चन्द्र की प्रतिमा तहा प्रगटी सुभद्रसों।हो.२१

सूवेने तुम्हे आनके फल आम चढाया। मैढक ले चला फूल भरा भक्ति का भाया। उन दोनों को अभिराम स्वर्गधाम बसाया। हम आपसे दातार को लख आज ही पाया।हो।२२

कपि स्वान सिंह नवल अज बैल विचारे। तिर्यञ्च जिन्हे रंच न था बोध चितारे। इत्यादि को सुरधाम दे शिवधाम मे

धारे । हम आपसे दातार को प्रभु आज निहारे ।हो.।।२३।। तुमही अनन्त जन्तु का भय भीर निवारा । वेदो.पुराण में गुरु गणधर ने उचारा । हम आपकी शरणागति मे आके पुकारा । तुम हो प्रत्यक्ष कल्पवृक्ष इच्छिताकारा ।हो.।।२४।

प्रभु भक्त व्यक्त भक्तियुक्त मुक्ति के दानी । आनदकंद वृन्द को हो मुक्ति के दानी । मोहि दीन जान दीनबन्धु पातक भानी । संसर विषम क्षार तार अन्तरजामी ।हो. ।।२५ ।।

करुणानिधान बान को अब क्यो न निहारो । दानी अनन्त दान के दाता हो संभारो । वृषचद नव वृन्द का उपसर्ग निवारो । संसार विषमक्षार से प्रभु पार उतारो । हो दीन बन्धु श्रीपति करुणानिधानजी । अब मेरी विथा क्यो ना हरो बार क्या लगी ।।२६।।

अथ अठाई रासा

बरत अठाई जे करें ते पावें भव पार, प्राणी ।टेक।
जम्बूद्वीप सुहावणो, लख जोजन विस्तार,प्राणी । १ ।
भरत क्षेत्र दक्षिण दिशा, पोदनपुर तिहु सार, प्राणी
विद्यापति विद्याधरो, सोमराणी राय, प्राणी बरत०।२।
चारण मुनि तहं पारणो, आये राजा गेह, प्राणी
सोमाराणी आहार दे,पुण्य बढो अति नेह, प्राणी बरत. ।३।
तिसी समय नभ देवता, चले जात विमान, प्राणी
जं जं शब्द भयो घनो, मुनिवर पूछ्यो ज्ञान, प्राणी बरत.४।

मुनिवर बोले सुन राणी, नन्दीश्वर को जात,प्राणी
जै नर करहि स्वभाव सो, ते पावे शिवकात, प्राणी वरत।५
यह वचन राणी सुनो, मन मे भयो आनन्द, प्राणी
नदीश्वर पूजा करें, ध्यावें आदि जिनेन्द्र, प्राणी वरत।।६।।
कार्तिक फागुन साढ मे, पालें मन वच देह, प्राणी
वसु दिवस पूजा करे, तीन भवातर लेय, प्राणो ।वरत.।।७।।
विद्यापति सुनि चालियो,रच्यो विमान अनूप, प्राणी
राणी बरजे राय को, तू तो मानुष भूप, प्राणी ।वरत।।८।।
मानुषोत्र लघत नहीं मानुप जेतो जात प्राणो
जिनवाणी निश्चय सही, तीन भवन विख्यात, प्राणी वर.९।
सो विद्यापति ना रहो, चलो नन्दोश्वर द्वीप, प्राणी
मानुषोत्रगिरिसो मिलो, जाय न मान महीप, प्राणी वर।१०।
मानुषोत्र की भेटते, परचो धरणि सिर भार,प्राणी
विद्यापति भव चूरियो, देव भयो सुरसार, प्राणी वरत।११।
दीप नन्दीश्वर छिनक मे, पूजा वसु विधि ठान, प्राणी
करी सु मन वचकाय से, मालादई करमान, प्राणी वर१२।
आनन्द सो फिर घर आयो, नन्दीश्वर कर जात, प्राणी
विद्यापति का रूप कर, पूछो राणी बात, प्राणी वरत.१३।
राणी बोली सुण राजा, यह तो कबहूँ न होय, प्राणी
जिनवाणी मिथ्या नही, निश्चय मनमे सोय, प्राणी वर.।१४।
नन्दीश्वर की जयमाला, राय दिखाई आन, प्राणी
अबतू साचो मोहि जाणो, पूजन करी बहुमान, प्राणी व.।१५

राणी फिर तासो कहै, यह भव परसै नाहिं, प्राणी
पश्चिमसूर्य उदयहुए, जिनवाणी शुचि ताहि, प्राणी वर.१६।
राणी सों नृप फिर बोल्यो, बावन भवन जिनाल, प्राणी
तेरह तेरह में बन्दे, पूजन करी तत्काल, प्राणी वरत ।१७।
जयमाला तहां मो मिली आयो हूं तुझ पास, प्राणी
अब तू मिथ्या मत माने, पूजा भई अवश्य, प्राणी वर.।१८।
पूरब दक्षिण में बन्दे,पश्चिम उत्तर जान, प्राणी
मैं मिथ्या नहीं भाषहूं, मोहि जिनवर की आण, प्राणी १९।
सुनि राजा से तब कहो, जिन वाणी शुभ सार, प्राणी
ढाई दीप न लघई,मानुष जन विस्तार, प्राणी वरत ।२०।
विद्यापति से सुर भयो, रूप धरो शुभ सोय, प्राणी
राणी की स्तुति करी,निश्चय समकित होय, प्राणी वर.।२१
देव कहैं अब सुन राणी, मानुषोत्र मिलो जाय, प्राणी
तिहतें चय मैं सुर भयो, पूज नन्दीश्वर आय, प्राणी वर.।२२
एक भवातर मो रहो, जिन शासन प्रमाण, प्राणी
मिथ्याती माने नहीं, श्रावक निश्चय आन, प्राणी वर.।२३।
सुरचय तहा हथिनापुरी, राज कियो भरपूर, प्राणी
परिग्रह तज संयम लियो, करम महागिर चूर, प्राणीवर.।२४
केवल ज्ञान उपाय कर, मोक्ष गयो मुनिराय, प्राणी
शाश्वत सुख विलसैं सदा, जन्म-मरण मिटाय, प्राणीवर।२५
अब राणी की सुनो कथा, सयम लीनो सार, प्राणी
तप कर चयके सुर भयो,बिलसे सुक्ख अपार, प्राणी वर।२३

राजपुरी नगरी अवतरो, राजकरो बहु भाय, प्राणी
सोलह कारण भाइयो, धर्म सुनो अधिकाय, प्राणी वरत.।२७
मुनि सङ्घाटक आइयो, माली मार जनाय, प्राणी
राजा वन्दो भाव सों, पुण्य बडो अधिकाय, प्राणी वर.।२८।
राजा मन वैरागियो, सयम लीनो सार, प्राणी
आठ सहस्र नृप साथने, यह समार असार, प्राणी वर.।२९।
केवलज्ञान उपार्ज के, दोय सहस्र निर्वाण, प्राणी
दोय सहस्र-सुर स्वर्ग के, भोगे भोग सुथान, प्राणी वर ।३०।
चार सहस्र भू-लोक मे हण्डे बहु ससार, प्राणी
काल पाय शिवपुर गये, उत्तम धर्म विचार, प्राणी वर.।३१।
वरत अठाई जे करें, तीन जन्म परमाण, प्राणी
लोकालोक जु जाणही, सिद्धारथ कुल ठाण, प्राणी वर.।३२
भव समुद्र के तरण को, वावन नौका जान, प्राणी
जो जिय करें स्वभाव सो, जिनवर सांच वखान, प्राणी वर.।३३
मन वच काया जे पढे, ते पावे भवपार, प्राणी
विनयकीर्ति मुखसों भणें, जनम सफल संसार, प्राणी
वरत अठाई जे पढे, ते पावें भवपार, प्राणी वरत.।३४।

पद्मावती स्तोत्र

जिन शासनी हंसासनी पद्मासनी माता ।
भुज चारते फल चार दे पद्मावती माता ।टेक।

जब पार्श्वनाथजी ने शुक्ल ध्यान अरम्भा ।
कमठेश ने उपसर्ग तब किया था अचम्भा ।।
निजनाथ सहित आय के सहाय किया है ।
जिननाथ को निज माथ पै चढाय लिया है ।जिन०।१।
फल बीन सुमन लीन तेरे शीश विराजै ।
जिनराज तहा ध्यान धरें आप विराजै ।।
फनिन्द ने फनी की करी जिनन्द पे छाया ।
उपसर्ग वर्ग मेटि के आनन्द वढाया ।जिन.।१।
जिनपार्श्व को हुआ तभी केवल सुज्ञान है ।
समवादिसरन की वनो रचना महान है ।।
प्रभू ने दिया धर्मार्थ काम मोक्ष दान है ।
तब इन्द्र आदि ने किया पूजा विधान है । जिन० ।। ३ ।।
जबसे किया तुम पार्श्व के उपसर्ग का विनाश ।
तबसे हुआ यश आपका त्रैलोक मे प्रकाश ।।
इन्द्रादि ने भी आपके गुण मे किया हुलास ।
किस वास्ते कि इन्द्र खास पार्श्व का है दास ।। जिन. ।४।।
धर्मानुराग रङ्ग से उमङ्ग भरी हो ।
सध्या समान लाल रङ्ग अङ्ग धरी हो ।।
जिन सन्त शीलवन्त पै तुरन्त खड़ी हो ।
मनभावनी दरसावनी आनन्द बडी हो । जिन. ।।५।।
जिन धर्म की प्रभावना का भाव किया है ।
तिन साधने भी आपकी सहाय लिया है ।।

तब आपने उस आन को बनाय दिया है।
जिनधर्म के निशान को फहराय दिया है ॥ जिन० ॥६॥
था बौद्ध ने तारा को किया कुम्भ मे थापन।
अकलङ्कजी से करते रहे वाद वेथापन ॥
तब आपने सहाय किया धाय मान घन।
तारा का हरा मान हुआ बोध उत्थापन ॥ जिन० ॥७॥
इत्यादि जहां धर्म का विवाद पडा है।
तहां आपने परवादियों का मान हारा है ॥
तुमसे यह स्याद्वाद का निशान खरा है।
इस वास्ते हम आपसे अनुराग धरा है। जिन० ॥८॥
तुम शब्द ब्रह्मरूप मन्त्र मूर्ति धरैया।
चिन्तामणी समान कामना की भरैया ॥
जप जाप जोग जैन की सब सिद्धि करैया।
परवाद के प्रयोग की तत्काल हरैया ॥ जिन० ॥९॥
लखि पार्श्व तेरे पास शत्रु त्रास तै भाजे।
अंकुश निहार दुष्ट जुष्ट दर्प को त्याजे ॥
दुख रूप खर्व गर्व को वह वज्र हरै है।
कर कञ्ज मे इक कञ्जसो सुख पुञ्ज भरे है ।जिन०।१०।
चरणारविन्द मे है नूपुरादि आभरन।
कटि मे है सार मेखला प्रमोद की करन।
उर मे है सुमन माल, सुमन भाल की माला।
पट रङ्ग अंग संग सो सोहे विशाला ॥ जिन० ॥११॥

करकञ्ज चार भूषन सो भूरि भरा है।
भवि वृन्द को आनन्द कन्द पूरि करा है।
जुग भान कान कुण्डल सो जोति धरा है।
शिर शीस फूल २ सो अतुल धरा है ।।जिन० ।।१२।।
मुख चन्द को अमद देख चन्द भी थम्भा।
छवि हेर हार हो रहा रम्भा को अचम्भा ।।
दृग तीन सहित लाल तिलक भाल धरे है।
विकसित मुखारविन्द सो आनन्द भरे है ।।जिन०।।१३।।
जो आपको त्रिकाल लाल चाह सो ध्यावे ।
विकराल भूमिपाल उसे भाल झुकावे ।।
जो प्रीत सो प्रतीति सपरीति बढावे।
सो ऋद्धि सिद्धि वृद्धि नवोनिधि को पावै ।।जिन० ।१४।
जो दीप दान के विधान से तुम्हे जपै।
सो पाप के निधान तेज पुञ्ज से दिपै।
जो भेद मन्त्र वेद मे निवेद किया है।
सो बाध के उपाय सिद्ध साध लिया है ।। जिन० ।१५।
धन धान्य का अर्थी है सो धन धान्य को पावै।
सतान का अर्थी है सो सतान खिलावै ।।
निजराज का अर्थी है सो फिर राज लहावै।
पद भ्रष्ट सुपद पायकै मनमोद बढावै ।। जिन० ।। १६।।
ग्रह क्रूर व्यन्तराल व्याल जाल पूतना।
तुम नाम के सुन हांक सो भागे है भूतना ।।

कफ वात पित्त रक्त रोग शोक शाकिनी।
तुम नाम तै डरी मही परात डाकिनी ।जिन ।।१८।।
भयभीत की हरनी है तुही मात भवानी।
उपसर्ग दुर्ग द्रावती दुर्गावती रानी।
तुम सङ्कटा समस्त कष्ट काटनी दानी।
सुखसार की करनी, तू शकरीश महारानी । जिन. ।१८।
इस वक्तमें जिन भक्त को दुख व्यक्त सतावैं।
अय मात तुझे देखिके क्या दर्द ना आवैं।
सब दिनसे तो करती रही जिन भक्त पै छाया।
किस वास्ते उस बातको ऐ मात भुलाया। जिन. ।। १६ ।।
हो मात मेरे सर्व ही अपराध छिमा कर।
होता नहीं क्या बाल से कुवाल यहां पर।
कुपुत्र तो होते हैं जगत माहि सरासर।
माता न तजै तिनसों कभी नेह जन्म भर। जिन. ।।२०।।
अब मात मेरी बात को सब भांत सुधारो।
मन कामना को सिद्ध करो विघ्न विदारो।
मति देर करो मेरी ओर नेक निहारो।
करकञ्ज की छाया करो दुख दर्द निवारो ।जिन.।।२१।।
ब्रह्माण्डनी खलमर्दनी सुखमण्डनी ख्याता।
दुख टारिके परिवार सहित दे मुझे साता।।
तज के विलम्ब अम्बकी अवलम्ब दीजिये।
वृष चन्द नन्द वृन्दको आनन्द कीजिये ।। जिन० ।।२२।।

जिन धर्म से डिगने का कहीं आ पड़े कारन ।
तो लीजिये उबार मुझे भक्त उधारन ।।
निजकर्म के संजोग से जिस जौन में जावो ।
तहा दीजिए सम्यक्त्व जो शिवधाम को पावो ।।
जिन शासनी हंसासनी पद्मावती माता ।
भुज चारतें फल चारु दे पद्मावती माता ।।२३।।

श्री महावीर चालीसा

(शमशाबाद निवासी स्व० पूरनमल कृत)

दोहा—सिद्ध समूह, नमों सदा, अरु सुमरूं अरिहन्त ।
निर आकुल, निर्वाच्छ हो, भए लोक से अन्त ।।
विघ्न हरण मंगल करन, वर्धमान महावीर ।
तुम चिंतत चिंता मिटै, हो प्रभु चर्म शरीर ।।

चौपाई

जय महावीर दया के सागर, जय श्रीसन्मति ज्ञान उजागर ।
शांत छबि मूरत अति प्यारी, वेष दिगम्बर के तुम धारी ।।
कोटि भानु से अति छबि छाजे, देखत तिमिर पाप सब भाजे।
महाबली अरि कर्म बिदारे, जोधा मोह सुभट से मारे ।।
काम क्रोध तजि छोडी माया, क्षण मे मान कषाय भगाया ।
रागी नहीं नहीं तू द्वेषी, वीतराग तू हित उपदेशी ।।
प्रभु तुम नाम जगत मे सांचा, सुमिरत भागत भूत पिशाचा ।
राक्षस यक्ष डाकिनी भागे, तुम चिंतत भय कोई न लागे ।

महा शूल को जो तन धारे, होवे रोग असाध्य निवारे।
व्याल कराल होय फणधारी,विषको उगले क्रोध कर भारी।
महाकाल सम करैं डसन्ता, निर्विष करो आप भगवन्ता।
महामत्त गज मद को झारैं, भगैं तुरत जब तोहि पुकारैं॥
फार डाढ सिंहादिक आवैं, ताको हे प्रभु तुही भगावैं।
होकर प्रबल अग्नि जो जारैं, तुम प्रताप शीतलता धारैं॥
शस्त्रधार अति युद्ध लडंता, तुम दृष्टि हो विजय तुरन्ता।
पवन प्रचंड चलै झकझोरा,प्रभु तुम हरो होय भय चोरा।
झारखड गिरि अटवी माहीं,तुम बिन शरण तहा कोउ नाहीं।
वज्रपात करि घन गरजावैं, मूसलधार होय तडकावैं॥
वहे अथाह प्रवाह सुनीरा, पडते भवर मिटावैं पीरा।
होय अपुत्र दरिद्र सन्ताना, सुमिरत होय कुवेर समाना।
बंदीगृह मे बधी जंजीरा, कठ सुई अनि मे सकल शरीरा॥
राज दण्ड करि शूल धरावैं, ताहि सिंहासन तुही विठावैं।
न्यायाधीश राज दरबारी, विजय करै हो कृपा तुम्हारी॥
जहर हलाहल दुष्ट पिलन्ता, अमृत सम प्रभु करो तुरन्ता।
चढैं जहर जीवादि डसन्ता, निर्विष क्षण मे आप करन्ता॥
एक सहस वसु तुमरे नामा, जन्म लियो कुण्डलपुर धामा।
सिद्धारथ नृप सुत कहलाए, त्रिशला मात उदर प्रगटाये॥
तुम जनमत भयो लोक अशोका,अनहद शब्द भयो तिहुं लोका
इन्द्र ने नेत्र सहस करि देखा, गिरि सुमेर कियो अभिषेखा॥
कामादिक तृसना संसारी, तज तुम भए बाल ब्रह्मचारी।

अथिर जान जग अनित विसारी, बालपने प्रभु दीक्षा धारी ॥
शांत भाव धर कर्म विनाशे, तुरतहि केवलज्ञान प्रकाशे।
जड चेतन त्रय जग के सारे, हस्त रेखवत् तू है निहारे ॥
लोक अलोक द्रव्य षट् जाना, द्वादशांग का रहस्य बखाना।
पशु यज्ञ का मिटा कलेशा, दया धर्म देकर उपदेशा ॥
बहुमत और कुवादी दण्डी, रहने न दियो एक पाखण्डी।
पञ्चम काल विषै जिनराई, चान्दनपुर प्रभुता प्रगटाई ॥
क्षण मे तोपनि बाढि हटाई, भक्तन के तुम सदा सहाई।
मूरख नर नहिं अक्षर ज्ञाता, सुमिरत पण्डित होय विख्याता ॥
पूरनमल रचकर चालीसा, हे प्रभु तोहि नवावत शीशा।

दोहा—करे पाठ चालीस दिन, नित चालीसहिं बार।
खेवें धूप सुगन्ध पढि, श्री महावीर अगार ॥
जन्म दरिद्री होय जो, होय कुवेर समान।
नाम वंश जगमे चले, जिनके नहिं संतान ॥

श्री पद्मप्रभ चालीसा

दोहा—शीश नवा अरिहन्त को, सिद्धन करूं प्रणाम।
उपाध्याय आचार्य का, ले सुखकारी नाम ॥
सर्व साधु और सरस्वती, जिन मन्दिर सुखकार।
पद्मपुरी के 'पद्म' को, मन मन्दिर में धार ॥

चौपाई

जय श्री पद्मप्रभ गुणधारी, भविजन के तुम हो हितकारी।

तुम जग के सर्वज्ञ कहाओ, छट्ठे तीर्थंकर कहलाओ।
तीन काल तिहुं जग की जानो, सब बातें क्षण में पहचानो॥
वेष दिगम्बर धारन हारे, तुम से कर्म शत्रु भी हारे।
मूर्ति तुम्हारी कितनी सुन्दर, दृष्टि सुखद जमती नासा पर।
क्रोध मान मद लोभ भगाया, राग द्वेष का लेश न पाया।
वीतराग तुम कहलाते हो, सब जग के मन को भाते हो।
कौशाम्बी नगरी कहलाए, राजा धारणजी बतलाए॥
सुन्दर नार सुसीमा उनके, जिनके उर से स्वामी जन्मे।
कितनी लम्बी उमर कहाई, तीस लाख पूरब बतलाई॥
इक दिन हाथी बंधा निरख कर, झट आया वैराग्य उमड़कर।
कार्तिक सुदी त्रयोदश भारी, तुमने मुनि पद दीक्षा धारी॥
सारे राजपाट को तज के, तभी मनोहर वन में पहुंचे।
तप कर केवलज्ञान उपाया, चैत सुदी पंदरस कहलाया॥
इकसोदस गणधर बतलाए, मुख्य वज्र चामर कहलाए।
लाखों मुनि आर्जिका लाखों, श्रावक और श्राविका लाखों॥
असंख्यात तिर्यंच बताए, देवी देव गिनत नहीं पाए।
फिर सम्मेद शिखर पर जाके, शिवरमणी को ली परणाके।
पंचम काल महा दुख दाई, जब तुमने महिमा दिखलाई॥
जयपुर राज्य ग्राम बाड़ा है, स्टेशन शिवदासपुरा है।
मूला नाम जाट का लड़का, घर को नींव खोदने लागा॥
खोदत खोदत मूर्ति दिखाई, उसने जनता को बतलाई।
चिह्न कमल लख लोग लुगाई, पद्मप्रभ की मूर्ति बताई॥

मन में अति हर्षित होते हैं, अपने दिल का मल धोते हैं।
तुमने यह अतिशय दिखलाया, भूत प्रेत को दूर भगाया ॥
भूत प्रेत दुख देते जिसको, चरणों में लाते हैं उसको।
जब गंधोदक छींटा मारे, भूत प्रेत तब आप बकारे ॥
जपने से जब नाम तुम्हारा, भूत प्रेत सब करे किनारा।
ऐसी महिमा बतलाते हैं, अन्धे भी आंखें पाते हैं ॥
प्रतिमा श्वेतवर्ण कहलाये, देखत ही हृदय को भाये।
ध्यान तुम्हारा जो धरता है, इस भव से वह नर तरता है ॥
अन्धा देखे गूंगा गाये, लंगड़ा पर्वत पर चढ़ जाये।
बहरा सुन सुन कर खुश होवे, जिस पर कृपा तुम्हारी होवे।
मैं हूं स्वामी दास तुम्हारा, मेरी नैया करदो पारा।
चालीसे को 'चन्द्र' बनावे, पद्मप्रभ को शीश नवावे ॥

सोरठा—नित चालीसहिं बार, पाठ करे चालीस दिन।
खेय सुगन्ध अपार, पद्मपुरी में आय के ॥
होय कुवेर समान, जन्म दरिद्री होय जो।
जिनके नहिं सन्तान, नाम वंश जग में चले ॥

॥ इति पद्मप्रभ चालीसा ॥

श्री चन्द्र प्रभ चालीसा

वीतराग सर्वज्ञ जिन, जिनवाणी को ध्याय।
लिखने का साहस करूं, चालीसा सिर नाय ॥१॥
देहरे के श्री चन्द्र को, पूजौं मन वच काय।
ऋद्धि सिद्धि मंगल करें, विघ्न दूर हो जाय ॥२॥

चौपई-जय श्रीचन्द्र दया के सागर,देहरेवाले ज्ञान उजागर।
शांति छवि मूरति अति प्यारी, वेष दिगम्बर धारा भारी ॥
नासा पर है दृष्टि तुम्हारी, मोहिनी मूरति कितनी प्यारी ।
देवों के तुम देव कहावो, कष्ट भक्त के दूर हटावो ।
समन्तभद्र मुनिवर ने ध्याया, पिंडी फटी दरश तब पाया ॥
तुम जग मे सर्वज्ञ कहावो, अष्टम तीर्थङ्कर कहलावो ।
महासेन के राजदुलारे, मात लक्ष्मणा के हो प्यारे ॥
चन्द्रपुरी नगरी अति नामी, जन्म लिया चन्द्रा प्रभु स्वामी ।
पोष वदी ग्यारस को जन्में, नरनारी हरषे तब मन मे ॥
काम क्रोध तृष्णा दुखकारी,त्याग सुखद मुनि दीक्षा धारी ।
फाल्गुन वदी सप्तमी भाई, केवलज्ञान हुआ सुखदाई ।
फिर सम्मेद शिखर पर जाके, मोक्ष गये प्रभु आप वहां से ।
लोभ मोह और छोडी माया, तुमने मान कषाय नसाया ॥
रागी नहीं, नहीं तू द्वेषी, वीतराग तू हित उपदेशी ।
पंचम काल महा दुख दाई, धर्म कर्म भूले सब भाई ॥
अलवर प्रान्त नगर तिजारा, होय जहां पर दर्शन प्यारा ।
उत्तर दिशि मे 'देहरा' माहीं,वहां आकर प्रभुता प्रकटाई ॥
सावन सुदि दशमी शुभ नामी,आन पधारे त्रिभुवन स्वामी ।
चिह्न चन्द्र का लख नर नारी,चन्द्र प्रभ की मूरति मानी ॥
मूर्ति आपकी अति उजियाली, लगता हीरा भी है जाली ।
अतिशय चन्द्रप्रभ का भारी, सुनकर आते यात्री भारी ॥
फाल्गुन सुदी सप्तमी प्यारी, जुडता है मेला यहां भारी ।

कहलाने को तो शशिधर हो,तेज पुंज रवि से बढ़कर हो ।।
नाम तुम्हारा जग में सांचा, ध्यावत भागत भूत पिशाचा ।
राक्षस भूत प्रेत सब भागें,तुम सुमरत भय कोई ना लागे ।।
कीर्ति तुम्हारी है अति भारी,गुण गाते नित नर और नारी।
जिस पर होती कृपा तुम्हारी, संकट झट कटता है भारी ।।
जो भी जैसी आश लगाता, पूरी उसे तुरत कर पाता ।
दुखिया दर पर जो आते हैं, संकट सब खो कर जाते हैं ।।
खुला सभी को प्रभु द्वार है, चमत्कार को नमस्कार है ।
अन्धा भी यदि ध्यान लगावे, उसके नेत्र शीघ्र खुल जावे ।।
बहरे भी सुनने लग जावें, गहले का पागलपन जावे ।
अखण्ड ज्योति का घृत जो लगावे,संकट उसका सब कट जावे
चरणों की रज अति सुखकारी,दुख दरिद्र सब नासन हारी ।
चालीसा जो मन से ध्यावे, पुत्र पौत्र सब सम्पत्ति पावे ।।
पार करो दुखियों की नैया, स्वामी तुम बिन नहीं खिवैया ।
प्रभु मैं तुमसे कछु नहीं चाहूं, दर्श तिहारा निशदिन पाऊँ ।।

दोहा—करूं वन्दना आपकी, श्रीचन्द्रप्रभ जिनराज ।
जगल मे मंगल कियो,रखो 'सुरेश' की लाज ।।इति।।

अहिच्छत्र पार्श्वनाथ चालीसा

शीश नवा अरिहन्त को, सिद्धन करूं प्रणाम ।
उपाध्याय आचार्य का, ले सुखकारी नाम ।।
सर्वसाधु और सरस्वती, जिन मन्दिर सुखकार ।

अहिच्छत्र और पार्श्व को, मन मन्दिर में धार ॥

पार्श्वनाथ जगत हितकारी, हो स्वामी तुम व्रत के धारी ।
सुर नर असुर करें तुम सेवा, तुम ही सब देवन के देवा ॥
तुम से करम शत्रु भी हारा, तुम कीना जग का निस्तारा ।
अश्वसेन के राज दुलारे, वामा की आंखों के तारे ॥
काशी जी के राव कहाए, सारी परजा मौज उड़ाए ।
इक दिन सब मित्रों को लेके, सैर करन को वन में पहुँचे ॥
हाथी पर कस कर अम्बारी, इक जंगल में गई सवारी ।
एक तपस्वी देख वहां पर, उससे बोले वचन सुना कर ॥
तपसी ! तू क्यों पाप कमाए, इस लक्कड़ में जीव जलाए ।
प्रभु ने तभी कुदाल उठाया, उस लक्कड़ को चीर गिराया ॥
निकले नाग नागनी कारे, मरने को थे निकट बिचारे ।
रहम प्रभु के दिल में आया, तभी मन्त्र नवकार सुनाया ॥
मर कर वो पाताल सिधाए, पद्मावती धरणेन्द्र कहाये ।
तपसी मर कर देव कहाया, नाम कमठ ग्रन्थों में गाया ॥
एक समय श्री पारस स्वामी, राज छोड़ कर वन की ठानी ।
तप करके सब करम खपाए, इक दिन कमठ वहाँ पर आये ।
फौरन ही प्रभु को पहिचाना, बदला लेने को दिल ठाना ॥
बहुत अधिक बारिश बरसाई, बादल गरजे बिजली गिराई ।
बहुत अधिक पत्थर बरसाए, स्वामी तन को नहीं हिलाये ॥
पद्मावती धरणेन्द्र भी आये, प्रभु की सेवा में चित लाये ।
पद्मावती ने फन फैलाया, उस पर स्वामी को बैठाया ॥

सामायिक पाठ (भाषा)

(श्री स्व० रामचन्द्र उपाध्याय कृत)

नित देव ! मेरी आत्मा धारण करे इस नेम को,
मैत्री करे सब प्राणियों से, गुणिजनों से प्रेम को।
उन पर दया करती रहे, जो दुःख-ग्राह-ग्रहीत है,
उनसे उदासीसी रहे जो धर्म के विपरीत हैं ॥१॥
करके कृपा कुछ शक्ति ऐसी दीजिये मुझमे प्रभो,
तलवारको ज्यों म्यान से करते विलग हैं हे विभो।
गतदोष आत्मा शक्तिशाली है मिली मम अङ्ग से,
उसको विलग उस भांति करने के लिए ऋजु ढङ्गसे ।२।
हे नाथ ! मेरे चित्तमे समता सदा भरपूर हो,
सम्पूर्ण ममताकी कुमति मेरे हृदय से दूर हो।
बनमें भवन मे, दुख मे सुखमे नहीं कुछ भेद हो,
अरि-मित्रमे मिलने-बिछुडने मे न हर्ष न खेद हो ।३।
अतिशय घनो तम-राशिको दीपक हटाते हैं यथा,
दोनो कमल-पद आपके अज्ञान-तम हरते तथा।
प्रतिबिम्बसम स्थिररूप वे मेरे हृदय में लीन हो,
मुनिनाथ ! कीलित तुल्य वे उर पर सदा आसीन हों।४
यदि एक-इन्द्रिय आदि देही घूमते फिरते मही,
जिनदेव ! मेरी भूलसे पीड़ित हुए होवें कहीं।
टुकडे हुए हो, मल गये हो, चोट खाये हो कभी,

तो नाथ ! वे दुष्टाचरण मेरे बने झूठे सभी ॥५॥
सन्मुक्ति के सन्मार्ग से प्रतिकूल पथ मैने लिया,
पचेन्द्रियों चारों कषायों मे स्वमन मैने दिया ।
इस हेतु शुद्ध चरित्रका जो लोप मुझसे हो गया,
दुष्कर्म वह मिथ्यात्व को हो प्राप्त प्रभु ! करिये दया ।६।
चारों कषायोंसे, वचन, मन, कायसे जो पाप है—
मुझसे हुआ हे नाथ ! वह कारण हुआ भव-ताप है ।
अब मारता हूँ मैं उसे आलोचना-निन्दादि से,
ज्यों सकल विषको वैद्यवर है मारता मन्त्रादि से ॥७॥
जिनदेव ! शुद्ध चरित्रका मुझमें अतिक्रम जो हुआ ।
अज्ञान और प्रमाद से व्रतका व्यतिक्रम जो हुआ ।
अतिचार और अनाचरण जो जो हुए मुझसे प्रभो,
सबकी मलिनता मेटने को प्रतिक्रम करता विभो ।८।
मनकी विमलता नष्ट होने को, अतिक्रम है कहा,
औ शीलचर्या के विलङ्घन को व्यतिक्रम है कहा ।
हे नाथ ! विषयो मे लिपटने को कहा अतिचार है,
आसक्त अतिशय विषयमे रहना महाऽनाचार है ॥९॥
यदि अर्थ, मात्रा, वाक्यमे पदमे पड़ी त्रुटि हो कहीं,
तो भूलसे ही वह हुई मैंने उसे जाना नहीं ।
जिनदेववाणी ! तो क्षमा उसको तुरत कर दीजिये,
मेरे हृदयमे देवि ! केवलज्ञान को भर दीजिये ॥१०॥
हे देवि ! तेरी वन्दना मैं कर रहा हूँ इसलिए,

चिन्तामणिप्रभ है सभी वरदान देने के लिये ।
परिणाम शुद्धि, समाधि मुझमें बोधिका सचार हो,
हो प्राप्ति स्वात्माकी तथा शिवसौख्यकी भवपार हो ।११
मुनिनायकों के वृन्द जिसको स्मरण करते हैं सदा,
जिसका सभी नर अमरपति भी स्तवन करते हैं सदा ।
सच्छास्त्र वेद-पुराण जिसको सर्वदा हैं गा रहे,
वह देवका भी देव बस मेरे हृदय में आ रहे ।१२।
जो अन्तरहित सुबोध-दर्शन और सौख्यस्वरूप है,
जो सब विकारों से रहित, जिससे अलग भवकूप है ।
मिलता बिना न समाधि जो, परमात्म जिसका नाम है,
देवेश वह उर आ बसे मेरा खुला हृद्धाम है ।।१३।।
जो काट देता है जगतके दुःखनिर्मित जालको,
जो देख लेता है जगत की भीतरी भी चालको ।
योगी जिसे हैं देख सकते, अन्तरात्मा जो स्वयम्,
देवेश वह मेरे हृदय-पुरका निवासी हो स्वयम् ।१४।
कैवल्य के सन्मार्ग को दिखला रहा है जो हमें,
जो जन्मके या मरणके पड़ता न दुःख-सन्दोह में ।
अशरीर है त्रैलोक्यदर्शी दूर है कुकलङ्क से,
देवेश वह आकर लगे मेरे हृदयके अङ्क से ।।१५।।
अपना लिया है निखिल तनुधारी-निवहने ही जिसे,
रागादि दोष-व्यूह भी छू तक नहीं सकता जिसे ।
जो ज्ञानमय है, नित्य है, सर्वेन्द्रियों से हीन है,

जिनदेव देवेश्वर वही मेरे हृदय में लीन है ॥१६॥
संसारकी सब वस्तुओंमे ज्ञान जिसका व्याप्त है,
जो कर्म-बन्धन-हीन, बुद्ध, विशुद्ध सिद्धि प्राप्त है ।
जो ध्यान करने से मिटा देता सकल कुविकारको,
देवेश वह शोभित करे मेरे हृदय-आगार को ॥१७॥
तम-सङ्घ जैसे सूर्य किरणों को न छू सकता कहीं,
उस भाँति कर्म-कलङ्क दोषाकर जिसे छूता नहीं ।
जो है निरंजन वस्त्वपेक्षा, नित्य भी है एक है,
उस आप्त प्रभुकी शरणमे हूं प्राप्त, जो कि अनेक है ।१८।
वह दिवसनायक लोकका जिसमे कभी रहता नहीं,
त्रैलोक्य-भासक ज्ञान रवि पर है वहाँ रहता सही ।
जो देव स्वात्मामे सदा स्थिर-रूपता को प्राप्त है,
मैं हूं उसीकी शरणमे, जो देववर है, आप्त है ।१९।
अवलोकने पर ज्ञानमें जिसके सकल ससार ही,
है स्पष्ट दिखता एकसे है दूसरा मिलकर नहीं ।
जो शुद्ध, शिव है, शान्त भी है, नित्यता को प्राप्त है,
उसकी शरण को प्राप्त है, जो देववर है, आप्त है ।२०
वृक्षावली जैसे अनलकी लपटसे रहती नहीं,
त्यों शोक मन्मथ, मानको रहने दिया जिसने नहीं ।
भय, मोह, नींद, विषाद, चिन्ता भी न जिसको व्याप्त है,
उसकी शरणमें हूं गिरा, जो देववर है, आप्त है ।२१।
विधिवत् शुभासन घासका या भूमिका बनता नहीं ।

तो रोंगटोका छिद्रगण कैसे नहीं खो जायगा ।।२७।।
संसाररूपी गहन मे है जीव बहु दुख भोगता,
वह बाहरी सब वस्तुओ के साथ कर संयोगता ।
यदि मुक्ति की है चाह तो फिर जीवगण ! सुन लीजिये,
मनसे, वचनसे, कायसे उसको अलग कर दीजिये ।२८।
देही ! विकल्पित जालको तू दूर कर दे शीघ्र ही,
संसार-वनमें डोलनेका मुख्य कारण है यही ।
तू सर्वदा सबसे अलग निज आत्मा को देखना,
परमातमा के तत्त्वमे तू लीन निजको लेखना ।२६।
पहले समय में आतमा ने कर्म हैं जैसे किये,
वैसे शुभाशुभ फल यहां पर सांप्रतिक उसने लिये ।
यदि दूसरे के कर्मका फल जीवको हो जाय तो,
हे जीवगण ! फिर सफलता निज कर्मको खो जाय तो ।३०
अपने उपार्जित कर्म–फलको जीव पाते हैं सभी,
उसके सिवा कोई किसीको कुछ नहीं देता कभी ।
ऐसा समझना चाहिए एकाग्र मन होकर सदा,
'दाता अमर है भोगका' इस बुद्धिको खोकर सदा ।३१।
सबसे अलग परमात्मा है, अमितगति से वन्द्य है,
हे जीवगण ! वह सर्वदा सब भांति ही अनवद्य है ।
मनसे उसी परमात्माको 'ध्यान में जो लायगा,
वह श्रेष्ठ लक्ष्मीके निकेतन मुक्ति पद को पायगा ।३२।
पढ़कर इन द्वात्रिंश पद्यको, लखता जो परमात्मवन्द्यको ।
वह अनन्यमय हो जाता है,मोक्ष-निकेतन को पाता है ।।३३।।

निर्वाण काण्ड (गाथा)

अट्ठावयम्मि उसहो चम्पाए वासुपुज्जजिणणाहो ।
उज्जंते णेमिजिणो पावाए णिव्वुदो महावीरो ॥१॥
वीसं तु जिणवरिंदा अमरासुरवंदिदा धुदकिलेसा ।
सम्मेदे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥२॥
वरदत्तो य वरंगो सायरदत्तो य तारवरणयरे ।
आहुट्ठयकोडीओ णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥३॥
णेमिसामि पज्जण्णो संबुकुमारो तहेव अणिरुद्धो ।
बाहत्तरिकोडीओ उज्जन्ते सत्तसया सिद्धा ॥४॥
रामसुवा वेण्णि जणा लाडणरिंदाण पंचकोडीओ ।
पावागिरवरसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥५॥
पंडुसुआ तिण्णि जणा दविडणरिंदाण अट्ठकोडीओ ।
सत्तुञ्जयगिरि सिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥६॥
सत्ते जे बलभद्दा जदुवणरिंदाण अट्ठकोडीओ ।
गजपंथे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥७॥
रामहणू सुग्गीओ गवयगवाक्खो य णीलमहणीलो ।
णवणवदीकोडीओ तुङ्गीगिरिणिव्वुदे वन्दे ॥८॥
णंगाणंगकुमारा कोडीपंचद्धमुणिवरा सहिया ।
सुवणागिरिवर सिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥९॥
दहमुहरायस्स सुवा कोडीपंचद्धमुणिवरा सहिया ।
रेवाउहयतडग्गे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१०॥

रेवाणइए तीरे पच्छिमभायम्मि सिद्धवरकूडे ।
दो चक्की दह कप्पे आहुट्ठयकोडिणिव्वुदे वंदे ॥११॥
बडवाणीवरणयरे दक्खिणभायम्मि चूलगिरिसिहरे ।
इदजीदकुम्भयणो णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१२॥
पावागिरिवरसिहरे सुवण्णभद्दाइमुणिवरा चउरो ।
चलणाणईतडग्गे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१३॥
फलहोडीवरगामे पच्छिमभायम्मि दोणगिरिसिहरे ।
गुरुदत्ताइमुणिंदा णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१४॥
णायकुमारमुणिंदो बालमहाबालि चेव अज्झेया ।
अट्ठावयगिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१५॥
अच्चलपुरवरणयरे ईसाणे भाए मेढगिरिसिहरे ।
आहुट्ठयकोडिओ णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१६॥
वंसत्थलवरणयरे पच्छिमभायम्मि कुन्थुगिरिसिहरे ।
कुलदेसभूसणमुणी णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१७॥
जसरहरायस्स सुआ पचसयाइं कलिंग-देसम्मि ।
कोडिसिला कोडिमुणी णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१८॥
पासस्स समवसरणे सहिया वरदत्तमुणिवरा पंच ।
रिस्सिदे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१९॥

(अतिशयक्षेत्र काण्डम्)

पास तह अहिणदण णायद्दहि मगला उरे वदे ।
अस्सारम्भे पट्टणि मुणिसुव्वओ तहेव वंदामि ॥१॥
बाहुबलि तह वंदमि पोयणपुरहत्थिनापुरे वदे ।

शांति कुंथुव अरिहो वाणारसिए सुपासपासं च ॥२॥
महुराए अहिछित्ते वीर पास तहेव वंदामि ।
जबुमुणिदो वदे णिव्वुइपत्तो वि जंबुवणमहणे ॥३॥
पंचकल्याणठाणइं जाणवि सजायमज्झलोयम्मि ।
मणवयकायसुद्धी सव्व सिरसा णमस्सामि ॥ ४ ॥
अग्गलदेव वन्दमि वरणयरे णिवडकुण्डली वन्दे ।
पासं सिवपुरि वदमि होलागिरिसखदेवम्मि ॥ ५ ॥
गोमटदेवं वंदमि पचसय धणुहदेहउच्चन्तं ।
देवा कुणन्ति वुट्टी केसरिकुसुमाण तस्स उवरिम्मि ॥ ६ ॥
णिव्वाणठाण जाणि वि अइसयठाणाणि अइसए सहिया ।
सजादमिच्चलोए सव्वे सिरसा णमस्सामि ॥ ७ ॥
जो जण पढई तियाल णिव्वुइकडपि भावसुद्धीए ।
भुञ्जदि णरसुरसुक्ख पच्छा सो लहइ णिव्वाण ॥८॥

महावीराष्टक स्तोत्रं

(शिखरिणी)

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः,
समं भाति ध्रौव्य-व्यय-जनि-लसतोऽन्तरहिताः ।
जगत्साक्षी मार्ग-प्रकटन परो भानुरिव यो,
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥१॥
अताम्रं यच्चक्षुः कमलयुगलं स्पंदरहितं,
जनान्कोपापायं प्रकटयति वाभ्यन्तरमपि ।

स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वातिविमला ।।महावीर.।।२।।
नमन्नाकेंद्राली मुकुटमणिभाजालजटिलं,
लसत्पादाभोजद्वयमिह यदीयं तनुभृतां ।
भवज्ज्वालाशांत्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि ।।महावीर.।३।
यदर्चाभावेन प्रमुदितमना दर्दुर इह,
क्षणादासीत्स्वर्गी गुणगणसमृद्धः सुखनिधिः ।
लभन्ते सद्भक्ताः शिवसुखसमाज किमु तदा ।।महावीर.।।४।।
कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगत-तनुर्ज्ञान-निवहो,
विचित्रात्माप्येको नृपति-वर-सिद्धार्थ-तनयः ।
अजन्मापि श्रीमान् विगत-भव-रागोद्भुत गतिः ।।महावीर.।५।
यदीया वाग्गगा विविध-नय-कल्लोल-विमला,
वृहज्ज्ञानांभोभिर्जगति जनता या स्नपयति ।
इदानीमप्येषा बुधजन-मरालैः परिचिता ।।महावीर.।।६।।
अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवनजयी काम-सुभटः,
कुमारावस्थायामपि निज-बलाद्येन विजितः ।
स्फुरन्नित्यानद-प्रशम-पद-राज्याय स जिनः ।।महावीर.।।७।।
महामोहातंक-प्रशमन-पराकस्मिक-भिषक्,
निरापेक्षो बर्धुविदित-महिमा मगलकरः ।
शरण्यः साधूनां भव-भयभृतामुत्तमगुणो ।।महावीर.।। ८ ।।
महावीराष्टकं स्तोत्रं भक्त्या भागेन्दुना कृतं ।
यः पठेच्छृणुयाच्चापि स याति परमां गतिम् ।

महावीराष्टक स्तोत्र (भाषा)

चेतन अचेतन तत्त्व जेते, हैं अनन्त जहान मे ।
उत्पाद व्यय ध्रुवमय मुकुरवत्, लसत जाके ज्ञान मे ।
जो जगतदरशी जगत मे सन्मार्ग–दर्शक रवि मनो ।
ते वीर स्वामीजी हमारे, नयन–पथगामी बनो ।।१।।
टिमिकार बिन युग कमल लोचन, लालिमा तैं रहित हैं ।
बाह्य अन्तर की क्षमाको, भविजनों से कहत हैं ।
अति परम पावन शान्तिमुद्रा, जासु तन उज्ज्वल घनो ।
ते वीर स्वामीजी हमारे नयन–पथगामी बनो ।।२।।
जिहिं स्वर्गवासी विपुल सुरपति नम्र तन वह नमत हैं ।
तिन मुकुटमणि के प्रभामडल पद्म–पद मे लसत हैं ।।
जिन मात्र सुमरन रूप जलसे, हनैं भव आतप घनो ।
ते वीर स्वामीजी हमारे नयन–पथगामी बनो ।।३।।
मन मुदित ह्वै मंडूक ने प्रभु पूजवे मनसा करी ।
तत्छन लही सुर सम्पदा, बहुऋद्धि गुणनिधि सो भरी ।।
जिहिं भक्ति सो सद्भक्तजन लहैं, मुक्तिपुर को सुख घनो ।
ते वीर स्वामीजी हमारे, नयन–पथगामी बनो ।।४।।
कंचन तपतवत ज्ञाननिधि हैं, तदपि ज्ञान वर्जित रहे ।
जो हैं अनेक तथापि इक, सिद्धार्थ सुत भव रहित हैं ।
जो वीतरागी गति रहित हैं तदपि अद्भुत गतिपवो ।
ते वीर स्वामीजी हमारे, नयन–पथगामी बनो ।।५।।
जिनकी वचनमय अमल सुरसरि, विविध नय लहरैं धरैं ।

जो पूर्ण ज्ञान स्वरूप जल से, न्हवन भविजन को करैं।
तामैं अजो लगि घने पंडित, हंस ह्वो सोहत मनो।
ते वीर स्वामीजी हमारे नयन-पथगामी बनो ॥६॥
जाने जगत को जन्तु जनता, करी स्ववश तमाम हैं।
है वेग जाको अमिट ऐसो, विकट प्रतिभट काम है॥
ताको स्वबल से प्रौढ़यय में शान्ति शासन हित हनो।
ते वीर स्वामीजी हमारे नयन-पथगामी बनो ॥७॥
भयभीत भव में साधुजन को शरण उत्तम गुण भरे।
निःस्वार्थ के ही जगत बांधव, विदित यश मंगल करें॥
मोह रूपी रोग हनिये, वैद्यवर अद्भुत मनो।
ते वीर स्वामीजी हमारे नयन-पथगामी बनो ॥८॥
दोहा—महावीर अष्टक रच्यो, 'भागचन्द' रुचि ठान।
पढ़ै सुनै जो भाव सों, ते पावें निरवान॥

बारह भावना (मंगतराय कृत)

दोहा—वन्दूँ श्री अरहन्त पद, वीतराग विज्ञान।
वरणूँ बारह भावना, जगजीवनहित जान॥
(विष्णुपद छन्द)
कहा गये चक्री जिन जीता, भरतखण्ड सारा।
कहाँ गये वह रामरु लक्ष्मन जिन रावन मारा॥
कहाँ कृष्ण रुक्मिणि सतभामा, अरु संपति सगरी।
कहाँ गये वह रङ्गमहल अरु, सुवरन की नगरी ॥२॥

वहीं रहे वह लोभी कौरव, जूझ मरे रन मे ।
गये राज तज पाडव वनको, अगनि लगी तनमें ॥
मोह नींद से उठ रे चेतन, तुझे जगावन को ।
हो दयाल उपदेश करें, गुरु बारह भावन को ॥ ३ ॥

अथिर भावना

सूरज चांद छिपे निकलै ऋतु फिर फिर कर आवै ।
प्यारी आयु ऐसी बीते, पता नहीं पावै ।
पर्वत-पतित नदी सरिता जल, बहकर नहिं हटता ।
स्वास चलत यो घटै काठ ज्यो, आरेसों कटता ॥४॥
ओसबून्द ज्यों गलै धूपमे, वा अञ्जुलि पानी ।
छिन छिन यौवन छीन होत है, क्या समझे प्रानी ॥
इन्द्रजाल आकाश नगर सब, जगसम्पति सारी ।
अथिर रूप संसार विचारो, सब नर अरु नारी ॥५॥

अशरण भावना

कालसिंहने मृगचेतन को, घेरा भव वन मे ।
नहीं बचावनहारा कोई, यो समझो मन मे ।
मन्त्र यन्त्र सेना धन सम्पत्ति, राज पाट छूटे ।
वश नहिं चलता काल लुटेरा, काया नगरी लूटे ।६॥
चक्ररतन हलधर सा भाई, काम नहीं आया ।
एक तीरके लगत कृष्णको, विनश गई काया ॥
देव धर्म गुरु शरण जगतमे, और नहीं कोई ।
भ्रमसे फिरै भटकता चेतन, यूंहि उमर खोई ॥ ७ ॥

संसार भावना

जनममरन अरु जरा रोगमे, सदा दुखी रहता ।
द्रव्य क्षेत्र अरु कालभावभव, परिवर्तन सहता ॥
छेदन भेदन नरक पशुगति, बध बन्धन सहना ।
रागउदयसे दुख सुरगतिमे, कहां सुखी रहना ॥८॥
भोगि पुण्यफल हो इकइन्द्री, क्या इसमे लाली ।
कुतवाली दिन चार वही फिर, खुरपा अरु जाली ॥
मानुषजन्म अनेक विपतिमय, कहीं न सुख देखा ।
पंचमगति सुख मिलै, शुभाशुभका मेटो लेखा ॥९॥

एकत्व भावना

जन्मै मरै अकेला चेतन, सुखदुख का भोगी ।
और किसीका क्या इकदिन यह, देह जुदी होगी ॥
कमला चलत न पैंड जाय, मरघट तक परिवारा ।
अपने अपने सुखको रोवैं, पिता पुत्र दारा ॥१०॥
ज्यों मेले मे पंथीजन मिलि, नेह फिरैं धरते ।
ज्यों तरुवरपै रैन बसेरा, पंछी आ करते ॥
कोस कोई दो कोस कोई,उड़ फिर थक थक हारे ।
जाय अकेला हंस संगमे, कोई न पर मारै ॥११॥

भिन्न भावना

मोहरूप मृगतृष्णा जगमें, मिथ्या जल चमकै ।
मृग चेतन नित भ्रम में उठ उठ, दौडै थक थककै ॥
जल नहि पावै प्राण गमावै, भटक भटक मरता ।
वस्तु पराई मानै अपनी, भेद नहीं करता ॥१२॥

तू चेतन अरु देह अचेतन, यह जड़ तू ज्ञानी ।
मिले अनादि यतनतै बिछुडै ज्यो पय अरु पानी ।।
रूप तुम्हारा सबसों न्यारा, भेद ज्ञान करना ।
जौलौं पुरुष थके न तौलौं, उद्यमसों चरना ।।१३।।

अशुचि भावना

तू नित पोखै यह सूखै, ज्यों धोवे त्यो मैली ।
निशदिन करै उपाय देहका, रोगदशा फैली ।।
मात-पिता-रज-वीरज मिलकर, बनी देह तेरी ।
मांस हाड नस लहू राधकी, प्रकट व्याधि घेरी ।।१४।।
काना पौंडा पड़ा हाथ यह, चूसै तो रोवै ।
फलै अनन्त जु धर्म ध्यानकी, भूमिविषै बोवै ।
केसर चन्दन पुष्प सुगन्धित, वस्तु देख सारी ।
देह परसते होय अपावन, निशदिन मल जारी ।।१५

आस्रव भावना

ज्यों सर--जल आवत मोरी त्यों, आस्रव कर्मन को ।
दर्वित जीव देश गहै जब पुद्गल भरमन कों ।
भावित आस्रवभाव शुभाशुभ, निशदिन चेतन को ।
पाप पुण्य को दोनों करता, कारण बन्धन को ।।१६।।
पन मिथ्यात योग पन्द्रह, द्वादश अविरत जानो ।
पञ्चरु बीस कषाय मिले, सब सत्तावन मानो ।।
मोहभाव की ममता टारै, पर परणत खोते ।
करे मोख का यतन निरास्रव, ज्ञान जनी होते ।।१७।।

संवर भावना

ज्यों मोरी में डाट लगावै तब जल रुक जाता ।
त्यों आस्रव को रोकै संवर, क्यों नहिं मन लाता ॥
पंच महाव्रत समिति गुप्तिकर, वचन काय मनको ।
दशविधधर्म परिषह बाइस, बारह भावन को ॥१८॥
यह सब भाव सतावन मिलकर, आस्रव को खोते ।
सुपन दशा से जागो चेतन, कहाँ पड़े सोते ॥
भाव शुभाशुभ रहित, शुद्ध भावन संवर पावै ।
डांट लगत यह नाव पड़ी मझधार पार जावै ॥१९॥

निर्जरा भावना

ज्यों सरवर जल रुका सूखता, तपन पड़ै भारी ।
संवर रोकै, कर्म निर्जरा ह्वै सोखन हारी ॥
उदय भोग सविपाक समय, पक जाय आम डाली ।
दूजी है अविपाक पकावै, पालविषै माली ॥२०॥
पहली सबके होय नहीं, कुछ सरै काम तेरा ।
दूजी करै जु उद्यम करके मिटै जगतफेरा ॥
संवर सहित करो तप प्रानी, मिलै मुकति रानी ।
इस दुलहिन की यही सहेली, जानै सब ज्ञानी ॥२१॥

लोक भावना

लोक अलोक अकाश माहिं थिर, निराधार जानो ।
पुरुषरूप कर-कटी भये षट्, द्रव्यनसो मानो ॥
इसका कोई न करता हरता, अमिट अनादी है ।

जीवरु पुद्गल नाचै यामै, कर्म उपाधी है ।।२२।।
पाप पुन्यसों जीव जगतमे नित सुख दुख भरता ।
अपनी करनी आप भरै शिर-औरन के धरता ।।
मोहकर्म को नाश मेटकर सब जग की आशा ।
निज पदमे थिर होय लोकके, शीश करो वासा ।।२३।।

बोधिदुर्लभ भावना

दुर्लभ है निगोद से थावर, अरु त्रसगति प्रानी ।
नरकाया को सुरपति तरसै, सो दुर्लभ प्रानी ।।
उत्तम देश सुसङ्गति दुर्लभ, श्रावककुल पाना ।
दुर्लभ सम्यक दुर्लभ सयम, पञ्चम गुणठाना ।।२४।।
दुर्लभ रत्नत्रय आराधन, दीक्षा का धरना ।
दुर्लभ मुनिवर को व्रत पालन, शुद्धभाव करना ।।
दुर्लभ ते दुर्लभ है चेतन, बोधि ज्ञान पावै ।
पाकर केवलज्ञान नहीं, फिर इस भव मे आवै ।।२५।।

धर्म भावना

हो सुछन्द जग पाप करै, सिर करता के लावै ।
कोई छिनक कोई करता से, जगमे भटकावै ।। २६ ।।
वीतराग सर्वज्ञ दोष बिन, श्रीजिन की बानी ।
सप्त तत्त्वका वर्णन जामै, सबको सुखदानी ।।
इनका चितवन बार बार कर श्रद्धा उर धरना ।
'मंगत' इसी जतनतै इकदिन, भवसागर तरना ।।२७।।

।। इति ।।

मेरी द्रव्य पूजा

(पं० जुगलकिशोरजी मुख्तार कृत)

कृमिकुल कलित नीर है जिसमें मच्छ कच्छ मेंढक फिरते ।
हैं मरते औ वहीं जनमते, प्रभो मलादिक भी करते ॥
दूध निकालें लोग छुड़ाकर, बच्चे को पीते पीते ।
है उच्छिष्ट अनीतिलब्ध यों, योग तुम्हारे नहिं दीखे ॥१॥
दही घृतादिक भी वैसे हैं कारण उनका दूध यथा ।
फूलों को भ्रमरादिक सूंघें, वे भी हैं उच्छिष्ट तथा ॥
दीपक तो पतङ्ग कालानल, जलते जिनपर कीट सदा ।
त्रिभुवन सूर्य, आपको अथवा दीप दिखाना नहीं भला ॥२॥
फल मिष्टान्न अनेक यहां पर, उनमें ऐसा एक नहीं ।
मलप्रिया मक्खी ने जिसको, आकर प्रभुवर छुआ नहीं ॥
यों अपवित्र पदार्थ अरुचिकर,तू पवित्र सब गुण घेरा ।
किस विध पूजूं क्या हि चढाऊं, चित्त डोलता है मेरा ॥३॥
औ आता है ध्यान तुम्हारे, क्षुधा तृषा का लेश नहीं ।
नाना रस युत अन्न पान का, अतः प्रयोजन रहा नहीं ।
नहिं वाञ्छा न विनोद भाव नहिं, राग अंश का पता कहीं ।
इससे व्यर्थ चढाना होगा, औषध सम जब रोग नहीं ।
यदि तुम कहो रत्न वस्त्रादिक, भूषण क्यों न चढाते हो ।
अन्य सदृश पावन हैं अर्पण, करते क्यों सकुचाते हो ॥
तो तुमने निःसार समझ जब खुशी खुशी उनको त्यागा ।
हो वैराग्य-लीनमति स्वामिन् ! इच्छा का तोड़ा तागा ॥५॥

तब क्या तुम्हे चढाऊँ वे ही, करूं प्रार्थना ग्रहण करो ।
होगी यह तो प्रकट अज्ञता, तव स्वरूप को सोच करो ।।
मुझे धृष्टता दीखे अपनी, और अश्रद्धा बहुत बडी ।
हेय तथा सत्यक्त वस्तु यदि, तुम्हे चढाऊँ घडी-घडी ।।६।।
इससे युगल हस्त मस्तक पर, रखकर नम्रीभूत हुआ ।
भक्ति सहित मै प्रणमूं तुमको बार-बार गुणलीन हुआ ।।
सस्तुति शक्ति समान करूं औ, सावधान हो नित तेरी ।
काय वचन की यह परिणति ही, अहो द्रव्य पूजा मेरी ।।७।।
भाव भरी इस पूजा से ही, होगा आराधन तेरा ।
होगा तव सामीप्य प्राप्य औ, तभी मिटेगा जग फेरा ।।
तुझमे मुझमे भेद रहेगा, नही स्वरूप से तब कोई ।
ज्ञानानन्द कला प्रकटेगी, थी अनादि से जो खोई ।।८।।

वैराग्य भावना

दोहा—बीज राख फल भोगले, ज्यो किसान जग माहिं ।
त्यो चक्री सुख मे मगन, धर्म विसारे नाहिं ।।

योगीरासा वा नरेन्द्र छन्द

इस विधि राज्य करे नर नायक भोगे पुण्य विशाला ।
सुख सागर मे मग्न निरन्तर जात न जानो काला ।।
एक दिवस शुभकर्म योग से क्षेमङ्कर मुनि वन्दे ।
देखे श्रीगुरु के पद पङ्कज लोचन अलि आनन्दे ।।१।।
तीन प्रदक्षिणा दे शिरनायो कर पूजा स्तुति कीनी ।

साधु समीप विनय कर बैठो चरणो दृष्टि दीनी।
गुरु उपदेशो धर्म शिरोमणि सुन राजा वैरागी।।
राज्य रमा वनितादिक जो रस सो सब नीरस लागी ।।२।।
मुनि सूरज कथनी किरणावलि लगत भर्म बुद्धि भागी।
भव तन भोग स्वरूप विचारो मरम धर्म अनुरागी।।
या ससार महा वन भीतर, भर्म छोर न आवै।
जनम मरन जरा दोदावे जीव महादुख पावे ।।३।।
कबहुँ कि जाय नर्क पद भुंजे छेदन भेदन भारी।
कबहुं कि पशु पर्याय धरे तहां बध बन्धन भयकारी।।
सुरगति मे पर सम्पति देखे राग उदय दुख होई।
मानुष योनि अनेक विपतिमय सब सुखी नहिं कोई ।।४।।
कोई इष्ट वियोगी विलखे कोई अनिष्ट संयोगी।
कोई दीन दरिद्री दीखे कोई तन का रोगी।।
किस ही घर कलिहारी नारी, कै बैरी सम भाई।
किस ही के दुख बाहर दीखे किस ही उर दुचिताई ।।५।।
कोई पुत्र बिना नित झूरे होय मरै तब रोवै।
खोटी सगति से दुख उपजे क्यों प्राणी सुख सोवे।।
पुण्य उदय जिनके तिनको भी नाहिं सदा सुख साता।
यह जग बास यथारथ दीखे सबही है दुख घाता ।।६।।
जो संसार विषै सुख हो तो तीर्थङ्कर क्यो त्यागे।
काहे को शिव साधन करते संयम से अनुरागे।।
देह अपावन अथिर घिनावन इसमे सार न कोई।

सागर के जल से शुचि कीजै तो भी शुद्ध न होई ।।७।।
सप्त कुधातु भरी मल मूत्र से चर्म लपेटी सोहै ।
अन्तर देखत या सम जग मे और अपावन को है ।।
नव मल द्वार स्रवै निशि वासर नाम लिये घिन आवे ।
व्याधि उपाधि अनेक जहाँ तहाँ कौन सुधी सुख पावे ।।८।।
पोषत तो दुख दोष करे अति सोषत सुख उपजावे ।
दुर्जन देह स्वभाव बराबर मूरख प्रीति बढावै ।।
राचन योग्य स्वरूप न याको विरचन योग्य सही है ।
यह तन पाय महातप कीजे इसमे सार यही है ।।९।।
भोग बुरे भव भोग बढावै वैरी हैं जग जी के ।
वे रस होय विपाक समय अति सेवत लागैं नीके ।।
वज्र अग्नि विषसे विषधर से है अधिक दुखदाई ।
धर्म रत्न को चोर प्रबल अति दुर्गति पथ सहाई ।।१०।।
मोह उदय यह जीव अज्ञानी भोग भले कर जाने ।
ज्यो कोई जन खाय धतूरा सो सब कंचन माने ।।
ज्यो-ज्यो भोग संयोग मनोहर मनवांछित जन पावे ।
तृष्णा डाकिनी त्यो-त्यो भके जहर लोभ विष लावे ।।११।।
मै चक्री पद पाय निरन्तर भोगे भोग घनेरे ।
तो भी तनिक भये ना पूरण भोग मनोरथ मेरे ।।
राज समाज महा अघ कारण बैर बढावन हारा ।
वेश्या सम लक्ष्मी अति चंचल इसका कौन पत्यारा ।।१२।।
मोह सदा रिपु वैर विचारे जग जीव सङ्कट टारे ।

कारागार बनिता बेडी परजन है रखवारे ।।
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरण तप ये जिय को हितकारी ।
ये ही सार असार और सब यह चक्री चित धारी ।।१३।।
छोडे चौदहरत्न नवोनिधि और छोडे सग साथी ।
कोडि अठारह घोड़े छोडे चौरासी लख हाथी ।।
इत्यादिक सम्पति बहु तेरी जीर्ण तृणवत् त्यागी ।
नीति विचार नियोगी सुत को राज्य दियो बडभागी ।।१४।।
होइ नि.शल्य अनेक नृपति सग भूषण वसन उतारे ।
श्री गुरु चरण धरी जिन मुद्रा पंच महाव्रत धारे ।।
धनि यह समझ सुबुद्धि जगोत्तम धन्य यह धैर्य्य धारी ।
ऐसी सम्पति छोड बसे वन तिन पद धोक हमारी ।।१५।।
दोहा—परिग्रह पोट उतार सब, दीनो चारित्र पंथ ।
निज स्वभाव मे थिर भये,वज्रनाभि निर्ग्रंथ ।।इति।।

गुरु स्तुति (१)

बन्दो दिगम्बर गुरुचरन, तरन तारन जान ।
जे भरम भारी रोगको, है राजवैद्य महान ।।
जिनके अनुग्रह बिन कभी, नहीं कटै कर्म जंजीर ।
ते साधु मेरे मन बसो, मेरी हरो पातक पीर ।।१।।
यह तन अपावन अशुचि है, संसार सकल असार ।
ये भोग विष पकवान से, इस भाति सोचविचार ।।
तप विरचि श्रीमुनि बन बसे, सब त्यागि परिग्रह भीर ।
ते साधु मेरे मन बसो, मेरो हरो पातक पीर ।।

जे काच कंचन सम गिनै, अरि मित्र एक सरूप ।
निन्दा बडाई सारिखी, वन खंड शहर अनूप ।।
सुख दुःख जीवन मरन मे, नहि खुशी नहि दिलगीर ।
ते साधु मेरे मन बसो, मेरी हरो पातक पीर ।।३।।
जे बाह्य परवत वन बसै, गिरि गुहा महल मनोग ।
सिल सेज समता सहचरी, शशिकरण दीपकजोग ।।
मृग मित्र भोजन तप मई, विज्ञाव निरमल नीर ।
ते साधु मेरे मन बसौ, मेरी हरो पातक पीर ।।४।।
सूखै सरोवर जल भरे, सूखै तरङ्गनि-तोय ।
वाटै बटोही ना चलै, जहँ घाम गरमी होय ।।
तिस काल मुनिवर तप तपै, गिरि शिखर ठाडे धीर ।
ते साधु मेरे मन बसो, मेरी हरो पातक पीर ।।५।।
घनघोर गरजै घनघटा, जल परै पावसकाल ।
चहुँ ओर चमकै बीजुरी, प्रति चलै शीतल व्याल (र)
तरुहेट तिष्ठै तब जती, एकात अचल शरीर ।
ते साधु मेरे मन बसो, मेरी हरो पातक पीर ।।६।।
जब शीतमास तुषारसौं, दाहैं सकल बनराय ।
जब जमै पानी पोखरा, थरहरै सबकी काय ।।
तब नगन निवसै चौहटै, अथवा नदी के तीर ।
ते साधु मेरे मन बसो, मेरी हरो पातक पीर ।।७।।
कर जोर 'भूधर' बीनवै, कब मिलै वे मुनिराज ।
यह आस मनकी कब फले, मेरे सरे सगरे काज ।।

संसार विषम विदेश में, जे विना कारण वीर ।
ते साधु मेरे मन बसो, मेरो हरो पातक पीर ।८।

गुरु स्तुति (२) दोहा [राग–भरथरी]

ते गुरु मेरे मन बसो जे भव–जलधि–जिहाज ।
आप तिरें पर तारहीं, ऐसे श्री ऋषिराज । ते० ॥ १ ॥
मोह महारिपु जीतिकें, छांड्यो सब घरबार ।
होय दिगम्बर बन बसे, आतम शुद्ध विचार । ते० ॥२॥
रोग उरग–बिल वपु गिण्यो, भोग भुजङ्ग समान ।
कदलीतरु संसार है, त्याग्यो यह सब जान । ते० ॥३।
रत्नत्रय निधि उर धरें, अरु निरग्रन्थ त्रिकाल ।
मार्यो काम पिशाच को, स्वामी परम दयाल ।।ते०॥४॥
पंच महाव्रत आदरें, पांचो समिति–समेत ।
तीन गुपति पालें सदा, अजर–अमर पद हेत । ते० ॥५॥
धर्म धरें दसलक्षणी, भावें भावना सार ।
सहें परीषह बीस द्वै, चारित–रतन भण्डार । ते० ॥६॥
जेठ तपै रवि आकरो,सूखे सरवर-नीर ।
शैल-शिखर मुनि तप तपैं, दाझैं नगन शरीर । ते० ॥७॥
पावस रैन डरावनी, बरसे जलधर धार ।
तरुतल निवसें साहसी, बाजें झंझाव्यार । ते ॥८॥
शीत पड़ें कपि–मद गलै, दाहे सब बनराय ।
ताल तरंगनि के तटै, ठाडे ध्यान लगाय । ते० ॥९॥

इहि विधि दुद्धर तप तपैं, तीनो कालमंझार ।
लागे सहज सरूपमे, तनसों ममत निवार ।ते०। ।१०।
पूरव भोग न चिंतवैं आगम बांछा नाहि ।
चहुँ गति के दुखसों डरैं, सुरत लगी शिव मांहि ।ते०। ।११।
रङ्ग महल मे पोढ़ते, कोमल सेज बिछाय ।
ते पच्छिम निशि भूमि में, सोवें संवरि काय ।ते०। ।१२।
गज चढ़ि चलते गरवसों, सेना सजि चतुरङ्ग ।
निरखि निरखि पग वे धरैं, पालैं करुणा अङ्ग ।ते०। ।१३।
वे गुरु चरण जहाँ धरे, जगमे तीरथ जेह ।
सो रज मम मस्तक चढो, 'भूधर' मागे येह ।ते०। ।१४।

श्री शांतिनाथ स्तोत्र

भये आप जिन देव जगत मे सुख विस्तारे ।
तारे भव्य अनेक तिन्हों के संकट टारे ।।
टारे आठों कर्म मोक्ष सुख तिन को भारी ।
भारी बिरद निहार लही मैं शरण तिहारी ।
चरणन को सिर नाय हूँ, दुख दरिद्र संताप हर ।
हर सकल कर्म छिन एक मे, शांति जिनेश्वर शांति कर ।।
दोहा—सारङ्ग लक्षण चरण मे, उन्नत धनु चालीस ।
हाटक वर्ण शरीर दुति, नमूं शांति जग ईश ।।

।। छन्द भुजंगप्रयात ।।

प्रभु आपने सर्वके फंद तोडे, गिनाऊँ कछू मैं तिन्हो नाम थोड़े।
पड्यो अवुधिबीच श्रीपाल राई, जपो नाम तेरो भए थे सहाई ।।

घरो रायने सेठको शूलिकापै, जपो आपके नामकी सार जापैं ।
भये थे सहाई तबै देव आये, करी फूल वर्षासु विष्टर बिठाये ।।
जबै लाखके धाम सब ही प्रजारो, भयो पांडवों पै महाकष्ट भारी ।
तबै नाम तेरे तनी टेर कीनी, करी थी विदुर ने वही राह दीनी।।
हरी द्रौपदी धातुकीखंड मांही, तुम्हीं हो सहाई भला और नांहि।।
लियो नामतेरो भलो शील पालो, बचाई तहांतै सबै दुःख टालो।।
जबै जानकी रामने जो निकारी, धरे गर्भको भार उद्यान डारी ।
रटो नाम तेरो सबै सौख्यदाई, करी दूर पीडासु छिन ना लगाई ।
विसन सात सेवैं करैं तस्कराई, सुअंजनको तारयो घडी ना लगाई
सहे अजना चन्दना दुःख जेते, गये भाग सारे जरा नाम लेते ।।
घडे बीचमे सासने नाग डारो, भलो नाम तेरो जु सोमा संभारो ।
गई काढने को भई फूलमाला, भई है विख्यातं सबै दुःख टाला ।।
इन्हे आदि देके कहांलौं बखानो,सुनो विरदभारी तिहूँलोक जानो
अजी नाथ मेरी जरा ओर हेरो, बड़ीनाव तेरी रती बोझ मेरो ।।
गहो हाथ स्वामी करो वेग पारा,कहूं क्या अबै आपनी मै पुकारा
सबै ज्ञानके बीच भासी तुम्हारे, करो देर नाहीं अहो शातिप्यारे।।

घत्ता

श्रीशांति तुम्हारी, कीरति भारी, सुन नर नारी गुणमाला ।
'बख्तावर' ध्यावे, 'रतन सुगावे, मम दुख दारिद सब टाला'।।

श्री वीर स्तवन

श्रीमन् महावीर विभो मुनीन्द्रो, देवाधिदेवेश्वर ज्ञानसिन्धो ।
स्वामिन् तुम्हारे पदपद्म का हो, प्रेमी सदाही यह चित्त मेरा ।।

स्वामिन् किसीका न बुरा विचारूं, सन्मार्गपै मै चलते न हारूं।
तत्त्वार्थ श्रद्धान सदैव धारूं, दो शक्ति हो उत्तम शील मेरा।।
सदा भलाई सबको करूं मै, सामर्थ्य पा जीव दया धरूं मै।
ससार के क्लेश सभी हरूं मै, हो ज्ञान चारित्र विशुद्ध मेरा।।
स्वामिन् तुम्हारी यह शांत मुद्रा, किसके लगाती हियमे ना क्षुद्रा
कहे उसे क्या यह बुद्धि क्षुद्रा, स्वीकारिये नाथ प्रणाम मेरा ।।
प्रभो तुम्ही हो निकटोपकारी, प्रभो तुम्ही हो भवदुःखहारी ।
प्रभो तुम्हींहो शुचिपंथचारी, हो नाथ साष्टांग प्रणाम मेरा ।।
जो भव्य पूजा करते तुम्हारी, होती उन्हीं की गति उच्चधारी।
प्रसिद्ध है 'दादुरफूल' वारी, सम्पूर्ण निश्चय नाथ मेरा ।।
मेरी प्रभो दशन शुद्धि होवे, सद्भावना पूर्ण समृद्धि होवे ।
पांचो व्रतो की शुभ सिद्धि होवे, सद्‌बुद्धि पै हो अधिकार मेरा।
आया नही गौतम विज्ञ जौलौं, खिरी न वाणी तव दिव्य तौलौं।।
पीयूष से पात्र भरा सतौलौं, मै पात्र होऊं अभिलाष मेरा ।
प्रभो तुम्हे हो दिन रात ध्याऊं, सदा तुम्हारे गुणगान गाऊं।।
प्रभावना खूब करूं कराऊं, कल्याण होवे सब भाँति मेरा ।
श्री वीर के मारग पै चले जो, श्री वीर पूजा मन से करे जो।
सद्भव्य वीर स्तव को पढे जो, वे लब्धियाँ पा सुख पूर्ण होवे।

ऋषि–मण्डल–स्तोत्र

आद्यन्ताक्षरसलक्ष्यमक्षरं व्याप्य यत्स्थितम् ।
अग्निज्वालासमं नाद विन्दुरेखासमन्वितम् ।। १ ।।

अग्निज्वालासमाक्रान्तं मनोमलविशोधनं ।
देदीप्यमानं हृत्पद्मे तत्पद नौमि निर्मलं । युग्मं ।
ॐ नमोऽर्हद्भ्यः ईशेभ्यः ॐ सिद्धेभ्यो नमो नमः ।
ॐ नम. सर्वसूरिभ्यः उपाध्यायेभ्यः ॐ नमः ।३।
ॐ नमः सर्वसाधुभ्यः तत्त्वदृष्टिभ्य ॐ नमः ।
ॐ नमः शुद्धबोधेभ्यश्चारित्रेभ्यो नमो नमः ।४।
श्रेयसेस्तु श्रियस्त्वेतदर्हदाद्यष्टक शुभं ।
स्थानेष्वष्टसु सन्यस्त पृथग्बीजसमन्वितम् ।५।
आद्यं पद शिरो रक्षेत् परं रक्षतु मस्तकं ।
तृतीयं रक्षेन्नेत्रे द्वे तुर्यं रक्षेच्च नासिकाम् ।६।
पंचमं तु मुख रक्षेत् षष्ठं रक्षतु घंटिकां ।
सप्तमं रक्षेन्नाभ्यन्त पादांतं चाष्टम पुनः ।७।युग्मं।
पूर्वं प्रणवतः सांतः सरेफो द्वित्रिपचषान् ।
सप्ताष्टदशसूर्याङ्कान् श्रितो बिंदुस्वरान् पृथक् ।८।
पूज्यनामाक्षराद्यस्तु पचदर्शनबोधकं ।
चारित्रेभ्यो नमो मध्ये ह्रीं सांतसमलंकृतम् ।६।
जम्बूवृक्षधरो द्वीपः क्षीरोदधि–समावृतः ।
अर्हदाद्यष्टकैरष्टकाष्ठाधिष्टैरलंकृतः ।१०।
तन्मध्ये संगतो मेरुः कूटलक्षैरलंकृतः ।
उच्चैरुच्चैस्तरस्तारतारामण्डलमण्डितः ।११।
तस्योपरि सकारात बीजमध्यास्य सर्वगं ।
नमामि बिम्बमार्हत्यं ललाटस्थं निरजनं ।१२।विशेषकं।

प्रक्षय निर्मल शातं बहुलं जाड्यनोज्झितं ।
निर्गोहं निरहकारं सार सारतर घनम् ।१३।
अनुद्भुतं शुभं स्फीत सात्विकं राजस मतं ।
तामसं विरस बुद्धं तैजसं शर्वरीसमम् ।१४।
साकारं च निराकार सरस विरस पर ।
परापर परातीत पर परपरापर ।१५।
सकलं निष्कल तुष्ट निर्भृत भ्रातिवर्जित ।
निरंजनं निराकांक्ष निर्लेप वीतसशय ।१६।
ब्रह्माणमीश्वरं बुद्धं शुद्धं सिद्धमभगुर ।
ज्योतिरूपं महादेवं लोकालोक-प्रकाशकं ।१७। कुलकं ।
अर्हदाख्य सवर्णान्तः सरेफो बिंदुमडित ।
तूर्यस्वरसमायुक्तो बहुध्यानादिमालित ।१८।
एकवर्णं द्विवर्णं च त्रिवर्णं तूर्यवर्णकं ।
पंचवर्ण महावर्ण सपर च परापर ।१९। युग्मं ।
अस्मिन् बीजे स्थिताः सर्वे ऋषभाद्या. जिनोत्तमाः ।
वर्णैर्निजैर्निजैर्युक्ता ध्यातव्यास्तत्र सगताः ।२०।
नादश्चद्रसमाकारो बिंदुर्नीलसमप्रभः ।
कलारुणसमाक्रान्तः स्वर्णाभः सर्वतोमुखः ।२१।
शिर संलीन ईकारो विनीलो वर्णतः स्मृत. ।
वर्णानुसारिसलीन तीर्थकृन्मंडलं नम. ।२२। युग्मं ।
चन्द्रप्रभपुष्पदन्तौ नादस्थितिसमाश्रितौ ।
बिन्दुमध्यगतौ नेमिसुव्रतौ जिनसत्तमौ ।२३।

पद्मप्रभवासुपूज्यो कलापदमधिश्रितौ ।
शिरईस्थितिसंलीनौ सुपार्श्वपार्श्वौ जिनोत्तमौ ।२४।
शेषास्तीर्थङ्कराः सर्वे रहःस्थाने नियोजिताः ।
मायाबीजाक्षरं प्राप्तश्चतुर्विंशतिरर्हतां ।२५।
गतरागद्वेषमोहाः सर्वपापविवर्जिताः ।
सर्वदा सर्वलोकेषु ते भवन्तु जिनोत्तमाः ।२६। कलापकं ।
देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा ।
तयाच्छादितसर्वांगं मां मा हिंसतु पन्नगाः ।२७।
देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा ।
तयाच्छादितसर्वांगं मां मा हिंसतु नागिनी ।२८।
देवदेवस्य यच्चक्र तस्य चक्रस्य या विभा ।
तयाच्छादितसर्वांगं मा मा हिंसतु गोनसाः ।२९।
देवदेवस्य……मा हिंसतु वृश्चिकाः ।३०।*
देवदेवस्य……मा हिंसतु काकिनी ।३१।
देवदेवस्य……मा हिंसतु डाकिनी ।३२।
देवदेवस्य… …मा हिंसतु साकिनी ।३३।
देवदेवस्य ……मा हिंसतु राकिनी ।३४।
देवदेवस्य……मा हिंसतु लाकिनी ।३५।
देवदेवस्य……मा हिंसतु शाकिनी ।३६।

---

* नोट—२९ वें श्लोक के बाद ३१ वें मे भी २९ वें श्लोक की भाति पाठ पढते हुए अन्त मे 'गोनसा' के स्थान पर वृश्चिका तथा ३१ व ३२ इत्यादि मे क्रमश काकिनी,डाकिनी आदि बोलना चाहिये

देवदेवस्य ··मा हिंसतु हाकिनी ।३७।
देवदेवस्य···मा हिंसतु राक्षसाः ।३८।
देवदेवस्य···मा हिंसतु व्यन्तराः ।३९।
देवदेवस्य···मा हिंसतु भेकसाः ।४०।
देवदेवस्य···मा हिंसतु ते ग्रहा ।४१।
देवदेवस्य···मा हिंसतु तस्कराः ।४२।
देवदेवस्य···मा हिंसतु वह्नयः ।४३।
देवदेवस्य···मा हिंसतु शृंगिणः ।४४।
देवदेवस्य···मा हिंसतु दंष्ट्रिणः ।४५।
देवदेवस्य···मा हिंसतु रेलपाः ।४६।
देवदेवस्य···मा हिंसतु पक्षिणः ।४७।
देवदेवस्य···मा हिंसतु मुद्गलाः ।४८।
देवदेवस्य···मा हिंसतु जृंभका. ।४९।
देवदेवस्य···मा हिंसतु तोयदाः ।५०।
देवदेवस्य ··मा हिंसतु सिंहकाः।५१।
देवदेवस्य···मा हिंसतु शूकराः ।५२।
देवदेवस्य···मा हिंसतु चित्रकाः ।५३।
देवदेवस्य···मा हिंसतु हस्तिनः ।५४।
देवदेवस्य···मा हिंसतु भूमिपा. ।५५।
देवदेवस्य···मा हिंसतु शत्रवः ।५६।
देवदेवस्य···मा हिंसतु ग्रामिणः ।५७।
देवदेवस्य ··मा हिंसतु दुर्जनाः ।५८।

देवदेवस्य···मा हिंसतु व्याधय· ।५९।
श्रीगौतमस्य या मुद्रा तस्या या भुवि लब्धयः ।
ताभिरभ्यधिकं ज्योतिरर्हं: सर्वनिधीश्वरः ।६०।
पातालवासिनो देवा देवा भूपीठवासिनः ।
स्वः स्वर्गवासिनो देवाः सर्वे रक्षंतु मामित· ।६१।
येऽवधिलब्धया ये तु परमावधिलब्धयः ।
ते सर्वे मुनयो दिव्या मां संरक्षन्तु सर्वतः ।६२।
ॐ श्रीं ह्रींश्च धृतिलंक्ष्मीः गौरी चण्डी सरस्वती ।
जया वा विजया चिलन्नाऽजिता नित्या मदद्रवा ।६३।
कामागा कामबाणा च सानन्दा नन्दमालिनी ।
माया मायाविनी रौद्री कला काली कलिप्रिया ।६४।
एताः सर्वा महादेव्यो वर्तंते या जगत्त्रये ।
मम सर्वाः प्रयच्छन्तु कान्ति लक्ष्मीं धृति मति । ७५ ।
दुर्जना भूतवेतालाः पिशाचा मुद्गलास्तथा ।
ते सर्वे उपशाम्यन्तु देवदेवप्रभावतः ।६६।
दिव्यो गोप्यः सुदुष्प्राप्यः श्री ऋषिमण्डलस्तवः ।
भाषितस्तीर्थंनाथेन जगत्त्राणकृतोऽनघ ।६७।
रणे राजकुले वह्नौ जले दुर्गे गजे हरौ ।
श्मसाने विपिने घोरे स्मृतौ रक्षति मानवं ।६८।
राज्यभ्रष्टा निजां राज्य पदभ्रष्टा निजं पद ।
लक्ष्मीभ्रष्टा निजं लक्ष्मीं प्राप्नुवन्ति न सशयः । ६९ ।
भार्यार्थी लभते भार्यां पुत्रार्थी लभते सुतं ।

कल्याण मन्दिर स्तोत्र भाषा

दोहा—परमज्योति परमात्मा, परमज्ञान परवीन ।
वन्दौं परमानन्दमय, घट घट अन्तरलीन । १ ।

चौपई—निर्भय करन परम परधान, भवसमुद्र—जलतारण यान।
शिव-मन्दिर अघहरण अनिन्द, वंदहु पासचरण अरविन्द ।२।
कमठमानभंजन वरवीर, गरिमासागर गुण—गम्भीर ।
सुरगुरु पार लहैं नहि जासु मैं अजान जंपो [1]जसु तासु ।३।
प्रभुस्वरूप अति अगम अथाह, क्यों हमसे इह होय निवाह ।
ज्यो दिन अध उलूको पोत[2], कहि न सकै रविकिरन उदोत ।४
मोहहीन जानैं मनमांहि, तोहु न तुम गुण वरणे जांहि ।
प्रलयपयोधि करै जल वौन[3], प्रगटहि रतन गिनै तिहि कौन ।५
तुम असंख्य निर्म्मलगुणखानि, मैं मतिहीन कहो निजबानि ।
ज्यौं बालक निज बांह पसार, सागर परिमित कहै विचार ।६
जो जोगीन्द्र करहिं तप खेव, तऊ न जानहि तुम गुण भेद ।
भक्तिभाव मुझ मन अभिलाख, ज्यो पंछी बोलहि निज भाख७
तुम जस महिमा अगम अपार, नाम एक त्रिभुवन—आधार ।
आवै पवन पद्मसर[4] होय, ग्रीषम तपत निवारै सोय ।८।
तुम आवत भविजन घटमांहि, कर्मनिबन्ध शिथिल हो जांहि।
ज्यो चंदनतरु बोलहि मोर, डरपि भुजङ्ग लगे चहुं ओर ।९।
तुम निरखत जन दीनदयाल, सङ्कटतैं छूटहि तत्काल ।
ज्यो पशु घेर लेहिं निशिचोर, ते तज भागहि देखत भोर ।१०

१ कहता । २ बच्चा । ३ वमन । ४ कमल सरोवर से छूती हुई ।

तू भविजन तारक किम होइ, ते चित धार तिरहिं लै तोहि ।
यह ऐसे करि जान स्वभाव, तिरहि मसक ज्यों गर्भित वाउ।११
जिह सब देव किये वश वाम, तैं छिनमे जीत्यो सो काम ।
ज्यों जल करे अग्निकुलहानि, बडवानल पीवे सो पानि ।१२।
तुम अनन्त गरुवागुण लिये, क्योंकरि भक्ति धरु निज हिये ।
ह्वै लघुरूप तिरहिं संसार, यह प्रभु महिमा अगम अपार ।१३।
क्रोध निवार कियो मनशांत कर्म सुभट जीते किहिं भांत ।
यह पटतर देखहु संसार नीलवृक्ष ज्यों दहै तुषार ।१४।
मुनिजन हिये कमल निज टोहि, सिद्धरूपसम ध्यावहिं तोहि ।
कमल-कर्णिका बिन नहिं और, कमलबीज उपजनकी ठौर।१५
जब तुव ध्यान धरै मुनि कोय, तब विदेह परमातम होय ।
जैसे धातु-शिला तन त्याग, कनक-स्वरूप धवै जब आग ।१६।
जाके मन तुम करहु निवास, विनशि जाय क्यों विग्रह तास ।
ज्यों महन्त बिच आवै कोय, विग्रह-मूल निवारै सोय ।१७
करहिं विबुध जे आतम ध्यान, तुम प्रभावतै होय निदान ।
जैसे नीर सुधा अनुमान, पीवत विष-विकार की हान ।१८
तुम भगवन्त विमल गुणलीन, समल रूप मानहिं मतिहीन ।
ज्यों पीलिया रोग दृग गहै, वर्ण विवर्ण शंखसौं कहै ।१९

दोहा—निकट रहत उपदेश सुनि, तरुवर भयो अशोक ।
ज्यों रवि ऊगत जीव सब, प्रकट होत भुविलोक ।२०
सुमनवृष्टि जो सुर करहिं, हेट बीठमुख[1] सोहिं ।
त्यों तुम सेवत सुमनजन, बंध अधोमुख होहिं ।२१

---

१. डण्ठल का मुख नीचे की ओर

उपजी तुम हिय उदधितें, वाणी सुधा समान ।
जिहि पीवत भविजन लहहिं. अजर अमर पदथान ।२२।
कहहिं सार तिहुंलोक को, ये सुरचामर दोय ।
भावसहित जो नित नमे,तसु गति ऊरध होय ।२३।
सिंहासन गिरि मेरु सम, प्रभुधुनि गरजत घोर ।
श्याम सुतनु घनरूप लखि, नाचत भविजन मोर ।२४।
छवि-हत होत अशोकदल, तुम भामण्डल देख ।
वीतराग के निकट रह, रहत न राग विशेख ।२५।
सीख कहै तिहुंलोकको, यह सुरदुन्दुभिनाद ।
शिवपथ सारथिवाह जिन, भजहु तजहु परमाद ।२६।
तीन छत्र त्रिभुवन उदित, मुक्तागण छविदेत ।
त्रिविधरूप धरि मनहु शशि, सेवत नखत समेत ।२७।

पद्धरी–छन्द

प्रभु तुम शरीर दुति रतन जेम,परताप-पुंज जिम शुद्ध हेम ।
अति धवल सुजस रूपा समान,तिनके गढ तीन विराजमान ।
सेवहिं सुरेन्द्र कर नमतिभाल,तिन शीशमुकुट तज देहिं माल ।
तुमचरण लगत लहलहे प्रीति,नहिं रमहिं और जन सुमनरीति।
प्रभु भोग-विमुख तन कर्मदाह,जन पार करत भवजल निवाह।
ज्यो माटीकलश सुपक्क होय, ले भार अधोमुख तिरहिं तोय।।
तुम महाराज निर्धन निराश, तज विभव २ सब जग विकास।
अक्षर स्वभावसें लिखे न कोय, महिमा अनन्त भगवन्त सोय।
कर कोप कमठ निज वैर देख, तिन करी धूल वर्षा विशेष ।

प्रभु तुम छाया नहि भई हीन, सो भयो पापि लपट मलीन।।
गरजत घोर घन अंधकार, चमकत बिज्जु जल मुसलधार।
वरषत कमठ धर ध्यान रुद्र, दुस्तर करन्त निजभवसमुद्र।३३

वस्तु छन्द

मेघमाली मेघमाली आप बल फोरि।
भेजे तुरत पिशाचगण, नाथ पास उपसर्ग कारण।
अग्निजाल झलकन्त मुख, धुनि करत जिमि मत्तवारण
कालरूप विकराल तन, मुंडमाल तिह कण्ठ।
ह्वै निशङ्क वह रङ्क निज, करै कर्म दृढ कण्ठ।।

चौपई

जे तुम चरणकमल तिहुकाल, सेवहि तज माया जंजाल।
भाव भगति मन हरष अपार, धन्य धन्य जग तिन अवतार।
भवसागर मे फिरत अजान, मै तुम सुजस सुन्यो नहि कान।
जो प्रभु नाम मन्त्र मन धरै, तासौं विपति भुजङ्गम डरै।३६
मनवांछित फल जिनपद माहि, मै पूरब भव पूजे नाहि।
माया मगन फिरचो अज्ञान, करहि रङ्कजन मुझ अपमान।
मोहतिमिर छायो दृग मोहि, जन्मान्तर देख्यो नहि तोहि।
तौ दुर्जन मुझ सगति गहै, मरमछेद के कुवचन कहै।३८।
सुन्यो कान जस पूजे पाय, नैनन देख्यो रूप अघाय।
भक्तिहेतु न भयो चित चाव, दुखदायक किरिया विन भाव।
महाराज शरणागत पाल, पतित उधारन दीनदयाल।
सुमिरण करहुँ नाय निज शीश, मुझ दुख दूर करहु जगदीश।।

कर्मनिकन्दन महिमासार, अशरण शरण सुजश विस्तार ।
नहिं सेये प्रभु तुमरे पाय,तो मुझ जन्म अकारथ जाय ।४१।
सुरगण वन्दित दयानिधान, जगतारण जगपति जग जान ।
दुखसागर ते मोहि निकास,निर्भय थान देहु सुखराशि ।४२।
मैं तुम चरण कमल गुन गाय, बहुविधि भक्ति करो मनलाय
जन्म जन्म प्रभु पावहुँ तोहि,यह सेवाफल दीजे मोहि ।४३।

दोघकान्त वेसरी छन्द षट्पद

इहि विधि श्री भगवन्त, सुजस जे भविजन भाषहिं ।
ते निज पुन्य–भण्डार सचि, चिर पाप प्रणाशहिं ।
रोम रोम हुलसति अङ्ग प्रभु गुण मन ध्यावहिं ।
स्वर्ग–सम्पदा भुंज वेग, पचमगति पावहिं ।
यह कल्याण मन्दिर कियो, कुमुदचन्द्र की बुद्धि ।
भाषा कहत 'बनारसी', कारण समकित शुद्धि । ४४ ।इति।

एकीभाव स्तोत्र

दोहा—वादिराज मुनिराज के, चरण कमल चितलाय ।
भाषा एकीभाव की, करूं स्वपर सुखदाय ।।

(रोला छन्द)

जो अति एकीभाव भयो मानो अनिवारी,
सो मुझ कर्म-प्रबन्ध करत भव-भव दुखभारी ।
ताहि तिहारी भक्ति, जगत-रवि जो निरवारै,
सो अब और कलेश कौन, सो नाहिं बिदारै ।।१।।

तुम जिन ज्योतिस्वरूप दुरित अन्धियार निवारी,
सो गणेश गुरु कहै, तत्त्व-विद्याधन धारी ।
मेरे चित-घर माहि, वसो तेजोमय यावत,
पापतिमिर अवकाश, तहा सो क्यो करि पावत ।२
आनन्द आसू वदन धोय तुमसो नित मानै,
गदगद सुरसो सुयश मन्त्र पढि पूजा ठानै ।
ताके बहुविधि व्याधि व्याल चिरकाल निवासी,
भाजं थानक छोड देहवमियो के वासी ।३।
दिवितै आवनहार भये भवि-भाग उदय-वल,
पहले ही सुर आय कनकमय कीन महीतल ।
मन-गृह ध्यान-दुवार आय, निवसो जगनामी,
जो सुवर्ण तन करो, कौन यह अचरज स्वामी ।४।
प्रभु सव जग के विना हेतु, वाधव उपकारी,
निरावर्ण सर्वज्ञ शक्ति, जिनराज तिहारी ।
भक्ति-रचित मम चित्त-सेज नित वास करोगे,
मेरे दुख सताप देख, किमि धीर धरोगे ।५।
भववन मे चिरकाल भ्रम्यो कछु कहिय न जाई,
तुम थुति-कथा पियूष-वापिका भागन पाई ।
शशि तुषार घनसार हार शीतल नहि जा सम,
करत न्हौन ता माहि क्यो न भवताप बुझै मम ।६।
श्री विहार परिवाह होत शुचि रूप सकल जग,
कमल कनक आभास सुरभि श्रीवास धरत पग ।

मेरो मन सर्वांग परस प्रभुको सुख पावै,
अब सो कौन कल्याण जो न दिन दिन ढिग आवै । ७ ।
भव तज सुखपद बसे काम—मद–सुभट संहारे,
जो तुमको निरखंत सदा प्रियदास तिहारे ।
तुम बचनामृत–पान भक्ति–अंजुलिसो पीवै,
तिन्हे भयानक क्रूर रोग–रिपु कैसे छीवै । ८ ।
मानथंभ पाषाण आन पाषाण पटंतर,
ऐसे और अनेक रत्न दीखै जग—अन्तर ।
देखत दृष्टिप्रमाण मान मद तुरत मिटावै,
जो तुम निकट न होय शक्ति यह क्यों कर पावै । ६ ।
प्रभुतन पर्वत परस पवन उरमे निवह्वै है,
तासों ततछिन सकल रोगरज बाहिर ह्वै है ।
जाके ध्यानाहूत बसो उर–अंबुज माहीं,
कौन जगत उपकार करण समरथ सो नाहीं । १० ।
जन्म–जन्म के दुःख सहे सब ते तुम जानो ।
याद किये मुझ हिये लगै आयुध से मानो ।
तुम दयाल जगपाल स्वामि मैं शरण गही है,
जो कुछ करनो होय करो परमान वही है । ११ ।
मरण समय तुम नाम मंत्र जीवकतै पायो,
पापाचारी स्वान प्राण तज अमर कहायो ।
जो मणिमाला लेय जपै तुम नाम निरन्तर ।
इन्द्र–सम्पदा लहै कौन, संशय इस अन्तर । १२ ।

जे नर निर्मल ज्ञान मान शुचि चारित साधैं,
अनवधि सुख की सार भक्ति-कू ची नहिं हाथैं।
सो शिव—वांछक पुरुष मोक्षपद केम उघारैं,
मोह-मुहर दिढ़करी मोक्षमन्दिर के द्वारैं। १३।
शिवपुर केरो पथ पापतमसो अति छायो,
दुख—सरूप बहु कूप-खाडसों विकट बतायो।
स्वामी सुख सो तहां कौन जन मारग लागे,
प्रभु-प्रवचन मणिदीप जो न हूं आगें आगें। १४।
कर्म-पटल भूमाहि दबी आतमनिधि भारी,
देखत अति सुख होय विमुखजन नाहि उघारी।
तुम सेवक तत्काल ताहि निश्चय कर धारैं,
स्तुति-कुदाल सौं खोद बन्द-भू कठिन विदारैं। १५।
स्याद्वाद-गिरि उपज मोक्ष—सागर लौं धाई,
तुम चरणाम्बुज परस भक्ति-गङ्गा सुखदाई।
मो चित निर्मल थयो न्हौन रुचि पूरब तामैं,
अब वह हो न मलीन कौन जिन संशय यामैं। १६।
तुम शिवसुखमय प्रकट करत प्रभु चितवन तेरो,
मैं भगवान समान, भाव यों वरते मेरो।
यदपि झूठ है तदपि तृप्ति निश्चल उपजावै,
तुम प्रसाद सकलङ्क जीव वांछित फल पावै। १७।
वचन-जलधि तुम देव सकल त्रिभुवन में व्यापै,
भग तरंगिनि विकथ-वाद-मल मलिन उथापै।

मन–सुमेरु सों मथै, ताहि जे सम्यग्ज्ञानी,
परमामृत सों तृपत होहि ते चिर लों प्राणी । १८ ।
जो कुदेव छविहीन, वसन भूषण अभिलाखै,
वैरी सो भयभीत होय सो आयुध राखै ।
तुम सुन्दर सर्वंग, शत्रु समरथ नहिं कोई,
भूषण वसन गदादि ग्रहण काहे को होई । १९ ।
सुरपति सेवा करै कहा प्रभु प्रभुता तेरी,
सो श्लाघना लहै मिटै जगसों जग–फेरी ।
तुम भव–जलधि जहाज तोहि शिव–कंत उचरिये,
तुही जगत–जन–पाल नाथ थुति की थुति करिये ।२०।
वचन जाल जड़रूप, आप चिन्मूरति झांई,
तातैं थुति आलाप नाहिं पहुंचे तुम तांई ।
तो भी निष्फल नाहिं भक्ति रस भीने वायक,
सन्तन को सुरतरु समान वांछित वर–दायक । २१ ।
कोप कभी नहि करो प्रीति कबहूं नहि धारो,
अति उदास बेचाह, चित्त जिनराज तिहारो ।
तदपि आन जग बहै, बैर तुम निकट न लहिये,
यह प्रभुता जग–तिलक, कहां तुम बिन सरधैये । २२ ।
सुर–तिय गावैं सुयश सर्वगति ज्ञान स्वरूपी,
जो तुमको थिर होहिं, नमै भवि आनन्दरूपी ।
ताहि क्षेमपुर चलन बाट, बांकी नहिं हो है,
श्रुत के सुमरण माहिं सो न कबहूं नर मोहै । २३ ।

सहा जाता नाहीं, अकल घबराई भ्रमण में ।
करूं क्या माँ मोरी चलत वश नाहीं मिटन का ।करूं ।।२।।
सुनो मातः मोरी अरज करता हूं दरद में ।
दुखी जानो मोको डरप कर आया शरण में ।
कृपा ऐसी कीजे, दरद मिट जाये मरण का ।।करूं ।। ३ ।।
पिलावे जो मोकूं, सुबुद्धिकर प्याला अमृत का ।
मिटावे जो मेरा, सरब दुख सारे फिरन का ।।
पड़ूं पांवां तेरे हरो दुख सारा फिकर का ।। करूं ।। ४ ।।
(सवैया)—मिथ्यातम नासवे को, ज्ञान के प्रकाशवे को ।
आपा परकासवे को, भानुसी बखानी है ।।
छहों द्रव्य जानवे को, वस्तु विधि भानवे को ।
स्व-पर पिछानवे को, परम प्रमानी है ।।
अनुभौ बतायवे को, जीव के जतायवे को ।
काहू न सतावे को, भव्य उर आनी है ।।
जहां तहां तारवे को, पार के उतारवे को ।
सुख विस्तारवे को, ऐसी जिन वाणी है ।।
दोहा-जिनवाणी की स्तुति करे, अल्प बुद्धि परमान ।
विनयवश 'पन्नालाल' बिनती करे, दे माता मोहि ज्ञान ।।६।।
हे जिनवाणी भारती, तोहि जपूं दिन रैन ।
जो तेरा सरणा गहे, सुख पावै दिन रैन ।।७।।
जा बानी के ज्ञान तें सूझै लोकालोक ।
सो वाणी मस्तक चढो, सदा देत हो धोक ।।

भजन सिद्धचक्र

श्री सिद्धचक्र का पाठ करो दिन आठ ठाठ से प्राणी,
फल पायो मैना राणी ।टेक।
मैना सुन्दरि इक नारी थी,कोढ़ी-पति लखि दुखियारी थी ।
नहिं पड़े चैन दिन रैन व्यथित अकुलानी । फल० । १ ।
जो पति का कष्ट मिटाऊँगी, तो उभयलोक सुख पाऊँगी ।
नहिं अजागल-स्तनवत् निष्फल जिन्दगानी । फल० । २ ।
इक दिवस गई जिन मन्दिर में,दर्शन करि अति हर्षी उरमें ।
फिर लखे साधु निर्ग्रन्थ दिगम्बर ज्ञानी । फल० । ३ ।
बैठी मुनि को कर नमस्कार, निज निन्दा करती बार बार ।
भरि अश्रु नयन कहि मुनिसों, दुखद कहानी । फल० । ४ ।
बोले मुनि पुत्री धैर्य धरो, श्री सिद्धचक्र का पाठ करो ।
नहिं रहे कुष्ट की तन में नाम निशानी । फल० । ५ ।
सुनि साधु वचन हर्षी मैना, नहिं होय झूंठ मुनि के बैना ।
करिके श्रद्धा श्री सिद्धचक्र की ठानी । फल० । ६ ।
जब पर्व अठाई आया है, उत्सवयुत पाठ कराया है ।
सबके तन छिड़का यन्त्र-न्हवन का पानी । फल० । ७ ।
गंधोदक छिड़कत वसुदिन में, नहिं रहा कुष्ट किंचित् तनमें ।
भई सात शतक की काया स्वर्ण समानी । फल० । ८ ।
भवभोग भोगि योगेश भये श्रीपाल कर्म हनि मोक्ष गये ।
दूजे भव मैना पावै शिव रजधानी । फल० । ९ ।

जो पाठ करे मन वच तन से, वे छूट जांय भवबन्धन से।
'मक्खन' मत करो विकल्प, कहा जिनवानी। फल०। १०।

मंगलाष्टकम्

श्रीमन्नम्रसुरा-सुरेन्द्र-मुकुट-प्रद्योतरत्न-प्रभा—
भास्वत्पादनखेन्दवः प्रवचनाम्भोधीन्दवः स्थायिनः।
ये सर्वे जिनसिद्धसूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः।
स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्चगुरवः कुर्वन्तु ते मङ्गलम्। १।
नाभेयादिजिनाः प्रशस्तवदनाः, ख्याताश्चतुर्विंशतिः।
श्रीमन्तो भरतेश्वरप्रभृतयो, ये चक्रिणो द्वादश।
ये विष्णुप्रतिविष्णु—लाङ्गलधरा सप्तोत्तरा विंशतिः।
त्रैकाल्ये प्रथितास्त्रिषष्टिपुरुषाः, कुर्वन्तु ते मङ्गलम्। २।
ये पञ्चौषधिऋद्धयः, श्रुततपो-वृद्धिगता पञ्च ये।
ये चाष्टाङ्गमहानिमित्तकुशलाश्चाष्टौ विधाश्चारिणः।
पञ्चज्ञानधरास्त्रयेऽपि विपुला, ये बुद्धि-ऋद्धीश्वराः।
सप्तैते सकलार्चिता मुनिवराः कुर्वन्तु ते मङ्गलम्। ३।
ज्योतिर्व्यन्तर-भावनामर—गृहे, मेरौ कुलाद्रौ स्थिताः।
जम्बूशाल्मलिचैत्यशाखिषु तथा, वक्षार—रूप्याद्रिषु।
इक्ष्वाकारगिरौ च कुण्डलनगे, द्वीपे च नन्दीश्वरे।
शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः कुर्वन्तु ते मङ्गलम्। ४।
कैलाशो वृषभस्य निर्वृत्ति—मही, वीरस्य पावापुरी।
चम्पा या वसुपूज्यसज्जिनपतेः सम्मेदशैलोऽर्हताम्।

शेषाणामपि चोर्जयन्तगिरिणो नेमीश्वरस्यार्हतः ।
निर्वाणावनयः प्रसिद्धविभवा कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ।५।
सर्पो हारलता भवत्यसिलता, सत्पुष्पदामायते ।
सम्पद्येत रसायनं विषमपि, प्रीतिं विधत्ते रिपुः ॥
देवा यान्ति वशं प्रसन्नमनसः, किं वा बहु ब्रूमहे ।
धर्मादेव नभोऽपि वर्षति तरां, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ।६।
यो गर्भावतरोत्सवो भगवतां, जन्माभिषेकोत्सवो ।
यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो, यः केवलज्ञानभाक् ।
यः कैवल्यपुरप्रवेशमहिमा, सम्पादितः स्वर्गिभिः ।
कल्याणानि च तानि पञ्च सततं,कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ।७।
आकाशं मूर्त्यभावादघकुलदहनादग्निरुर्वी क्षमाप्त्या ।
नैःसंगाद्वायुरापः प्रगुणशमतया, स्वात्मनिष्ठः सुयज्वा ।
सोमः सौम्यत्वयोगाद्रविरिति च विदुस्तेजसः सन्निधानाद् ॥
विश्वात्मा विश्वचक्षुः वितरतु भवतां, मंगलं श्रीजिनेशः ।८।
इत्थं श्री जिनमंगलाष्टकमिदं, सौभाग्य–सम्पत्करं ।
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थङ्कराणां सुखाः ॥
ये शृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनैः, धर्मार्थकामान्विताः ।
लक्ष्मीर्लभ्यत एव मानवहिता, निर्वाणलक्ष्मीरपि ॥९॥

॥ इति मंगलाष्टकम् ॥

स्वयंभूस्तोत्र भाषा

॥ चौपाई ॥

राजविषै जुगलनि सुख कियो,राजत्याग भुवि शिवपद लियो।
स्वय बोध स्वयम्भू भगवान, बन्दौं आदिनाथ गुणखान ।१।
इन्द्र क्षीरसागर-जल-लाय, मेरु न्हवाये गाय बजाय।
मदन विनाशक सुख करतार,बन्दौं अजित अजितपदकार ।२।
शुक्ल ध्यानकरि करमविनाशि, घाति अघाति सकल दुखराशि
लह्यो मुकतिपद सुख अविकार, बन्दौं संभव भवदुख टार ।३।
माता पश्चिम रयनमझार, सुपने सोलह देखे सार ।
भूप पूछि फल सुनि हरषाय, बन्दौं अभिनन्दन मनलाय ।४।
सर्व कुवादवादी सरदार, जीते स्याद्वाद धुनिसार ।
जैन धरम परकाशक स्वामि,सुमतिदेवपद करहुं प्रणामि ।५।
गर्भ अगाऊ धनपति आय, करी नगर शोभा अधिकाय।
बरसे रतन पंचदश मास, नमौं पद्मप्रभ सुखकी रास ।६।
इन्द फनिन्द नरिन्द त्रिकाल,बानी सुनि सुनि होहिं खुस्याल।
द्वादश सभा ज्ञानदातार, नमौं सुपारसनाथ निहार ।७।
सुगुन छियालिस हैं तुम माहिं, दोष अठारह कोऊ नाहिं ।
मोह महातमनाशक दीप, नमौं चन्द्रप्रभ राख समीप ।८।
द्वादश विध तप करम विनाश, तेरह भेद चरित परकाश ।
निज अनिच्छभवि इच्छकदान,बन्दौं पहुपदन्त मन आन ।९।
भविसुखदाय सुरगतें आय, दशविध धरम कह्यौ जिनराय ।
आप समान सबनि सुख देह,बन्दौं शीतल धरम सनेह ।१०।

ममता मुधा कोपविष नाश, द्वादशाङ्ग बानी परकाश।
चारिमङ्ग-आनन्द-दातार, नमौं श्रियांस जिनेश्वर सार।११।
रतनत्रय चिर मुकुट विशाल, सोभै कण्ठ सुगुन मनिमाल।
मुक्तिनार-भरता भगवान वासुपूज्य बन्दौं धर ध्यान।१२।
परम समाधि-स्वरूप जिनेश, ज्ञानी ध्यानी हित उपदेश।
कर्मनाशि शिवसुख विलसन्त, बन्दौं विमलनाथ भगवन्त।१३।
अन्तर बाहिर परिग्रह डारि, परम दिगम्बरव्रत को धारि।
सर्व जीवहित-राह दिखाय, नमौं अनन्त वचन मन लाय।१४।
सात तत्त्व पञ्चासतिकाय, अर्थ नवौं छः द्रव्य बहुभाय।
लोक अलोक सकल परकाश, बन्दौं धर्मनाथ अविनाश।१५।
पंचम चक्रवर्ति निधि भोग कामदेव द्वादशम मनोग।
शान्तिकरन सोलम जिनराय, शान्तिनाथ बन्दौं हरषाय।१६।
बहु थुति करैं हरष नहिं होय, निन्दे दोष गहैं नहिं कोय।
शीलवान परब्रह्मस्वरूप, बन्दौं कुन्थुनाथ शिवभूप।१७।
द्वादशगण पूजैं सुखदाय, थुति वन्दना करैं अधिकाय।
जाकी निज थुति कबहुं न होय, बन्दौं अर जिनवर-पद दोय।१८
परभव रत्नत्रय-अनुराग, इह भव ब्याह-समय वैराग।
बालब्रह्म पूरव व्रत धार, बन्दौं मल्लिनाथ जिनसार।१९।
बिन उपदेश स्वयं वैराग, थुति लोकान्त करैं पगलाग।
नमः सिद्ध कहि सब व्रत लेहि, बन्दौं मुनिसुव्रत व्रत देहि।२०।
श्रावक विद्यावन्त विहार, भगतिभावसों दियो आहार।
बरसी रतनराशि तत्काल, बन्दौं नमिप्रभ दीनदयाल।२१।

सब जीवन की बन्दी छोर, राग-द्वेष द्वै बन्धन तोर ।
रजमति तजि शिवतियसों मिले,नेमिनाथ बन्दौं सुख-निले।२२
दैत्य कियो उपसर्ग अपार, ध्यान देखि आयो फनिधार ।
गये कमठ शठ मुखकर श्याम,नमो मेरुसम पारस-स्वामि।२३।
भवसागरतैं जीव अपार, धरमपोत मे धरे निहार ।
डूबत काढे दया विचार, वर्द्धमान बन्दौं बहुबार । २४ ।

दोहा—चौबीसों पद कमलजुग, बन्दौं मनवचकाय ।
'द्यानत' पढै सुनै सदा, सो प्रभु क्यों न सहाय ।।

वैराग्य भजन

संत साधु बनके विचरूं, वह घडी कब आयगी ।
शान्ति तब मन मे मेरे, वैराग्य की छा जायगी । टेर।
मोह ममता त्याग दूं मै, सब कुटुम्ब परिवार से ।
छोड़ दूं झूंठी लगन, धन धाम अरु घरबार से ।।
मोह तज दू महलो–मन्दिर, और चमन गुलजार से ।
बन मे जा डेरा करूं, मुंह मोड इस ससार से ।।१।।
इस जगत मे जो पदारथ, आ रहे मुझको नजर ।
थिर नहीं है एक इनमें, हैं ये सब के सब अथिर ।।
जिन्दगी का क्या भरोसा, यह रही हरदम गुजर ।
दम है जब तक दम मे दम है, दममे दम से बे-खबर ।।२।।
कौनसी वह चीज है, जिस पर लगाऊ दिल यहां ।
आज जीवन बन रहा, जो कल भला वह फिर कहां ।।

माल श्रौ धनकी हकीकत, है जमाने पर श्रया ।
क्या भरोसा लक्ष्मी का, पद यहा श्रौर कल वहा ॥३॥
बाप मा अरु बहन भाई, बेटा बेटो नार क्या ।
सब सगे अपनी गरज के, यार क्या परिवार क्या ।
बात मतलब से करे सब, जगत क्या ससार क्या ।
बिन गरज पूछे न कोई, बात क्या तकरार क्या ॥४॥
था अकेला हूँ अकेला, अरु अकेला ही रहूँ ।
जो पडे दुख मैं सहे, अरु जो पडे सो मैं सहूँ ।
कौन है अपना सहायक कौन का शरणा गहूँ ॥
फिर भला किसको जगत मे, अपना हमराही कहूँ ॥५॥
ज्ञानरूपी जल से अग्नि-क्रोध को शीतल करूं ।
मान माया लोभ राग रु, द्वेष आदिक परिहरूं ॥
वश मे विषयो को करू, अरु सब कषायो को हरूं ।
शुद्ध चित आनन्द मे मैं, ध्यान आतम का धरूं ॥६॥
जगके सब जीवो से अपना, प्रेम हो अरु प्यार हो ।
अरु मेरी इस देह से, ससार का उपकार हो ॥
ज्ञान का प्रचार हो अरु देश का उद्धार हो ।
प्रेम और आनन्द का व्यवहार घर घर द्वार हो ॥७॥
काल सर पर कालका, खञ्जर लिए तैयार है ।
कौन बच सकता है इससे, इसका गहरा वार है ॥
हाय जब हर हर कदम पर, इस तरह से हार है ।
फिर न क्यो वह राह पकडूं, सुख का जो भण्डार है ॥८॥

प्रेम का मन्दिर बनाकर, ज्ञानदेव कूं दूं विठा ।
और आनन्द शान्ति के घडियाल घण्टे दूं बजा ।।
अरु पुजारी बनके दूं मैं, सबको आतम रस चखा ।
यह करूं उपदेश जग मे, कर भला होगा भला ।।६।।
आय कब वह शुभ घडी, जब वन विचरता मैं फिरूं ।
शान्ति से तब शान्ति गङ्गा का मै निर्मल जल पीऊं ।।
'ज्योति' से गुणगान की, अज्ञान सब जगका दहूं ।
होय सब जग का भला यह, बात मैं हरदम चहूं ।१०।।

श्री जिन सहस्रनाम स्तोत्रम्

स्वयम्भुवे नमस्तुभ्यमुत्पाद्यात्मानमात्मनि ।
स्वात्मन्येव तथोद्भूतवृत्तयेऽचिन्त्यवृत्तये ।। १ ।।
नमस्ते जगतां पत्ये लक्ष्मीभर्त्रे नमोस्तु ते ।
विदाम्वर नमस्तुभ्य नमस्ते वदतावर ।। २ ।।
कर्मशत्रुहन देवमामनन्ति मनीषिणः ।
त्वामानमत्सुरेन्मौलि-भा-मालाभ्यर्चितक्रमम् ।। ३ ।।
ध्यान-दुर्घण-निर्भिन्न-घन-घाति-महातरुः ।
अनन्त-भव-सन्तान-जयादासीरनन्तजित् ।। ४ ।।
त्रैलोक्यः निर्जयावाप्त-दुर्दर्पमतिदुर्जयं ।
मृत्युराजं विजित्यासीज्जन्म-मृत्युञ्जयो भवान् ।। ४ ।।
विधूताशेष-संसार-बन्धनो-भव्य-बांधवः ।
त्रिपुरारिस्त्वमेवासि जन्म-मृत्यु-जरांतकृत् ।। ६ ।।

नमस्तेऽनन्त–वीर्याय नमोऽनन्त–सुखात्मने ।
नमस्तेऽनन्त–लोकाय लोकालोकावलोकिने ।। १८ ।।
नमस्तेऽनन्त–दानाय नमस्तेऽनन्त-लब्धये ।
नमस्तेऽनन्त–भोगाय नमस्तेऽनन्तोपभोगिने ।। १९ ।।
नमः परम–योगाय नमस्तुभ्यमयोनये ।
नमः परम–पूताय नमस्ते परमर्षये ।। २० ।।
नमः परम–विद्याय नमः पर–मत–च्छिदे ।
नमः परम—तत्त्वाय नमस्ते परमात्मने ।। २१ ।।
नमः परमरूपाय नमः परमतेजसे ।
नमः परममार्गाय नमस्ते परमेष्ठिने ।। २२ ।।
परमर्द्धिजुषे धाम्ने परमज्योतिषे नमः ।
नमः पारेतमःप्राप्तधाम्ने परतरात्मने ।। २३ ।।
नमः क्षीणकलङ्काय क्षीणबन्ध नमोऽस्तुते ।
नमस्ते क्षीणमोहाय क्षीणदोषाय ते नमः ।। २४ ।।
नमः सुगतये तुभ्यं शोभनां गतिमीयुषे ।
नमस्तेऽतींद्रिय–ज्ञान–सुखायानिन्द्रियात्मने ।। २५ ।।
कायबन्धननिर्मोक्षादकायाय नमोऽस्तु ते ।
नमस्तुभ्यमयोगाय योगिनामधियोगिने ।। २६ ।।
अवेदाय नमस्तुभ्यमकषायाय ते नमः ।
नमः परमयोगीन्द्र–वन्दितांघ्रि–द्वयाय ते ।। २७ ।।
नमः परमविज्ञान नमः परमसंयमः ।
नमः परमदृग्दृष्ट—परमार्थाय ते नमः ।। २८ ।।

विश्वकर्मा जगज्ज्येष्ठो विश्वमूर्तिर्जिनेश्वरः ।
विश्वदृक् विश्वभूतेशो विश्वज्योतिरनीश्वरः ॥५॥
जिनो विष्णुरमेयात्मा विश्वरीशो जगत्पतिः ।
अनन्तजिदचिन्त्यात्मा भव्यबन्धुरबन्धनः ॥६॥
युगादिपुरुषो ब्रह्मा पञ्चब्रह्ममयः शिवः ।
परः परतरः सूक्ष्मः परमेष्ठी सनातनः । ७॥
स्वयं-ज्योतिरजोऽजन्मा ब्रह्मयोनिरयोनिजः ।
मोहारिविजयी जेता धर्मचक्री दयाध्वजः ।,८॥
प्रशान्तारिरनन्तात्मा योगी योगीश्वरार्चितः ।
ब्रह्मविद् ब्रह्मतत्वज्ञो ब्रह्मोद्याविद्यतीश्वरः ॥९॥
शुद्धो बुद्धः प्रबुद्धात्मा सिद्धार्थः सिद्धशासनः ।
सिद्धः सिद्धान्तविद् ध्येयः सिद्धसाध्यो जगद्धितः ॥ १० ॥
सहिष्णुरच्युतोऽनन्तः प्रभविष्णुर्भवोद्भवः ।
प्रभूष्णुरजरोऽजर्यो भ्राजिष्णुर्धीश्वरोऽव्ययः ॥ ११ ॥
विभावसुरसम्भूष्णुः स्वयम्भूष्णुः पुरातनः ।
परमात्मा परज्योतिस्त्रिजगत्परमेश्वरः ॥१२॥

॥ इति श्रीमदादिशतम् ॥

दिव्यभाषापतिर्दिव्यः पूतवाक्पूतशासन ।
पूतात्मा परमज्योतिर्धर्माध्यक्षो दमीश्वरः ॥१॥
श्रीपतिर्भगवानर्हन्नरजा विरजाः शुचिः ।
तीर्थकृत्केवलीशानः पूजार्हः स्नातकोऽमल ॥ २ ॥
अनन्तदीप्तिर्ज्ञानात्मा स्वयंबुद्धः प्रजापतिः ।

मुक्तः शक्तो निराबाधो निष्कलो भुवनेश्वरः ॥३॥
निरञ्जनो जगज्ज्योतिर्निरुक्तोक्तिर्निरामयः ।
अचलस्थितिरक्षोभ्यः कूटस्थः स्थाणुरक्षयः ॥४॥
अग्रणीर्ग्रामणीर्नेता प्रणेता न्यायशास्त्रकृत् ।
शास्ता धर्मपतिर्धर्म्यो धर्मात्मा धर्मतीर्थकृत् ॥५॥
वृषध्वजो वृषाधीशो वृषकेतुर्वृषायुधः ।
वृषो वृषपतिर्भर्त्ता वृषभाङ्को वृषोद्भवः ॥६॥
हिरण्यनाभिर्भूतात्मा भूतभृद्भूतभावनः ।
प्रभवो विभवो भास्वान् भवो भावो भवान्तकः ॥७॥
हिरण्यगर्भः श्रीगर्भः प्रभूतविभवोद्भवः ।
स्वयंप्रभुः प्रभूतात्मा भूतनाथो जगत्प्रभुः ॥८॥
सर्वादिः सर्वदृक् सार्वः सर्वज्ञः सर्वदर्शनः ।
सर्वात्मा सर्वलोकेशः सर्ववित्सर्वलोकजित् ॥९॥
सुगतिः सुश्रुतः सुश्रुक् सुवाक् सूरिर्बहुश्रुतः ।
विश्रुतः विश्वतः पादो विश्वशीर्षः शुचिश्रवाः ॥१०॥
सहस्रशीर्षः क्षेत्रज्ञः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
भूतभव्यभवद्भर्ता विश्वविद्यामहेश्वरः ॥११॥

॥ इति दिव्यादिशतम् ॥

स्थविष्ठः स्थविरो ज्येष्ठः पृष्ठः प्रेष्ठो वरिष्ठधीः ।
स्थेष्ठो गरिष्ठो बंहिष्ठः श्रेष्ठोऽणिष्ठो गरिष्ठगीः ॥१॥
विश्वभृद्विश्वसृट् विश्वेट् विश्वभुग्विश्वनायकः ।
विश्वाशीर्विश्वरूपात्मा विश्वजिद्विजितान्तकः ॥२॥

विभवो विभयो वीरो विशोको विरुजो जरन् ।
विरागो विरतोऽसङ्गो विविक्तो वीतमत्सरः ॥३॥
विनेयजनताबन्धुर्विलीनाशेषकल्मषः ।
वियोगो योगविद्विद्वान्विधाता सुविधिः सुधीः ॥४॥
क्षान्तिभाक्पृथिवीमूर्तिः शान्तिभाक् सलिलात्मकः ।
वायुमूर्तिरसंगात्मा वह्निमूर्तिरधर्मधक् ॥५॥
सुयज्वा यजमानात्मा सुत्वा सुत्रामपूजितः ।
ऋत्विग्यज्ञपतिर्याज्यो यज्ञांगममृत हविः ॥६॥
व्योममूर्तिरमूर्तात्मा निर्लेपो निर्मलोऽचलः ।
सोममूर्तिः सुसौम्यात्मा सूर्यमूर्तिर्महाप्रभः ॥ ७ ॥
मन्त्रविन्मन्त्रकृन्मन्त्री मन्त्रमूर्तिरनन्तगः ।
स्वतन्त्रस्तन्त्रकृत्स्वान्तः कृतान्तान्तः कृतान्तकृत् ॥८॥
कृती कृतार्थः सत्कृत्यः कृतकृत्यःकृतक्रतुः ।
नित्यो मृत्युञ्जयोऽमृत्युरमृतात्माऽमृतोद्भव ॥९॥
ब्रह्मनिष्ठः परंब्रह्म ब्रह्मात्मा ब्रह्मसंभवः ।
महाब्रह्मपतिर्ब्रह्मेट् महाब्रह्मपदेश्वरः ॥१०॥
सुप्रसन्नः प्रसन्नात्मा ज्ञानधर्मदमप्रभुः ।
प्रशमात्मा प्रशान्तात्मा पुराणपुरुषोत्तमः ॥११॥

॥ इति स्थविष्ठादिशतम् ॥

महाशोकध्वजोऽशोकः कः स्रष्टा पद्मविष्टरः ।
पद्मेशः पद्मसम्भूतिः पद्मनाभिरनुत्तरः ॥१॥
पद्मयोनिर्जगद्योनिरित्यः स्तुत्यः स्तुतीश्वरः ।

स्तवनार्हो हृषीकेशो जितजेयः कृतक्रियः ॥२॥
गणाधिपो गणज्येष्ठो गण्य पुण्यो गणाग्रणीः ।
गुणाकरो गुणाम्भोधिर्गुणज्ञो गुणनायकः ॥३॥
गुणादरो गुणोच्छेदी निर्गुणः पुण्यगीर्गुणः ।
शरण्यः पुण्यवाक्पूतो वरेण्यः पुण्यनायकः ॥४॥
अगण्यः पुण्यधीर्गुण्य. पुण्यकृत्पुण्यशासनः ।
धर्मारामो गुणग्रामः पुण्यापुण्यनिरोधकः ॥५॥
पापापेतो विपापात्मा विपाप्मा वीतकल्मषः ।
निर्द्वन्द्वो निर्मदः शान्तो निर्मोहो निरुपद्रवः ॥ ६ ॥
निर्निमेषो निराहारो निष्क्रियो निरुपप्लवः ।
निष्कलङ्को निरस्तैना निर्धूताङ्गो निराश्रवः ॥७॥
विशालो विपुलज्योतिरतुलोऽचिन्त्यवैभवः ।
सुसंवृतः सुगुप्तात्मा सुभृत् सुनयतत्त्ववित् ॥८॥
एकविद्यो महाविद्यो मुनिः परिवृढः पतिः ।
धीशो विद्यानिधिः साक्षी विनेता विहतान्तकः ॥९॥
पिता पितामहः पाता पवित्रः पावनो गतिः ।
त्राता भिषग्वरो वर्यो वरदः परमः पुमान् ॥१०॥
कविः पुराणपुरुषो वर्षीयान्वृषभः पुरुः ।
प्रतिष्ठाप्रसवो हेतुर्भुवनैकपितामहः ॥११॥

॥ इति महाशोकध्वजादिशतम् ॥

श्रीवृक्षलक्षणः श्लक्ष्णो लक्षण्यः शुभलक्षणः ।
निरक्षः पुण्डरीकाक्ष पुष्कलः पुष्करेक्षणः ॥१॥

सिद्धिदः सिद्धसंकल्पः सिद्धात्मा सिद्धिसाधनः ।
बुद्धबोध्यो महाबोधिर्वर्धमानो महर्द्धिकः ।२।
वेदाङ्गो वेदविद्वेद्यो जातरूपो विदाम्वरः ।
वेदवेद्यः स्वसवेद्यो विवेदो वदताम्वरः ।३।
अनादिनिधनोऽव्यक्तो व्यक्तवाक् व्यक्तशासन. ।
युगादिकृद्युगाधारो युगादिर्जगदादिजः ।४।
अतीन्द्रोऽतीन्द्रियो धीन्द्रो महेन्द्रोऽतीन्द्रियार्थदृक् ।
अनिन्द्रियोऽहमिन्द्राच्यो महेन्द्रमहितो महान् ।५।
उद्भवः कारण कर्त्ता पारगो भवतारकः ।
अगाह्यो गहन गुह्यं परार्घ्यः परमेश्वरः ।६।
अनन्तर्द्धिरमेयार्द्धिरचिन्त्यर्द्धिः समग्रधीः ।
प्राग्रचः प्राग्रहरोऽभ्यग्रचः प्रत्यग्रोऽग्रचोऽग्रिमोऽग्रजः ।७।
महातपाः महातेजा महोदर्को महोदयः ।
महायशा महाधामा महासत्त्वो महाधृतिः ।८।
महाधैर्यो महावीर्यो महासम्पन्महाबलः ।
महाशक्तिर्महाज्योतिर्महाभूतिर्महाद्युतिः ।९।
महामतिर्महानीतिर्महाक्षान्तिर्महोदयः ।
महाप्राज्ञो महाभागो महानन्दो महाकविः ।१०।
महामहा महाकीर्तिर्महाकांतिर्महावपुः ।
महादानी महाज्ञानी महायोगी महागुणः ।११।
महामहपतिः प्राप्तमहाकल्याणपञ्चकः ।
महाप्रभुर्महाप्रातिहार्याधीशो महेश्वरः ।१२।

।। इति श्री वृक्षादिशतम् ।।

महामुनिर्महामौनी महाध्यानी महादमः ।
महाक्षमो महाशीलो महायज्ञो महामखः ।।१।।
महाव्रतपतिर्मह्यो महाकान्तिधरोऽधिपः ।
महामैत्री मयाऽमेयो महोपायो महोमयः ।।२।।
महाकारुणिको मता महामन्त्रो महामतिः ।
महानादो महाघोषो महेज्यो महसांपतिः ।।३।।
महाध्वरधरो धुर्यो महौदार्यो महिष्ठवाक् ।
महात्मा महसांधाम महर्षिर्महितोदयः ।।४।।
महाक्लेशांकुशः शूरो महाभूतपतिर्गुरुः ।
महापराक्रमोऽनन्तो महाक्रोधरिपुर्वशी ।।५।।
महाभवाब्धिसंतारिर्महामोहाद्रिसूदनः ।
महागुणाकरः क्षान्तो महायोगीश्वरः शमी ।।६।।
महाध्यानपतिर्ध्याता महाधर्मा महाव्रतः ।
महाकर्मारिहाऽऽत्मज्ञो महादेवो महेशिता ।।७।।
सर्वक्लेशापहः साधुः सर्वदोषहरो हरः ।
असंख्येयोऽप्रमेयात्मा शमात्मा प्रशमाकरः ।।८।।
सर्वयोगीश्वरोऽचिन्त्यः श्रुतात्मा विष्टरश्रवाः ।
दातात्मा दमतीर्थेशो योगात्मा ज्ञानसर्वगः ।।९।।
प्रधानमात्मा प्रकृतिः परमः परमोदयः ।
प्रक्षीणबन्ध कामारिः क्षेमकृत्क्षेमशासनः ।।१०।।
प्रणवः प्रणयः प्राणः प्राणदः प्रणतेश्वरः ।
प्रमाणं प्रणिधिर्दक्षो दक्षिणोध्वर्युरध्वर ।।११।।

आनन्दो नन्दनो नन्दो वन्द्योऽनिन्द्योऽभिनन्दनः ।
कामहा कामदः काम्यः कामधेनुररिञ्जयः ॥१२॥
॥ इति महामुन्यादिशतम् ॥

असंस्कृतः-सुसंस्कारः प्राकृतो वैकृतांतकृत् ।
अंतकृत्कांतिगुः कांतश्चिन्तामणिरभीष्टदः ॥ १ ॥
अजितो जितकामारिरमितोऽमितशासनः ।
जितक्रोधो जितामित्रो जितक्लेशो जितांतकः ॥ २ ॥
जिनेन्द्रः परमानन्दो मुनीन्द्रो दुन्दुभिस्वनः ।
महेन्द्रवन्द्यो योगीन्द्रो यतीन्द्रो नाभिनन्दनः ॥ ३ ॥
नाभेयो नाभिजोऽजातः सुव्रतो मनुरुत्तमः ।
अभेद्योऽनत्ययोऽनाश्वानधिकोऽधिगुरुः सुधीः ॥४॥
सुमेधा विक्रमी स्वामी दुराधर्षो निरुत्सुकः ।
विशिष्टः शिष्टभुक् शिष्टः प्रत्ययः कामनोऽनघः ॥५॥
क्षेमी क्षेमंकरोऽक्षय्यः क्षेमधर्मपतिः क्षमी ।
अग्राह्यो ज्ञाननिग्राह्यो ध्यानगम्यो निरुत्तरः ॥६॥
सुकृती धातुरिज्यार्हः सुनयश्चतुराननः ।
श्रीनिवासश्चतुर्वक्त्रश्चतुरास्यश्चतुर्मुखः ॥७॥
सत्यात्मा सत्यविज्ञानः सत्यवाक्सत्यशासनः ।
सत्याशीः सत्यसंधानः सत्यः सत्यपरायणः ॥८॥
स्थेयान् स्थवीयान् नेदीयान् दवीयान् दूरदर्शनः ।
अणोरणीयाननणुर्गुरुराद्यो गरीयसाम् ॥९॥
सदायोगः सदाभोगः सदातृप्तः सदाशिवः ।

अध्यात्मगम्यो गम्यात्मा योगविद्योगिवन्दितः ।
सर्वत्रगः सदाभावी त्रिकालविषयार्थदृक् ॥१०॥
शङ्करः शंवदो दान्तो दमी क्षान्तिपरायणः ।
अधिपः परमानन्दः परात्मज्ञः परात्परः ॥११॥
त्रिजगद्वल्लभोऽभ्यर्च्यस्त्रिजगन्मङ्गलोदयः ।
त्रिजगत्पतिपूज्याङ्घ्रिस्त्रिलोकाग्र-शिखामणिः ॥१२॥
॥ इति बृहदादिशतम् ॥
त्रिकालदर्शी लोकेशो लोकधाता दृढव्रतः ।
सर्वलोकातिगः पूज्य सर्वलोकैकसारथिः ॥१॥
पुराणः पुरुषः पूर्वः कृतपूर्वाङ्गविस्तरः ।
आदिदेवः पुराणाद्यः पुरुदेवोऽधिदेवता ॥२॥
युगमुखो युगज्येष्ठो युगादिस्थितिदेशकः ।
कल्याणवर्णः कल्याणः कल्यः कल्याणलक्षणः ॥ ३ ॥
कल्याणप्रकृतिर्दीप्तकल्याणात्मा विकल्मषः ।
विकलङ्कः कलातीतः कलिलघ्नः कलाधरः ॥४॥
देवदेवो जगन्नाथो जगद्बन्धुर्जगद्विभुः ।
जगद्धितैषी लोकज्ञः सर्वगो जगदग्रगः ॥५॥
चराचर-गुरुर्गोप्यो गूढात्मा गूढगोचरः ।
सद्योजातः प्रकाशात्मा ज्वलज्ज्वलनसप्रभः ॥६॥
आदित्यवर्णो भर्माभः सुप्रभः कनकप्रभः ।
सुवर्णवर्णो रुक्माभः सूर्यकोटिसमप्रभः ॥७॥
तपनीयनिभस्तुङ्गो बालार्काभोऽनलप्रभः ।

मूलकर्ताऽखिलज्योतिर्मलघ्नो मूलकारणम् ।
आप्तो वागीश्वरः श्रेयाञ्छ्रायसोक्तिनिरुक्तवाक् ॥६॥
प्रवक्ता वचसामीशो मारजिद्विश्वभाववित् ।
सुतनुस्तनुनिर्मुक्तः सुगतो हतदुर्नयः ॥७॥
श्रीशः श्रीश्रितपादाब्जो वीतभीरभयङ्करः ।
उत्सन्नदोषो निर्विघ्नो निश्चलो लोकवत्सलः ॥८॥
लोकोत्तरो लोकपतिर्लोकचक्षुरपारधीः ।
धीरधीर्बुद्धसन्मार्गः शुद्धः सूनृतपूतवाक् ॥९॥
प्रज्ञापारमितः प्राज्ञो यतिर्नियमितेन्द्रियः ।
भदन्तो भद्रकृद्भद्रः कल्पवृक्षो वरप्रदः ॥१०॥
समुन्मूलितकर्मारि कर्मकाष्ठाशुशुक्षणिः ।
कर्मण्यः कर्मठः प्रांशुर्हेयादेयविचक्षणः ॥११॥
अनन्तशक्तिरच्छेद्यस्त्रिपुरारिस्त्रिलोचनः ।
त्रिनेत्रस्त्र्यम्बकस्त्र्यक्षः केवलज्ञानवीक्षणः ॥१२॥
समन्तभद्रः शान्तारिर्धर्माचार्यो दयानिधिः ।
सूक्ष्मदर्शी जितानङ्गः कृपालुर्धर्मदेशकः ॥१३॥
शुभंयुः सुखसाद्भूतः पुण्यराशिरनामयः ।
धर्मपालो जगत्पालो धर्मसाम्राज्यनायकः ॥१४॥
॥ इति दिग्वासाद्यष्टोत्तरशतम् इत्यष्टाधिकसहस्रनामावली समाप्त ॥
धाम्नां पते तवामूनि नामान्यागमकोविदैः ।
समुच्चितान्यनुध्यायन्पुमान्पूतस्मृतिर्भवेत् ॥१॥
गोचरोऽपि गिरामासां त्वमवाग्गोचरो मतः ।

स्तोता तथाप्यमदिग्ध त्वत्तोऽभीष्टफलं भजेत् ।। २ ।।
त्वमतोऽसि जगद्बन्धुस्त्वमतोऽसि जगद्भिषक् ।
त्वमतोऽसि जगद्धाता त्वमतोऽसि जगद्धितः ।। ३ ।।
त्वमेक जगता ज्योतिस्त्व द्विरूपोपयोगभाक् ।
त्वं त्रिरूपैकमुक्त्यग' स्वोत्थानन्तचतुष्टयः ।। ४ ।।
त्व पञ्चब्रह्मतत्त्वात्मा पञ्चकल्याणनायकः ।
षट्भेदभावतत्त्वज्ञस्त्व सप्तनयसग्रहः ।। ५ ।।
दिव्याष्टगुणमूर्तिस्त्व नवकेवललब्धिकः ।
दशावतर निर्धार्यो मा पाहि परमेश्वर ।। ६ ।।
युष्मन्नामावली–दृब्धविलसत्स्तोत्रमालया ।
भवन्त परिवस्याम' प्रमोदानुगृहाण नः ।। ७ ।।
इद स्तोत्रमनुस्मृत्य पूतो भवति भाक्तिकः ।
य. सपाठ पठत्येन स स्यात्कल्याण–भाजनम् ।। ८ ।।
तत' सदेद पुण्यार्थी पुमान् पठति पुण्यधीः ।
पौरुहूतीं श्रिय प्राप्तुं परमामभिलाषकः ।। ९ ।।
स्तुत्वेति मघवा देव चराचर जगद्गुरुम् ।
तस्तीर्थविहारस्य व्यधात्प्रस्तावनामिमाम् ।।१०।
स्तुति पुण्यगुणोत्कीर्तिः स्तोता भव्य प्रसन्नधीः ।
निष्ठितार्थो भवास्तुत्यः फल नैश्रेयस सुखम् ।। ११ ।।
यः स्तुत्यो जगता त्रयस्य न पुनः स्तोता स्वय कस्यचित् ।
ध्येयो योगिजनस्य यश्च नितरा ध्याता स्वय कस्यचित् ।।१२।
यो नेतॄन् नयते नमस्कृतिमल नन्तव्यपक्षेक्षणः ।

स श्रीमान् जगतां श्रयस्य च गुरुर्देवः पुरः पावनः ।। १३ ।।
त देव त्रिदशाधिपार्चितपद घातिक्षयानन्तर—
प्रोत्थानन्तचतुष्टयं जिनमिनं भव्याब्जिनीनामिनम् ।। १४ ।।
मानस्तम्भविलोकनानतजगन्मान्यं त्रिलोकीपति ।
प्राप्ताचिन्त्यबहिर्विभूतिमनघ भक्त्या प्रवन्दामहे ।। १५ ।।
।।इति भगवज्जिनसेनाचार्यं विरचितादिपुराणान्तर्गत जिनमङ्गलनाम्।।

अथ पखवाड़ा

बानी एक नमो सदा, एक दरब आकाश ।
एक धर्म अधर्म दरब, पडवा शुद्ध प्रकाश ।।
दोज दुभेद सिद्ध संसार, संसारी त्रस थावर धार ।
स्व-पर दया दोनों मन धरो, राग द्वेष तजि समता धरो ।।
तीज त्रिपात्र दान नित भजो, तीन काल सामायिक सजो ।
व्यय उत्पाद ध्रौव्य पद साध, मन-वच-तन थिर होय समाध।।
चौथ चार विधि दान विचार, चारों आराधन संभार ।
मैत्री आदि भावना चार, चार बन्धसो भिन्न निहार ।।
पांच पञ्च लब्धि लहि जीव, भज परमेष्ठी पञ्च सदीव ।
पांच भेद स्वाध्याय बखान, पांचो पैतारे पहचान ।।
छठ छः लेश्या के परनाम, पूजा आदि करो षट्काम ।
पुद्गल मे जानो षट् भेद, छहों काल लखिके सुख वेद ।।
सातें सात नरक से डरो, सात खेत धन जलसो भरो ।
सातैं नय समझी गुणवन्त, सात तत्व सरधाकरि सन्त ।।
आठें आठ दरस के अंग, ज्ञान आठ विध सही अभंग ।

आठ भेद पूजा जिनराय, आठ योग कीजे मन लाय ॥
नौमी शील बाडि नव पाल, प्रायश्चित नौ भेद संभाल ।
नौ क्षायिक गुण मनमें राख नौ कषायकी तजि अभिलाख ॥
दशमी दश पुद्गल परजाय, दश बन्धो हर चेतन राय ।
जनमत दश अतिशय जिनराज,दशविधि परिग्रहसों क्या काज।
ग्यारस ग्यारह भाव समाज, सब अहमिन्द्र ग्यारह राज ।
ग्यारह जोग सुरलोक मझार, ग्यारह अंग पढे मुनिसार ॥
बारस बारह विधि उपयोग, बारह प्रकृति दोष को रोग ।
बारह चक्रवर्ति लखि लेहु बारहअव्रत को तज देहु ॥
तेरसि तेरह श्रावक थान, तेरह भेद मनुज पहचान ।
तेरह राग प्रकृति सब निन्द, तेरह भाव अयोग जिनन्द ॥
चौदस चौदह पूरव जान, चौदह बाहिज अग बखान ।
चौदह अन्तर परिग्रह डार, चौदह जीव समास विचार ॥
मावस सम पन्दरह परमाद, करम भूमि पन्द्रह अनाद ।
पञ्च शरीर पन्द्रह रूप, पन्द्रह प्रकृति हरे मुनि भूप ॥
सोलह कषाय राह घटाय, सोलह कला सम भावन भाय ।
पूरनमासी सोलै ध्यान, सोलै स्वर्ग कहे भगवान ॥
सब चर्चा की चर्चा एक, आतम पर पुद्गल पर टेक ।
लाख कोटि ग्रन्थन को सार, भेद ज्ञान अरु दया विचार ॥
दोहा—गुण विलास सब तिथि कही, है परमारथ रूप ।
पढे गुने जो मन धरे, उपजे ज्ञान अनूप ॥ इति ॥

विषापहार भाषा

दोहा—नमो नाभिनन्दन बली, तत्त्व प्रकाशनहार ।
तुर्यकालकी आदि मे, भये प्रथम अवतार ॥

॥ काव्य या रोला छन्द ॥

निज आतम मे लीन ज्ञान करि व्यापत सारे ।
जानत सब व्यापार सग नहि कछु तिहारे ॥
बहुत काल के हो पुनि जरा न देह तिहारी ।
ऐसे पुरुष पुरान करहु रक्षा जु हमारी ॥ १ ॥
परकरिकै जु अचिन्त्य भार जुगको अति भारो ।
सो एकाकी भयो वृषभ कीनो निसतारो ॥
करि न सकै जोगीन्द्र स्तवन मै करिहौं ताको ।
भानु प्रकाश न करै दीप तम हरै गुफा को ॥ २ ॥
स्तवन करन को गर्व तज्यो शक्रो बहु ज्ञानी ।
मैं नहि तजौं कदापि स्वल्प, ज्ञानी शुभध्यानी ॥
अधिक अर्थको कहूँ यथाविधि बैठि झरोखै ।
जालान्तर धरि अक्ष भूमिधरकौं जु विलोकै ॥
सकल जगत को देखत अर सबके तुम ज्ञायक ।
तुमको देखत नाहि नाहि जानत सुखदायक ॥
हो किसाक तुम नाथ और कितनाक बखाने ।
तातैं थुति नहि बनै अशक्ती भये सयाने ॥४॥
बालकवत निज दोष थकी इहलोक दुखी अति ।
रोग-रहित तुम कियो कृपा करि देव भुवनपति ।

हित–अनहित की समझ माहि ह मन्दमती हम ।।
सब प्राणिन के हेत नाथ तुम बालवैद सम ।। ५ ।।
दाता हरता नाहि भानु सबको बहकावत ।
आज कान्ह के छलकरि नितप्रति दिवस गुमावत ।।
हे अच्युत जो भक्त नमें तुम चरन–कमल को ।
छिनक एकमे आप देत मनवाछित फल को ।।६।।
तुमसो सन्मुख रहे भक्तिसों सो सुख पावें ।
जो सुभावतें विमुख आपतें दुखहि बढावें ।।
सदा नाथ अवदात एक द्युति रूप गुसाई ।
इन दोनो के हेत स्वच्छ दर्पणवत झाई ।।७।।
है अगाध जलनिधि समुद–जल है जितनो ही ।
मेरु तु ग सुभाव शिखरलों उच्च भन्यो ही ।।
वसुधा अर सुरलोक एहु इस भाति सई है ।
तेरी प्रभुता देव भुवनिकूं लंघि गई हैं ।।८।।
है अनवस्था धर्म परम सो तत्त्व तुम्हारे ।
कह्यो न आवागमन प्रभू मत माहि तिहारे ।।
दृष्ट पदारथ छाडि आप इच्छति अदृष्टकों ।
विरुध वृत्ति तव नाथ समजस होय सृष्टको ।।९।।
कामदेव को किया भस्म जग-त्राता थे ही ।
लीनी भस्म लपेटि नाम सभू निज देही ।।
सूतो होय अचेत विष्णु वनिता करि हारचो ।
तुमको काम न कहै आप घट सदा उजारचो ।।१०।।

पापवान वा पुण्यवान सो देव बतावै ।
तिनके औगुन कहै नाहि तू गुणी कहावै ।।
निज सुभावतै अम्बु–राशि निज महिमा पावै ।
स्तोक सरोवर कहे कहा उपमा बढि जावै ।।११।।
कर्मन की थिति जन्तु अनेक करै दुखकारी ।
सो थिति बहु परकार करै जीवन की ख्वारी ।
भव–समुद्र के माहि देव दोनो के साखी ।
नाविक नाव समान आप वाणी मे भाखी ।।१२।।
सुखको तो दुख कहे गुणनकूं दोष विचारै ।
धर्म करनके हेत पाप हिरदै विच धारै ।।
तेल निकासन काज धूलिको पेलै घानी ।
तेरे मतसों बाह्य इसे जे जीव अज्ञानी ।।१३।।
विष मोचै ततकाल रोगकों हरै ततच्छन ।
मणि औषध रसाण मत्र जो होय सुलच्छन ।।
ये सब तेरे नाम सुबुद्धी यो मन धरिहैं ।
भ्रमत अपरजन वृथा नहीं तुम सुमिरन करिहैं ।।१४।।
किंचित् भी चित माहि आप कछु करो न स्वामी ।
जे राखै चित माहि आपको शुभ-परिणामी ।।
हस्तामलवत लखै जगत की परिणति जेती ।
तेरे चितकै बाह्य तोउ जीवै सुख सेती ।।१५।।
तीन लोक तिरकाल माहि तुम जानत सारी ।
स्वामी इनकी संख्या थी तितनीहि निहारी ।

जो लोकादिक हुते अनन्ते साहिब मेरा ।
तेऽपि झलकते चानि ज्ञानका ओर न तेरा ॥१६॥
है अगम्य तव रूप करै सुरपति प्रभु सेवा ।
ना कछु तुम उपकार हेत देवन के देवा ॥
भक्ति तिहारी नाथ इन्द्र के तोषित मनको ।
ज्यों रवि सन्मुख छत्र करै छाया निज तनको ॥१७॥
वीतरागता कहां-कहां उपदेश सुखाकर ।
सो इच्छा-प्रतिकूल वचन किम होय जिनेसर ॥
प्रतिकूली भी वचन जगतकूं प्यारे अति ही ।
हम कुछ जानी नाहिं तिहारी सत्यासति ही ॥ १८ ॥
उच्च प्रकृति तुम नाथ संग किंचित् न धरनतैं ।
जो प्रापति तुम थकी नाहिं सो धने सुरनतैं ॥
उच्च प्रकृति जल विना भूमिधर धुनी प्रकासै ।
जलधि नीरतैं भरयो नदी ना एक निकासै ॥१९॥
तीन लोक के जीव करो जिनवर की सेवा ।
नियम थकी कर दण्ड धरयो देवन के देवा ॥
प्रातिहार्य तौ बनै इन्द्र के बनै न तेरे ।
अथवा तेरे बनै तिहारे निमित्त परेरे ॥२०॥
तेरे सेवक नाहिं इसे जे पुरुष हीन धन ।
धनवानों की ओर लखत वे नाहिं लखत पन ॥
जैसे तम-थिति किये लखत परकास-थितीकूं ।
तैसैं सूझत नाहिं तम-थिती मन्दमतीकूं ॥२१॥

निज वृष स्वामोसास प्रगट लोचन टमकारा ।
तिनकों वेदन नाहि लोकजन मूढ विचारा ।।
सकल ज्ञेय ज्ञायक जु अमूरति ज्ञान सुलच्छन ।
सो किमि जान्यो जाय देव तव रूप विचच्छन ।।२१।।
नाभिराय के पुत्र पिता प्रभु भरत-तनै है ।
कुल-प्रकाशिकै नाथ तिहारो स्तवन भनै हैं ।।
ते लघु धी असमान गुननको नाहि भजै हैं ।
सुवरन आयो हाथि जानि पाषान तजै हैं ।।२३।।
सुरासुरनको जीति मोहने ढोल बजाया ।
तीन लोक मे किये सकल वशि यो गरभाया ।।
तुम अनन्त बलवन्त नाहि ढिग आवन पाया ।
करि विरोध तुम थकी मूलतै नाश कराया ।। २४ ।।
एक मुक्तिका मार्ग देव तुमने परकास्या ।
गहन चतुरगति मार्ग अन्य देवनकूं भास्या ।।
'हम सब देखनहार' इसी विधि भाव सुमिरिकै ।
भुज न विलोको नाथ कदाचित् गर्भ जु धरिकै ।।२५।।
केतु विपक्षी अर्कतनो फुनि अग्नितनो जल ।
अम्बुनिधी अरि प्रलय कालको पवन महाबल ।।
जगत माहि जे भोग वियोग विपक्षो हैं निति ।
तेरो उदयो है विपक्षतें रहित जगतपति ।।२६।।
जाने बिन हू नवत आपको जो फल पावै ।
नमत अन्यको देव जानि सो हाथ न आवै ।।

हरी मणीकूं काच, काचकू मणी रटत है ।
ताकी बुधि मे भूल, मूल्य मणिको न घटत है ॥२७॥
जे विवहारी जीव वचन मे कुशल सयाने ।
ते कषाय करि दग्ध नरनको देव बखाने ॥
ज्यौं दीपक बुझि जाय ताहि कह 'नन्दि' भयो है ।
भग्न घडेको कलस कहैं ये मंगलि गयो है ॥२८॥
स्यादवाद सजुक्त अर्थको प्रगट बखानत ।
हितकारी तुम वचन श्रवणकरि को नहि जानत ।
दोषरहित ये देव शिरोमणि वक्ता जगगुरु ।
जो ज्वरसेती मुक्त भयो सो कहत गरल सुर ॥२९॥
बिन बांछा ये वचन आपके खिरं कदाचित् ।
है नियोग ये कोपि जगतको करत सहज हित ॥
करै न बांछा इसी चन्द्रमा पूरो जल-निधि ।
सीत-रश्मिकू पाय उदधि जल बढै स्वयसिधि ॥३०॥
तेरे गुण गम्भीर परम पावन जग माई ।
बहु प्रकार प्रभु हैं अनन्त कछु पार न पाई ॥
तिन गुणान को अन्त एक याही विधि दीसै ।
ते गुण तुझ ही माहि औरमे नाहि जगीसै ॥३१॥
केवल थुति ही नाहि भक्ति पूर्वक हम ध्यावत ।
सुमरन प्रणमन तथा भजनकर तुम गुण गावत ॥
चितवन पूजन ध्यान नमस्कारि नित आराधै ।
को उपायकरि देव सिद्धि-फलको हम साधै ॥३२॥

त्रैलोकी नरनारिदेव नित ज्ञानप्रकाशो ।
परमज्योति परमातमशक्ति अनन्ती भासी ।।
पुण्य-पापतें रहित पुण्य के कारण स्वामी ।
नमों नमों जगवन्द्य अवन्दक नाथ अकामी ।।३३।।
रस-सपरस अर गन्ध रूप नहिं शब्द तिहारे ।
इनके विषय विचित्र भेद सब जाननहारे ।।
सब जीवन प्रतिपाल अन्यकरि हैं अगम्य गन ।
सुमरन गोचर नाहिं करों जिन तेरो सुमिरन ।।३४।।
तुम अगाध जिनदेव चित्त के गोचर नाहीं ।
निःकिंचन भी प्रभू धनेश्वर जाचत सोई ।।
भये विश्व के पार दृष्टिसों पार न पावें ।
जिनपति एम निहारि सन्तजन शरनै आवें ।।३५।।
नमों नमों जिनदेव जगतगुरु शिक्षादायक ।
निज गुणसेती भई उन्नति महिमा लायक ।।
पाहन-खण्ड पहार पड़ें ज्यों होत और गिर ।
त्यों कुल पर्वत नाहिं सनातन दीर्घ भूमिपर ।।३६।।
स्वयं प्रकाशी देव रैन-दिनसूं नहिं बाधित ।
दिवस रात्रि भी छतें आपकी प्रभा प्रकाशित ।।
लाघव गौरव नाहिं एकसो रूप तिहारो ।
काल-कलातें रहित प्रभूसूं नमन हमारो ।।३७।।
इह विधि बहु परकार देव तव भक्ति करी हम ।
जाचूं वर न कदापि दीन है राग-रहित तुम ।।

छाया बैठत सहज वृक्ष के नीचे ह्वै है ।
फिर छाया को जाचत यामे प्रापति ह्वै है ॥३८॥
जो कुछ इच्छा होय देनकी तौ उपकारी ।
द्यो बुधि ऐसो करूं प्रीति सों भक्ति तिहारी ॥
करो कृपा जिनदेव हमारे परि ह्वै तोषित ।
सनमुख अपनो जानि कौन पण्डित नहि पोषित ॥
यथा कथंचित भक्ति रचै विनयी जन केई ।
तिनकूं श्री जिनदेव मनोवांछित फल देई ॥
फुनि विशेष जो नमत सन्तजन तुमको ध्यावै ।
सो सुख जस 'धन-जय' प्रापति ह्वै शिवपद पावै ॥४०॥
श्रावक माणिकचन्द सुबुद्धी अर्थ बताया ।
सो कवि 'शांतिदास' सुगम करि छन्द बनाया ॥
फिरि-फिरिकै ऋषि रूपचन्द ने करी प्रेरणा ।
भाषास्तोत्र विषापहार को पढो भविजना ॥४१॥

॥ इति विषापहार स्तोत्र (हिन्दी) समाप्त ॥

तत्त्वार्थसूत्र भाषा

(श्री लाला छोटेलालजी कृत)

छप्पय — तीनकाल षट्द्रव्य पदारथ नव सरधानो ।
जीवकाय षट जान लेश्या षट ही मानो ॥
अस्तिकाय हैं पांच और व्रत समिति गुपत हैं ।
ज्ञान और चारित्र इसे श्रुत मोक्ष कहत हैं ॥

तीन भुवनमें महत पुनि, अरहन्त ईश्वर जानियो ।
ये प्रशस्त पुनि मान्य हैं शुद्धदृष्टि पहिचानियो ।।१।।

छन्द विजया

मोक्ष को राह बतावत जे अरु, कर्म्म पहाड करें चकचूरा ।
विश्व सुतत्वके ज्ञायक हैं ताहि लब्धिके हेत नमो परपूरा ।।
१. सम्यक्‌दर्शन ज्ञानचरित्र कहे एही मारग मोक्षके सूरा ।
२. तत्वके अर्थ करो सरधान सु सम्यग्दरशन नाम जहूरा ।२।
३. होत स्वभाव निसर्गज सम्यक् गुरुउपदेश सु अधिगम ताई
४. जीव अजीव रु आस्रव बंध सु संवर निर्जर मोक्ष बताई।
जेई हैं तत्व सुतत्व भले इनकी सख्या श्रुत सात कहाई ।।
५. नामस्थापन द्रव्य सुभावतें तत्व सु संभवता सु लहाई।३।
६. नय परिमाण के भेद सुजानन औरहु कारण जान सुजानो
७.निरदेश स्वामित साधन जान अधार रु इस्थिति भेद विधानो
८.सत संख्या छिति परसन काल रु अन्तर भाव अल्प बहु मानो
९.मति श्रुति अवधिज्ञान मनपरजय केवलज्ञान सुपांच बखानो४
१०.एही प्रमाण कहे श्रुतमे ११.पहिले दो ज्ञान परोक्ष बताए ।
१२.शेष प्रतक्ष सु तीन रहे १३.मतिज्ञानके नाम सु पांच जताए
सुमरन संज्ञा विचार लखो भिनिबोध सु चिन्तन भेद कहो है ।
१४.ता मतिज्ञानको कारण जान सु इन्द्री मन सबसंग लहो है।५।

।। छन्द मदरावरन ।।

१५.प्रथम देखना फिर विचारना बहुरि परखना चितधरना ।
१६.बहु बहुविधि छिप्रा अरु अनिसृत अरु अनुक्त निश्चल बरना

षट इनके प्रतिपक्षी लेकर यों बारह चितमें धरना ।
अवग्रहादि चारो से गुणकर फिर मनइन्द्री से गुणना ।।६।।

सवैय्या

१७.इह विध अर्थ अवग्रहके भेद भये सब दोसैं अठासी बखानो।
१८.मन अरु चक्षुको छोड़ गुनो अड़तालिस भेद सु व्यंजन जानो
१६.यो सब तीनसैछत्तिस भेद भये मतिज्ञानके चित्तमे आनो ।
२०.पूर्व कहो श्रुतज्ञान सु ताके भेद अनेक हु बारह मानो ।७।
२१.नारकि देवको होत भवो२२क्षय उपशम कर्मरु कारण जानो।
शेषन के षट भांति सु ज्ञात कहो सु अवधिबल ज्ञान बखानो।
२३ ऋजुमति और विपुल मनपर्यय भेद कहे दो बेद कहानो ।।
२४ अप्रतिपाति विशुद्धके कारण इन दोनो मे विशेषता जानो८

दोहा–२५, विशुद्ध क्षेत्र स्वामी विषय, चारो कारण लेख ।
मनपर्जय अरु अवधि के जानो भेद विशेष ।।६।।

२६. मति श्रुति जानत नेम है द्रव्यन विषें सु जान ।
थोडी पर्जायें लखें, द्रव्यन की पहिचान ।।१०।।

२७. रूपी पुद्गल जान अरु पुद्गल रूपी जीव ।
थोडी पर्जाओं सहित जाने अवधि सदीव ।। ११ ।।

सूक्ष्म रूपी वस्तु जो अवधि लखाई देत ।
२८. तासु अनन्ते भागको मनपर्जय लखि लेत ।। १२ ।।

२६. सर्व द्रव्य पर्जायको केवल विषय विख्यात ।
३०. मतिज्ञान से चार लौं जुगपत जीव लहात ।।१३।।

३१. मतिश्रुतिज्ञान रु अवधि के तीन विपर्जय ज्ञान ।

कुमति कुश्रुति कुअवधि लखि क्रम-क्रम ही पहिचान ।१४

३२. सत असत्य निर्णय बिना इच्छाकर उनमत्त ।

ग्रहण करै जो ज्ञान को सोई विषय अनित्त ।।१५।।

३३. सात भेद नयके कहे नैगम संग्रह जान ।

तीजो नय व्यवहार है द्रव्यार्थिक त्रय मान ।।१६।।

चौथी नय ऋजुसूत्र है शब्द पांचमी वीर ।

समभिरूढ एवंभूत नय छटी सातमी धीर ।।१७।।

पर्जय अर्थिक चार नय पिछिली कही सु जान ।

प्रथम तीन नय जो कही सो द्रव्यार्थिक जान ।।१८।।

ज्ञान रु दर्शन तत्त्व नय लक्षण भेद प्रमाण ।

इन सबको बरणन कियो पहिलो अध्या जान ।।१९।।

। इति प्रथमोध्याय ।।

छन्द विजया

१. उपशम क्षायिक मिश्र सुभावसु जीवको भाव स्वरूप बखानो।
उदयिक अरु परिनामिक जानसु नीचे लिखे प्रति भेदसु जानो ।।

२. दो विधि उपशम क्षायिक नौ विध मिश्र अठारह भेद बताए।
उदयिक भाव लखो इकबोस परिनामिक त्रय भेद सु गाए ।।१।।

३. उपशम सम्यकचारित दो अरु ४ दर्शन ज्ञान रु दान बखानो।
लाभ भोग उपभोग लखौ इम वीर्यको योग करौं नौ जानो ।।

५. ज्ञानसु चार अज्ञानहु तीनरु दर्शन तीन रु लब्धिके पांचौं ।
संयमासंयम चारित सम्यक् तीन मिलाय अठारह हु सांचौं ।।२

६. चारि कषाय कही गति चारि रु लिंगसु तीन सयोग करो है।

लेश्या छै परकार लिये अज्ञान असजित चित्त धरो है ।
मिथ्यादर्शन और असिद्ध भये इकबीस स्वभाव गिनो है ।।
७. जीवसु भव्य अभव्य लखौ परिनामिक तीन प्रकार भनो है।७
८.ता परिणामिक लक्षण जान कहो उपयोग सु ६ दोय प्रकारा
ज्ञानुपयोग है आठ प्रकार रु दर्शन भेदसु चार निहारा ।।
१०.जीवनि भेदसु दोय लखौ ससारी सिद्ध कहो निरधारा ।
११.मनकर सहित रहित१२त्रस थावरयो दो भेदसु सूत्र मझारा४
१३.पृथ्वी जल अरु तेज सुजानो वायु वनस्पति थावर सारा ।
१४. पुनि दो इन्द्री आदि लखौ त्रस संज्ञक रूपसु वेद निहारा ।
द्रव्य अरु भाव मिलाय गिनो १५पचइन्द्रीके भेदसु१६दोयबखानो
१७इन्द्रीकार निर्वृत्त गिनो उपकर्णको चिह्न प्रघत्य लखानो।५।
१८जिनकर देखन जानन होय सु इन्द्री भावको भाव जतानो ।
१९नाक रु नेत्र सु कान कहे अरु जीभ स्पर्श सु इन्द्री जानो ।।
२० गंध रु वर्ण सु शब्द कहे रस जान स्पर्शन पाच विषय हैं।
२१मनकि समर्थसो शब्द सुजानत२२थावर पांच इकेंद्री निचय है
दोहा–२३. कृमि पिपोलिका भ्रमर अरु मनुष आदि जे जीव।
एक एक इन्द्री अधिक धारत ज्ञान सदीव ।।७।।
२४. संज्ञी जीव सु जानिये मन कर सहित सु जान ।
२५. विग्रह गतिके भेदको वर्णन करौ बखान ।। ८ ।।
गतितें गत्यांतर गमन कर्मयोग तें जान ।
२६. विग्रह विन सूधो गमन जीव अणू पहिचान ।।९।।
सूधो गमन स्वभाव है, टेढो गमन विभाग ।

कर्मयोगतें होत सो, २७ विधिविन सरल स्वभाव ।१०।
२८. संसारी जीवन कहो, विग्रह गति निरधार ।
चार समय पहिले गिनो,२६ एक अविग्र निहार ।११।
३०. समय एक दो तीन लों, रहै जीव बिन हार ।
नाम अनाहारक कहो, भाषी सूत्र मझार ।।१२।
३१. सन्मूर्छन गर्भज कहे, उपपादक हू जान ।
ऐसे जन्म सु थान लख, तीनो भेद प्रमान ।। १३ ।।
३२. चौरासीलख योनि यो, सचित शीत अरु उष्न ।
सवृत सेतर मिश्र जे, गुनी परस्पर प्रश्न ।। १४ ।।
३३. जर अंडज पोतज कहे, गर्भ जन्म के थान ।
३४. देव नारकी दोय उपपादक जन्म बखान ।। १५ ।।
३५. शेष जीव संज्ञा कही, सो सन्मूर्छन जान ।
पांच भेद वपु जानियो, ताको करों बखान ।। १६ ।।
३६. औदारिक वैक्रियक पुनि, आहारक हू जान ।
कारमान तैजस सहित, पाँच शरीर बखान ।। १७ ।।
३७. पर परके सूक्षम लखो, अनुक्रम उक्त बखान ।
३८. गुण असंख्य परदेश हैं. तैजस पहिले जान ।। १८ ।।

।। छन्द विजया

३९. अतके दोय अनन्त गुणे नहीं४०. घात किसी परकार सुजानो
४१. जीव सबध अनादि कहो४२सब जीवन माहिं लखो अनमानो
४३. एक समय इक जीवके चार शरीर सु होतसु सूत्र बखानो ।
४४. भोगके योग कहो नहिं अतिम सूत्रमे या विधि रूप दिखानो।

४५. सम्मूर्छन गर्भज जीवनको औदारिक आदि शरीर बतायो।
४६. लब्धिके धारी मुनीजनपै ४७ उपपादके वैक्रियिक होय कहायो
४८. तैजस भी तिनही मुनिके ४९ आहारक शुद्ध सु निर्मल पायो।
काहूका घातो जाय नहीं गुणथान छटे मुनिराजकै गायो।२०।
५०. नारकी और सम्मूर्छन जीव मुजानो नपुंसक वेद कहे।
५१. देवन के यह वेद नहीं ५२. बाकी सब जीव त्रिवेद कहे ॥
५३. उपपादिक चर्मशरीरी की अरु उत्तम संहननधारी की।
असंख्यातवर्षवालिनकी कहि नाहि बीचमें आयु छिदै इनकी२१

दोहा—तत्त्वारथ यह सूत्र है, मारग मोक्ष प्रकाश।
यह प्रकार पूरण भयो, दूजो अध्या तासु ॥ २२ ॥

॥ इति द्वितीयोऽध्यायः ॥

दोहा—१. रत्न शरकरा बालुका, पंक धूम तम जान।
तमा महातम सप्तमी, प्रभा नर्क दुखखान ॥ १ ॥
घन अम्बु आकाश त्रय, बात विले लिपटान।
सप्त नर्क पृथिवी तनो, नीचे नीचे जान ॥ २ ॥

छन्द नराचरज

२. जिन नर्कों में बिले कहे हैं तिनकी संख्या सुनो सुजान।
प्रथम नर्क में तीस लाख बिल दूजे लाख पचीस बखान ॥
तीजे पंद्रह लाख गिनो बिल दश लख चौथे में परमान।
नर्क पाँचवें तीन लाख हैं छटे पांच घट लाख सुमान।३

दोहा—नरक सातवें पांच हैं, सब चौरासी लाख।
या विध सातों नर्क के, संख्या बिलकी भाष ॥१॥

सोरठा—३. लेश्या अरु परिणाम, देह वेदना विक्रिया।
महा अशुभ दुखधाम, धरें नारकी नित क्रिया ।।५।।
४. देत परस्पर दुक्ख, पावैं घोर जु वेदना ।
५. असुर कुमारन कृत्य,जानो तीजे नर्कलो ।। ६ ।।

छन्द विजया

६. नारकि आयु प्रमान सुनो इक सागर प्रथम दूसरे तीना ।
तीजे सात समद दश चौथे पांचवें सत्रह सागर दीना ।।
बाइस तेतीस सागर जान छटवें अरु सातवें नर्क सुथाना ।
७. जम्बू आदिक द्वीप गिनो लवनोदधि आदि समुद्र वखाना७
८. द्वीपतै दूने समुद्र कहे अरु आगेके द्वीप समुद्र तै दूने ।
याही भाँति भिडे हैं परस्पर आकृति गोल सु सुन्दर चीने ।।
९. सब तिनके मध्यसु जम्बूद्वीप सुमेरुसु नाभिसु सूत्र बतायो ।
योजन लाख चौंडाई कही या भांति श्रीगुरुने दरशायो ।।८।।
दोहा—१०. भरत हेमवत हरि तथा, चौथा क्षेत्र विदेह ।
रम्यक ऐरावत हिरन, सात क्षेत्र लख एह ।।९।।

छन्द विजया

११हिमवन महाहिमवान निषध्या नीलसु रुक्मि शिखिरनी जानो
पूरब पच्छिम लम्बे कहे पुनि क्षेत्र विभागको कारण मानो ।।
१२. सुवरन रूपो तायो सुवरन मनो वैडूर्य सु रङ्ग कहो है ।
रूपो सोनो सु रंग लखो क्रम जान कुलाचल वर्ण लहो है ।१०
दोहा—१३. बने किनारे रत्न के, ऊपर नीचे तुल्य ।
छहो कुलाचल जानियो,करियो भाव निशल्य ।।११।।

तिन ऊपर छह कुण्ड है १४ पद्मद्रह महापद्म ।
ि।गच्छ केसरी महापु ड, पु डरीक सुख सद्म ।१२।
छह पर्वत के छह द्रहा, या विध तिनके नाम ।
अब आगे विस्तार विधि, कहौं सकल सुखधाम ।१३।

चौपई

१५. लबो योजन एक हजार, चौडाई तसु अर्द्ध निहार ।
१६ दश योजन गहराई जान, पहिले द्रहको जान प्रमान।१४

दोहा—१७. तामधि योजन एकको, राजत कमल सु एक ।
१८. द्रहतै द्रह दूनो लखौ, त्यो ही कमल विशेष ।१५।

छन्द विजया

१९. वासिनी छहो कुलाचल की षट् देवीके नाम सुनो सु सही
श्री ह्रीं अरु धृति कीर्ति कही बुधि देवी लक्ष्मी जान सही ।।
पल्यकं आयु जु है सबकी अरु तुल्य समा सुखसाज लही ।
२०.गंगा सिंधु सु रोहित रोहिता हरित नदी हरिकात कही१६
सीता अरु सीतोदा नदी नारी अरु नरकांत सही ।
सुवरणकूला रूपकुला अरु रक्ता रक्तोदा सब ही ।।
नदिय चतुर्दश को परवाह भयो तिन कुण्डनतै भुवि मे ।
२१.वो दो नदि पूरव को गई अरु २२ दो दो शेष अपूरव मे।१७
२३, गग कुटुम्ब सहस्र चतुर्दश सिन्धु चतुर्दशतै दूनो ।
२४. पच शतक छबीस कला षट् योजन भरतसु क्षेत्र कहानो।
इक योजन की उनईस कला तामे छै लेख सु ऊपर है ।
२२. आगे क्षेत्र सु पर्वतको विस्तार सु दूनो भूपर है ।।१८।।

चौपई

क्षेत्र दुगुन पर्वत को मान, पर्वत दूनो क्षेत्र बखान ।
यों विदेह पर्यन्त सुहान, २६ उत्तर दक्षिण तुल्य सुजान।१९।

२७. भरत और ऐरावतमांहि, घटती बढती काल कहांहि ।
उतसर्पिणि अवसर्पिणि काल, तिनके छै छै भेद निराल ।२०।
२८. शेष भूमि राजति है और, तिनमे नहीं कालकी दौर ।
सदाकाल इककाल सुहान, तीन पल्यलौ आयु प्रमान ।२१।
२९ हिमवतमे इक पल्य सुजान, दो हरिवर्षक क्षेत्र बखान ।
भूमि देवकुरु तीन सु कही, ३० यही भांति उत्तरकुल लही२२
३१, विदेहक्षेत्र सख्यात सु काल.कोटि पूर्व उतकृष्टिसु हाल ।
३२. जम्बूद्वीप क्षेत्र अनुराग, ताके इकसौ नव्वे भाग ।।२३।।
भरतक्षेत्र चौडाई जान, ३३ दूनी धातकी खण्ड बखान ।
३४. आगे पुष्करद्वीप सु जान, रचना धातकी खंड प्रमान२४
मानुषोत्र पर्वतके उरे, ३५ नहिं मानुष पर्वत के परे ।
३६. दो प्रकार के मानुष कहे,आरज और मलेच्छ सु लहे।२५
३७. भरतक्षेत्र ऐरावत मान, और विदेह कर्मभुम्र जान ।
देवकुरु उत्तरकुरु थान, भोग भूमि तहँ कही सुखदान ।२६।
आयु पल्य त्रय ३८ नर उतकृष्टि,अन्त मुहूरत जघनसु दृष्टि।
उत्तम भोगभूमि मनुजान,३९ अरु तिर्यंच आयु इह मान ।२७

दोहा—तत्त्वार्थ यह सूत्र है, मोक्षशास्त्र को मूल ।
तृतीय अध्याय पूरण भयो,मिथ्यातम को शूल ।।२८।।

।। इति तृतीयोध्याय ।।

रोडा छन्द

१. देव सु चतुरनकाय २. तीन मे पीतलौं लेश्या ।
३. दश परकार निहार भवनवासी सु त्रिदशया ।।

व्यन्तर आठ प्रकार ज्योतिषी पच कहे हैं ।
द्वादश भेद निहार स्वर्गवासी सु लहे हैं ॥ १ ॥

॥ छन्द कुसुमलता ॥

४ इन्द्र समानिक त्रायस्त्रिशत देव पारषद हैं सु सभीके ।
आतमरक्ष लोकपाल षट् सप्त भेद सु जान अनीके ॥
परकीर्नक अभियोग किलिविषक जान त्रदश हैं ।
यह देवन की जाति देव प्रति मान सु दश हैं ॥२॥
व्यन्तर ज्योतिष मांहि त्रायत्रिशत नहि देवा ।
लोकपाल भी नाहि जान यह निश्चै भेवा ॥
वासी भवन सु देव और व्यन्तर के माहीं ।
दो दो इन्द्र निहार रीति यह सूत्र कहा हीं ॥ ३ ॥
७ भोग कायकर जान स्वर्ग सौधम ईशाना ।
८ स्पर्श रूप शब्द चित्तसो सुरगन थाना ॥
९. स्वर्ग ऊपरे देव रहित इस्त्री सयोगा ।
१०. वासी भवन सु देव जान दश भेद मनोगा ॥४॥
दोहा—असुर नाक विद्युत तथा, सुपर्न अग्नि रु वात ।
तनित उदधि अरु द्वीप दिग,दशकुमार विख्यात ॥५॥
११ व्यन्तर किन्नर किम्पुरुष, महाउरग गन्धर्व ।
यक्ष और राक्षस कहे, भूत पिशाच सु पर्व ॥६॥
१२. ज्योतिष सूरज चन्द्रमा, ग्रह नक्षत्र प्रकीर्ण ।
१३. मेरु प्रदक्षरण देत है, मनुज लोक नित कीर्ण ॥ ७ ॥
१४. इनहीं ज्योतिष देवकर, होत कालकी ज्ञान ।
१५. द्वीप अढाई बाहरे, इस्थिर ज्योतिष जान ॥ ८ ॥

॥ सवैया तथा विजया ॥

१६.वासी विमानसु देव कहे अरु १७स्वर्गनसे सुरवासी कहाये
स्वर्ग परे अहमिंद्र कहै अरु १८ ऊपर ऊपर थान लहाये ॥
१६. सौधर्म ईशान सु स्वर्ग कहे अरु सनतकुमार महेद्र सुगाए
ब्रह्म ब्रह्मोत्तर लांतव स्वर्ग कपिष्ट सु शुक्र नवो गिनलाए ।६।
महाशुक्र सतार सु ग्यारम है सहस्रार सु आनत जानो ।
प्राणत आरण अच्युत मान सौधर्मतै सोलहु स्वर्ग बखानो ॥
तिन ऊपर नव नव ग्रीवक हैं अरु तिनपर नव नव अनुदिशि है
तिव ऊपर पंच पचोत्तर हैं तिननाम सुने मन मोदत है ।१०।
प्रथम विजय वैजयत सु दूजो तीजो जयत सु नाम बतायो ।
पुनि चौथो अपराजित पचम सर्वारथसिद्ध नाम लहायो ॥
२०. वैभव सुक्ख समाज थिती लेश्या अरु तेज विशुद्धपनो है
ज्ञान अवधि पहिचान विषय इन माहि सु ऊपर अधिक भनो है
दोहा—२१. गति शरीर परिग्रह तथा, और जान अभिमान ।
इनमे हीन निहारिये, ऊपर ऊपर जान ॥१२॥
२२. लेश्या पीत सु जानियो दोय जुगलके माहि ।
तीन जुगलमे पद्म है शेष शुक्ल शक नाहि ॥१३॥
२३. नव ग्रीवक पहिले कहे, स्वर्ग समूह सु थान ।
२४. ब्रह्मस्वर्ग लौकात सुर आठ प्रकार बखान ॥१४॥
२५. सारस्वत आदित्य हैं, बह्नी आरुण श्रेष्ठ ।
गर्दतोय अरु तुषित हैं, अव्याबाघ अरिष्ट ॥ १५ ॥

सवैया

२६. विजय आदि चारों विमानके दो भवधरके मोक्ष पधारें ।

पचम जान विमान वसै ते तदभव मुक्तिको पथ निहारै ।।
२७ नारकी देव कहैं उपपादिक और मनुष्य सु छोडि बताये।
शेष सु जीव तिर्यंच लखो इह भांति सु सूत्रमे भेद जताये ।१६

चोपई

२८ असुरकुमार आयुवल जान, सागर एक कही परमान ।
तीन पल्य लख नाग कुमार, ढाई पल्य सुपरणको सार ।१७।
द्वीपकुमार पल्य दो जान, डेढ पल्य शेषन परिमान ।
यह विध उत्तम आयु समान,भवनवासि देवनकी जान ।१८।
२९ कछू अधिक दो सागर सार सऊधर्म ईशान मझार ।
३० सनतकुमार महेन्द्र विख्यात, सागर सातसु जानो भ्रात१९
३१ जुगल तीसरे दशको जान, चौथे जुगल सु चौदह मान ।
जुगल पाचवें सोलह लेउ, छटे अठारह सागर देउ ।२०।
जुगल सातवें वीस निहार, बाइस जुगल आठ मे धार ।
३२ नवग्रीवक इकतीस बखान, नवें नवोत्तर बत्तिस मान२१
पंच पचोत्तर तेतिस आयु. ३३ जघन्य पल्य किंचित् अधिकायु
३४ प्रथम आयु उतकृष्टि कहान, सो जघन्य अगले मे जान२२
३५ यही भांति नरकनके माहि,आयु भेद जानो शक नाहि ।
नरक दूसरे तैं पहिचान, ऊपरको परिमान सु जान ।।२३।।
३६ प्रथम नरक को जघन प्रमान,वर्ष हजार दशकको जान
यही३७भवन३८व्यन्तरके माहि,३९व्यन्तर आयु उतकृष्टी प य
किंचित् अधिक पल्य परिमान, ४०ज्योतिष याही भांति सुजान
४१ पल्य आठवें भाग निहार, जघन्य आयुबल ज्योतिषधार ।
४२ सागर आठ लोकातिक देव, आयु कही सबकी इह भेव

दोहा—तत्वारथ यह सूत्र है, मोक्ष शास्त्र को मूल ।
अध्याय तुर्य पूरण भयो, मिथ्यामत की शूल ।।२६।।

।। इति चतुर्थोऽध्याय ।।

छन्द विजया

१ काय अजीवके धर्म अधर्म अकाश रु पुद्गल भेद बखानो ।
२जीवसु ३द्रव्य मिलाय दिये पंचास्तिसु कायको भेद जतानो ।
४ नित्यसु सास्वत जान इन्हे अरु मान अरूपी५पुद्गल रूपी ।
६धर्म अधर्म प्रकाश ये तीनो७रहित क्रिया इक क्षेत्र निरूपी१।

चौपई

८ धर्म अधर्म असंख्य प्रदेश, यही जीव के जान प्रदेश ।
९अनन्त प्रदेश अकाश स्वतन्त्र,१० पुद्गल सख्य असंख्य अनन्त
११फेरि भाग जाको नहिं होय, नाम प्रदेश बतायो सोय ।
१२ लोक अकाश विषे हैं वास, द्रव्यनको जानो सुखराश।३।
१३ धर्म अधर्म द्रव्य परदेस, व्यापत लोकालोक भनेश ।
१४ लोकालोक प्रदेश मांय, पुद्गल द्रव्य प्रदेश बसाय ।४।
१५ तासु असंख्य भाग मे जान, जीवन को अवगाह प्रमान ।
१६ जियप्रदेश संकुच विस्तार, दीपक तुल्य जान निरधार ।५
१७ पुद्गल जीव चाल सहकार, धर्मद्रव्य जानो उपकार ।
तिनको इस्थित करै सु जान, द्रव्य अधर्म स्वभाव बखान।६।
१८ गुणअकाश अवगाहन बीर,१९पुद्गल जोग सुनो नमधीर
मन वच स्वास उस्वास शरीर,२०सुखदुख जीवनमरन अधीर७
२१जिय उपकार परस्पर जीव,२२काल सु लक्षण जान सदीव
वर्तमान परिनमन सु जान, क्रिया परत्व अपरत्व बखान ।८

चौपई

५ इन्द्री पांच कषाय जु चार, अव्रत भेद सो पांच निहार ।
क्रिया भेद पच्चीस बखान, जे सब आश्रव भेद सुजान ।।३।।
६ तीव्र मंद आश्रवको मान, भाव विशेष जान उनमान ।
७ आश्रव जीव अजीव निसार, या विध सूत्र कह्यो निरधार४
८ जीवघात कृतकरन अभ्यास, और होय आरम्भ सु तास ।
मन वच काय योग अनुसरे, पर उपदेश आप जो करै ।५।
परहिंसा अनमोद करन्त, चार कषाय विशेष धरन्त ।
तीन तीन अरु तीन बखान, चार अन्त मिलि हिंसाम्रान ।६।
९ दोय भेद निर्वर्तना जान, चार भेद निक्षेप सु मान ।
दो सयोग रु तीन निसर्ग, ये सब भेद सु आश्रव वर्ग ।।७।।

सवैय्या तेईसा

१० दर्शनज्ञान के धारककी अरु दर्शन ज्ञान बडाई न भावै ।
जानत हैं गुण नीकी तरह अरु पूछेतैं गुण नाहि बतावै ।।
मांगे न पोथी देय कभी विद्वान पुरुषसो फेर सु राखै ।
गुणवानको निर्गुण मूढ कहै सो दर्शन ज्ञान अवर्ण वढावै ।८।
११ दुख अरु शोक पुकार करै अरु माथा धुने अरु आंसू डारै
ताप करै परकारन होय सो जान असाता आश्रव पारै ।
१२ जीवनमाहि दयाल व्रती अरु व्रत्तिनि दान देय सो भावै
अशुभ निषेधके हेतको उद्यम रक्षा करन छैकाय सुहावै ।९।
इन्द्री निरोध सराग सु संयम चितन क्रोध करै नहि लोभा ।
इह विध साताको बन्ध लखौ यह आश्रव बन्धकी जानसु शोभा

१३ केवलज्ञानी अरु शास्त्र सु संगति धर्मसु देवकी निंद करै है
दर्शन मोहनीकर्म को आश्रव होते सदा नर नाहि टरै हैं ।१०।
१४ कषायोदय परिनाम तीव्रतै चारितमोहनी कर्म बन्धे है ।
१५ बहु आरम्भ परिग्रह कारन नर्कके आश्रव फद फसे है ।।
१६ माया स्वभाव तिर्यंचगती अरु १७अल्प परिग्रह मानुष जानो
अल्पारम्भ रु१८ कोमलभाव यहै सब आश्रव मानुष मानों।११।
१९व्रत शीलरहित्यपनोंसु लखो गति सबको आश्रव होयसु वीरा
२०सराग मुनि अरु आश्रवके व्रत जान अकाम सु निर्जरधीरा।
तप अज्ञान रु २१ सम्यक हूँ लख देवगती को आस्त्रव नीरा।
२२ योगनकी कुटिलाई कुवादसु नाम अशुभको आस्त्रव तीरा१२

दोहा—२३ जहं जोगन की सरलता, शास्त्र कहे तै जान।
आश्रव है शुभ नाम को, या विध सूत्र बखान ।१३।

चौपई

२४ सम्यकदर्शन निरमल जान, तीन रतन जुत पुरुष बखान
ताकी विनय करै बहु भाति,शील विरत पालै चित शाति।१४
ज्ञानी योग निरन्तर साध, भव भयभीत रहै निरबाध।
शक्ति समान दान तप सार, साधुपुरुष को विघन निवार।१५
सेवा औ सुश्रूषा करै, सोई वैयाव्रत अनुसरै।
अरहन्त आचारज मनलाय, बहुश्रुत प्रवचन भक्ति कराय।१६
छै आवश्यक किरिया करै. हर्ष प्रभावन मे जो धरै।
करि सिद्धांत विषै जो प्रीति, यह षोडभावन की रीति ।।१७
जो नर ध्यावै मन वच काय, तीर्थङ्करपद आश्रव थाय।

२५ परगुण ढांके निंदा करै, अपनो औगुन चित नही धरै
अपनी थुति आप ही करै, नीचगोत्र आश्रव अनुसरै ।
२६ निज निंदा पर अस्तुति जान, अपने गुण आछादान मान
पर औगुण प्रगटावे नाहिं, पुनि उत्तमगुण प्रगट कराहिं ।
ऊचगोत्र को आश्रव जान, ऐसो सूत्रमांहि व्याख्यान ।२०।
सोरठा—२७ धर्म कार्य के मांहि, विघन करै संकै नहीं ।
आश्रव अशुभ लहाहिं, अन्तराय दुखदाय को ।२१।
दोहा—तत्त्वारथ यह सूत्र है, मोक्षशास्त्र को मूल ।
छटाध्याय पूरण भयो मिथ्यामत को शूल ।२२।

॥ इति षष्ठोध्याय ॥

चौपई

१ हिंसा अनिरत चोरी जान, अब्रह्म और परिग्रह मान ।
इन पांचोसे रहित जु होय, पंच विरत तसु नाम सु जोय ।१।
२ देशत्याग सो अणुव्रत जान, त्याग महाव्रत सरव निधान ।
३ इन व्रतनकी इस्थिति कार, भावन पांच पाच निरधार।२
४ मन अरु वचन गुप्ति सुखकार, देख चलै अरु धरै निहार ।
खान पान विधि निरख करेय, व्रत अहिंसा पंच गिनेय ।३।
५ क्रोध लोभ भय हास्य विहाय, पुनि विचार बोलै सुखदाय
हित मितकारी वचन सुहाय, सत्य भावना पंच गिनाय ।४।
६ सूनोगृह अरु ऊजर ठाम, वास तहां को जान निकाम ।
साधर्मी सो धर्म मझार, करै विवाद कदापि न जार ।
रोक टोक नहीं करै सुजान, परोपरोधाकरण सु मान ।५।

भिक्षा लेय शुद्ध मनधार, भावन पंच अचौर्य निहार ।
७ स्त्रीरागकथा तज संग, सुनै निरन्तर बढै अनंग ।। ६ ।।
पूर्वभोग चिन्ता सुन जान, पुष्ट अहार करै सुखमान ।
संस्कार सब त्याग विचार, ब्रह्म भावना पांच निहार । ७ ।
८ मनको लगैं भले अरु बुरे, विषय पांच पंच इन्द्री खरे ।
तिनमें राग भाव तजिदेह, पंच भावना परिग्रह एह ।। ८ ।।
सोरठा—९. हिंसादिक सब पाप, करैं नाश इस जगत में ।
परभव में संताप, देंहि निगोद रु नरक में ।। ९ ।।
१० होय सर्वदा दुक्ख, इन हिंसादिक पापतैं ।
जो चाहो अब सुक्ख, त्यागो मन वच कायकर ।१०।

चौपई

११ सब जीवन से मैत्री भाव, गुण अधिके लखि आनन्द पाव
दीन दुखीपर करुणाधार, धर्म विमुख मध्यस्थ निहार ।११।
१२ लख संसार शरीर स्वभाव, चिंतन होय विरक्त स्वभाव
१३ वश परमाद योग तैं होय, जीवघात सो हिंसा सोय ।१२।

सवैय्या

१४असत्य भनेसो झूठ कहो, १५विनदीयो दान सो चोरीबखानो
१६ मैथुन जान अब्रह्म सही, १७ममताको प्रसार परिग्रह मानो
१८ मिथ्या माया निदानसु वर्जित, सोई व्रती निरशल्य कहानो
सो व्रत दोय प्रकार यती, १९घर रहित व्रती घर सहितसु भानो
२०अनुव्रतधारक श्रावक है, २१दिगदेश प्रमान अनर्थ को त्यागो
प्रोषध और समायिक धारक, भोगें भोग प्रमाण सुरागो ।।

धार प्रकारसु दानको दायक इह विध सातौ शीलसु पागी ।
२२मरणके अंत सल्लेखन धारत,होय यनीसम सो बडभागी१४
चौपई
२३जिनवानी मे शका करैं, इह पर भव सुखवांछा धरै ।
रोगी मुनिको देखि गिलान, मिथ्यादृष्टीगुण सनमान ।१५।
वचनद्वार ताकी थुति करैं, अतीचार पन समिकित धरैं ।
२४ व्रतशीलनमे क्रम क्रम जान,पांच पांच जे कहे वखान।१६।
२५ जीवनि वाधे ताडे सोय, फान नाक छेदे जो कोय ।
मान अधिकतैं भार जु धरैं, अन्नपान अवरोधन करैं ।१७।
२६ मिथ्या को उपदेश सु जान, गूढवात परको व्याख्यान ।
झूंठो लेख तनो विधहरं, परको मूसधरोहर हरैं । १८ ।
मन्त्र पगायो प्रगटै जोय, अतीचार पन सतके सोय ।
चोरीको २७उपदेश सु देय, वस्तु चुराई मोल सु लेय ।१६।
राजविरोध सु काज कराय. घाटि देय अरु वाढि लहाय ।
वस्तु खरी मे खोटी डार, व्रत अचौर्य पाच अतिचार ।२०।
२८ पर विवाह कारण उपदेश, और कुशीलीस्त्री वेष ।
परस्त्री व्याही जो होय, तथा और अन-व्याही सोय ।२१।
तिनको मुख अरु अङ्ग निहार, तथा अनङ्गक्रीडा निरधार ।
तीव्र काम निज वनिता भोग, ब्रह्मचर्य अतिचार अयोग ।२२।
२९ खेत और घर रूपो जान, सोनो पशु अरु अन्न वखान ।
दासी दास रु कपडा आदि, इनके बहुत प्रमाण सु वाद ।२३।
अतीचार अपरिग्रह पांच, इह विध सूत्र कहो है सांच ।

३० दिशि अरु विदिशि उल्लंघन जान,ऊंचोनीचो क्षेत्रवखान
क्षेत्र प्रमाण भूलकें जाय, मन मानो तसु लेय बढाय ।
अतीचार दिगव्रतके आहि, ऐसो कह्यो सूत्र के माहि । ५।
३१परमित क्षेत्र बाहरी बस्त, लेना देना सब अप्रशस्त ।
तसु वासी सग शब्द करेय, अपनी देहु दिखाई देय । ।
पुद्गल क्षेप सु चेत कराय, अतीचार देशव्रत आय ।
३२ हास्य करै अरु क्रीडा काम, यहै बात बहु कहै निकाम ७
मतलब अधिक जु काज कराय, भोग उपभोग लोभ अधिकाय
अतीचार अनरथदंड जान, ऊपर तिनको करो बखान । ।
३३ योगकुटिल सामायिक माहि, आदर उत्सम चितमे नाहि।
मूलपाठ कछुकी कछू पढै, खबर नही मन सशय बढै ।२९।
अतीचार सामायिक जान, या विध सूत्र कह्यो व्याख्यान।
३४ निज नैननसो देखे बिना, कोमल वस्तु बुहारिन किना।३०।
कोई वस्तु उठावें नाहि, पूजावस्त्र न आसन धराहि ।
पोसा भूलै बिन उतसाहि, ये प्रोषध अतीचार लहाय ।३१।
३५ सचितवस्तु आहारसु देय, सचित मिलाय जुदा न करेय
वस्तु सचित्त मिलो आहार, और पुष्ट रस जानो सार ।३२
दुखकर पचै सु भुंजै नाहि, भोगुपभोग अतिचार कहाहि ।
सचितमाहि धारी जो वस्तु, और सचित ढांको अप्रशस्त।३३
परहस्ते मुनिभोजन देय, दाता के गुण मन न धरेय ।
घरके काममाहि फँस जाय, मुनिभोजन बेरा बिसराय ।३४।
अतिथिविभाग जान अतिचार, याही विध लख सूत्र मझार ।
३७जीवन मरण सु बांच्छाधार,मित्रानुराग सुपूर्व विचार३६

पूरव भोगन प्रीति कराहिं, आगे की वांच्छा उरमाहिं ।
अतीचार सल्लेखन जोय, दृढता पूर्वक जानो सोय ।३ ।

पद्धरी छन्द

३८उपकार निमित्तसु दान देय, तसु नाम दानसो जान लेय ।
३९सरधान भक्ति अरु पात्र लेख,ता दान तनो जानी विशेष
दोहा—तत्वारथ यह सूत्र है, मोक्षशास्त्र का मूल ।
अध्याय सप्तमो पूर्ण भयो,मिथ्यामति को शूल ।४०।

॥ इति सप्तमोध्याय ॥

छन्द विजया तथा सवैय्या

१ मिथ्यात पंच अरु बारह अविरत पन्द्रह प्रमाद कषाय पचीसा
योगके पन्द्रह भेद लखो यह पांच हैं बन्धके भेद मुनीशा ॥
२ सहित कषाय सु जीव गहे कर्मरूपी पुद्गल योग सुरीशा ।
ताहीको नाम सु बन्ध कहो त्रैलोक्यपती अद्भुत जगदीशा। ।

चौपई

३ सो बन्धन है चार प्रकार,प्रकृतिबन्ध इस्थिति निरधार ।
अनूभाग अरु तुर्य प्रदेश, या विध सूत्रमाहिं लख वेश । ।
४पहिले विधिको है जो भेद, ज्ञानावर्णी पांच विभेद ।
दर्शन आवर्णी नव जान, वेदनि दोय प्रकार बखान । ।
अट्ठाईस मोहनी वीर, आयु चार परकार सु धीर ।
नाम कर्मके हैं ब्यालीस, गोत्र दोय भाषे जगदीश ।४।
अन्तराय के पांच निहार । इह विध कर्म आठ परकार ।
दोहा—५ पन नव दो अठबीस चउ, ब्यालिस दो अरु पांच ।
आठ भेद के भेद जे, सत्तानव है सांच ॥ ।।।

चौपई

६ मति श्रुति अवधि मनपर्यय जान,केवल ज्ञानावर्णी मान ।
७ चक्षु अचक्षु अवधि लखि लेउ,केवल दर्शन अवरन देउ ।६।
भेद पाचमो निद्रा जान, निद्रानिद्रा छठो बखान ।
प्रचलाभेद सातमो धीर, प्रचलाप्रचला अष्टम वीर । ७ ।
स्त्यानगृद्ध सो नवमो जान, दर्श अवर्णी भेद बखान ।
८ साता और असाता दोय, यही वेदनी भेदसु होय । ८ ।
९ दर्शमोहनी तीन प्रकार, चारित्रमोहनी दो निरधार ।

पद्धरिछन्द

अकषायवेदनी नौ प्रकार, अरु सोलह भेद कषाय धार ।
सम्यकप्रकृती मिथ्यात जान, अरु मिश्र मिथ्यात कषाय मान९
रति अरति हास्य अरु शोक चीन, भय जान जुगुप्सा वेद तीन
जा उदयं नहिं सम्यक्त होय, चउ अनन्तानुवन्धीव जोय ।१०।
जा उदयं नहिं व्रत देश धार, सो अप्रत्याख्यानी असार ।
जाउदयें महाव्रत नाहिं होय,लख ताहि प्रत्याख्यानीसु जोय११
इह यथाख्यात चारित्र भाव, सज्वलन उदयें इनको प्रभाव
इक एक भेद सौ चार चार, कुह मान लोभ माया निहार।१२
१० लख आयुकर्म के चार भेद, नारक तिर्यंच मनुष्य देव ।
११जाउदय भवांतर जीव जाय, सो जानो गतिको भेदभाय१३
जा उदयें इक इन्द्रियादि पांच, सो ग्रहै जीव सो जान सांच
लख पांच शरीर औदारकादि,निरमाण रचे जो चक्षु आदि१४
बन्धन पुद्गलको मेल जान, संघात सु दृढती संधि मान ।

सस्थान कहो सम चतुस्थान,संहनन सूत्र मे छै बखान ।१५।
सपरसके भेद सु आठ वीर,,रस पांच प्रकारसु लखौ धीर ।
दो गन्ध वरणके पांच भेद, पूर्वोय अगुरलघु अप*सु खेद।१६।
परघात लखौं=तप अरु प्रकाश+उस्वास गमन जानो प्रकाश
उपभोग देत लख इक शरीर, जानो सु प्रत्येक शरीर वीर१७
जस सुभग सु सुस्वरशुभ स्वरूप,सूक्षम पर्याप्त सुथिर अनूप ।
आदेय स्वयश कीरति निहार, लख इतर सहितदश प्रकृतिसार
तीर्थङ्कर गोत्र करो विचार, यह नामकर्म ब्यालीस सार ।
१२ ऊचो अरु नीचो गोत्र दोय, अब अन्तरायको भेद जोय१६
१३मुनिदान लाभ भोगोपभोग, वीर्यान्तिराय पद पाच जोग ।
१४ ज्ञानावर्णी सो तीन जान,अरु अन्तरायको जोग मान।२०
थिति कोडाकोडी तीस लेउ, सेनी पचेंन्द्रिय परयाप्त भेउ ।
१५ सत्तर कोडाकोडी निहार,तिथि मोहनिकर्म हियेसु धार।२१
सोरठा—१६कोडा कोडी बीस, नाम गोत्र इस्थिति कही ।
१७आयुकर्म तेतीस, थिति उत्कृष्टी जानियो ।। २२ ।।

सवैय्या

१८ जघन्य थिति है बारह मुहूरत,वेदनिकर्म कही श्रुतमाहीं।
१६ नाम रु गोत्रकी आठ मुहूरत, २०शेषकी अन्तर्मुहूर्त कहाई
२१कर्मउदय सविपाक कहो,सोई अनुभव नामको भाव बनायो
२२यथानाम विधि अनुभवसोई,सोई फल श्रुतमे इमि गायो२३
२३जाकर्मउदयको भोग भयो,इक देश ता कर्मको नाश कहायो

* अपघात =आतप +उद्योत ।

२४ सब कर्मप्रकृति को कारण है,सब काल सवर्गी योग बतायो
मन वचन काय के योग विशेष तें, सूक्षम कर्म प्रदेश घनेरे ।
आत्मप्रदेश अकाश विषै, हुयइस्थिति जान सु नेम यहे रे ।२४।
सब आतम के परदेश विषै, है नन्त अनन्त प्रदेश सुकर्मा ।
२५ शुभ आयु नाम सु गोत्र कहो, अरु पुण्यसु साता वेद सुकर्मा
इतने छोड सु पाप कहे, इस सूत्र की रीति लखो भ्रम हर्ता ।
अध्याय सु अष्टम पूर्ण भयो,तत्त्वारथ सूत्र सु मोक्ष का कर्ता २५

॥ इति अष्टमोध्याय ॥

छन्द अशोक पुष्पमंजरी ॥

१ आस्रव को निषेध सोई सवर बतायो गुरु,
गुपति समिति धर्म अनुप्रेक्षा जानिये ।
बाइस परीषह सहित शुभचारित्र जान,
द्वादश प्रकार जैन तप यो बखानिये ॥
ऐसे निर्जरा और सवर सु जान योग,
योग को निरोध सोई गुप्ति भी प्रमाणिये ।
सुमति के भेद आगे कहत हो सो तौ सुघर,
आगम के अनुसार सब रीति मानिये ॥१॥

चौपई

पृथिवी निरखि गमन जो करै, ईर्ष्या समिति चित्त सो धरै ।
हित मितकारी वचन रसाल, बोलै भाषा समिति विशाल ।२।
निरख परख आहार जु लेय, समिति एषणा हृदय धरेय ।
धरै उठावै भूमि निहार, निक्षेपनि आदानि विचार ॥३॥
ममता काय तजे निरधार, ऐसे समिति पांच बिध सार ।

६ कर्कश त्याग वचन वध बन्ध, उत्तम क्षमा सु है गुणखध ४
कोमलता मार्दव को नाम, जान सरलता आर्जव धाम ।
सत्य वचन जग मे विख्यात, शौच त्याग परवस्तु कहात ।५।
संयम रक्षा है षटकाय, इन्द्री पांच निरोध कराय ।
अनशनादि तप बारह सार, चार दान धनत्याग निहार ।६।
आकिंचन निरपरिग्रह वीर, ब्रह्मचर्य मैथुन तजि धीर ।
यहविधि दशविध धर्म निहार,कहो सूत्रमे सब निरधार ।७।
७छिनभगुर सो अनित बखान,अशरण कोउ शरण नहि जान
भ्रमण चतुर्गति है ससार, सुख दुख भोगत एक निहार ।८।
जीव अन्य अन्यत्व विचार, वपु अशौच पुनि है निम्सार ।
आगम कर्म सु आस्रव जान, कर्म रुके पर संवर मान ॥६॥
एकदेश करमनि क्षय होय, निरजर नाम कहावै सोय ।
लोकविचार सु लोकाकार, दुर्लभ ज्ञान जान मन धार ।१०।
तीनरतन दशधर्म स्वभाव, द्वादशानुप्रेक्षा मन लाव ।
८ मोक्षमार्गतै च्युत नहि होय । निर्जर कर्म करै दृढ सोय११
बाईस परीषह इह विध जान, ६ क्षुधा तृषा अरु शीत बखान
उष्ण और मच्छर उपसर्ग, नगन अरति अरु इस्त्री वर्ग १२
गमनासन शय्या परधान, वच कठोर वध बन्धन जान ।
जाच अलाभ रोग सु निहार, तृण कंटक इस्पर्श विचार ।१३।
नहि मैलो मन मलिन शरीर, आदर और अनादर वीर ।
बहु तप कियो ज्ञान नहि भयो, ऐसे ही दर्शन नहि थयो ।१४
इनको विकलप मन नहि लहैं, सो बाईस परीषह सहे ।

१०. सूक्षम साम्पराय छदमस्थ, द्वादश गुनथाने मुनिवेद ।
छदमस्थ वीतराग को भेद, श्रुतमे ऐसो भाषो धीर ।।१६।।
११.जिनसञ्ज्ञा तेरमगुनथान, इनके ग्यारह नाहिं निदान ।
१२ छटे सातवें अठयें मान, और नवममे सरव सु जान ।१७
१३. ज्ञानावर्णी कर्म सुभाय, प्रज्ञा अरु अज्ञान कहाय ।
१४. अन्तराय अरु दर्शनमोह, होय अलाभ अदर्शन दोह।१८।

छन्द विजया

१५चारित्रमोह उदयतै लखो,नगनत्व अरति अरु स्त्री निषध्या
याचना करकस वचन कहो,परशंसा अस्तुति सात सु हृद्या ।
१६. वेदनि कर्म उदयतै गिनो, सब ग्यारह शेष परीष बताई।
१७एकसमय इक जीव विषैइक,आदि उनीश परीषह जताई१९
१८.सामायिक व्रत त्रिकाल सुनो,उत्कृष्टि घडीछह२ सु कहाई
सब जीवविषै सम भाव करें,तजि आरति रौद्र सु भाव लहाई।
गुणमूल अट्ठाइस माहि लगो,कोउ दोषसु ताहि उथापहिं ज्ञानी
छेदोपस्थापन नाम कहो,लख सूत्र विचारसु या विध ठानी२०
हिसादिक त्यागमे निर्मलता परिहार विशुद्धि नाम कहायो ।
सूक्षम साम्पराय कहु ताको भेद सु सूक्षम लोभ लहायो ।।
यथाख्यात चारित्र सुनो सो आतम सोई सु निरमल थायो ।
या विध पाच प्रकार लखो शुभ चारित नामसु सूत्रमे गायो२१
१९.उपवासी अलप अहारी है इक दो घर गिन आहार लहावै।
अनशन अवमौदर्य कहो अरु व्रतपरिसख्या नाम कहावै ।
छौडै रस परित्यागी है घर सूनो गुफा निरजन वनवासा ।

कायकलेश शरीर को कष्ट दिये इह षट तप बाहर परकाशा२२
अब अन्तरग के भेद सुनो षट तिनसो वसुविध कर्म डरो है।
२० दोष निवारन चित्तकी शुद्धता प्रायश्चित तसु नाम धरो है
गुणगौरव आदरभाव करें सो विनयवृत्त सोई विनय भरो है
रोगसहित मुनि तिनकी सेवा वैय्यावृत तसु नाम परो है।२३।
स्वाध्यायकर ज्ञान बढावत आतम हित चितमांहि धरो है।
तजि संकल्प शरीर है मेरो यह व्युत्सर्ग सु नाम परो है।
तत्व को चिंतन ध्यान कहो षट भेद सु तप अन्तरंग कहो है।
२१ भेद नवौ चतु दश पन दो तप ध्यानसु पहिले पहल ठयो है२४

चौपई

२२ निष्कपटी गुरु आगे कहैं, आलोचन तसु नाम सु लहै।
सामायिकमे दुष्कृत होय,करैं शुद्ध प्रतिक्रमण सु जोय।२५।
आलोचन प्रतिक्रमण सु दोय, तदुभय नाम कहावै सोय।
हेयाहेय विचार सु होय, ताको नाम विवेक सु जोय।२६।
मनवचकाय त्याग व्युत्सर्ग, बारह विध तप जान निसर्ग।
उपवासादि करण है छेद, संघत्याग परिहार सु भेद।२७।
इस्थापन दृढता है धर्म, नौ विध कहो प्रायश्चित मर्म।
२३ दर्श ज्ञान चारित्र आचार, इनको विनय शुद्ध मनधार२८
२४ व्रत आचर्न करैं आचार, पढै पढावै पाठक सार।
उपवासादि सु तप है जान, शैक्ष शास्त्र अभ्यास करान।२९।
रोगादिक पीडित सु गिलान, मुनिसमूह सोई गण मान।
शिष्यसमूह दीक्षित आचार,सोई कुल को अर्थ निहार।३०।

३६ तत्वविचारै श्रुत अनुसार, आज्ञाविचय विचयमनधार ।
करमन नाश विचार करेय, अपायविचय सो नाम कहेय ४२।
कर्मउदय को जान विचार, नाम विपाकविचय मनधार ।
तीनहिं लोक विचार निहार, सो संस्थानविचय मनधार ।४३
या विध धर्मध्यान पद चार, सूत्रमांहि तिन मर्म निहार ।
३७ शुक्लध्यान के पाये दोय, धर्मध्यान के पहिले जोय ।४४।
होय सकलश्रुतकेवलि जान, ३८ पिछिले केवलज्ञानी मान ।
३९ पृथक्त्ववितर्क सु पहलो जान,दूजो एक वितर्क बखान।४५
सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती जान, तीजो भेद शुकल को मान ।
व्युपरतक्रियानिवृति भेव, चौथो शुक्लध्यान लख लेव ।४६।
४० तीनयोगवारेकै जान, प्रथम शुक्ल की प्रापति मान ।
एकयोगवारेकै नेम, द्वितीय शुकल प्रापति है तेम ।४७।
काययोगवारे के होय, तीजा क्रिय प्रतिपात सु जोय ।
चौथा शुकल अयोगी जान, यह परिपाटी सूत्र प्रमान ।४८।
४१ सवीतर्क्क अवितर्क विचार,सकल सु श्रुतज्ञानी मुनिधार ।
पहिले यह दो शुकल निहार, ४२ अवीचार दूजे निरधार।४९।
४३ नाम वितर्क सुश्रुत पहिचान,या विध सूत्र करै व्याख्यान
४४ अर्थविचार पदारथ जान, व्यजन वचन शब्द सो मान५०
मनवचकाययोग चित्त धरै, इकपदतैं दूजो अनुसरै ।
करै शब्दतैं शब्द विचार, और योगतैं योग निहार ।
यही संक्रमन जानो वीर, टीका सूत्र लखौ मन धीर ।५१।

छन्द विजया

४५ मिथ्यादृष्टीतै सम्यक्ती लख तातै सु देशव्रतीके कही है ।

उशम श्रुति दश पूरव कही, केवलज्ञान विराधन सही ॥
सब तीर्थङ्कर बारे माहिं, पांचों मुनि निर्ग्रन्थ कहाय ।
जान भावलिंगी व्यवहार, पांचो को सौ है आचार ॥
लेश्या औ उपपाद स्थान, इनतै मुनि सब पृथक् बखान ॥
दोहा—तत्वारथ यह सूत्र है, मोक्षशास्त्र को मूल ।
नवम अध्याय पूरण भयो, मिथ्यामति को शूल ॥

॥ इति नवमोध्याय ॥

सवैय्या

१ लख मोहनि कर्मको नाश भयो, अरु ज्ञान दर्श आवर्नी जानो
अन्तराय इन चारकै क्षयतै केवलज्ञान सु होत बखानो ॥
२ बधके हेतु मिथ्यादि कहे, तिनकोसु अभाव भलीविधि मानो।
निर्जरकर्म समस्त खिरै, सो मोक्षको मूल सो मोक्ष कहानो ॥

पद्धरी–छन्द

३ उपशमिक आदि भव्यत्व अंत जे चार भाव क्षय मोहतंत
४ अर अन्य भाव क्षय सबै होय, केवल सम्यक्त रु ज्ञान जोय२
केवलदर्शन सिद्धत्व जान, इन भेदन मोक्ष लखौ सुजान ।
यह जीव करमक्षय के अनंत, ऊचे को ५ जाय सु लोक अंत।३
६जिय उर्द्ध गमनको निमित्त जान, पूरब प्रयोग सो चित्तठान
फिर कर्मयोगतै रहित मान, अरु कर्मबन्ध के क्षय बखान ।४।
अघ ऊर्ध्व गमन को भाव जोय, जे निमित्त सूत्र भाषो है सोय
लखकर ७ कुम्हारकी चक्ररीति, पूरब प्रयोग जानो सुमीत ।
कर लेप तोमरीपै सु सार, जल माहिं होय ताको निसार ।
तब लेपरहित ऊपर तिराय, त्यो ही संगति गत कर्म भाय॥

बन्धन टूटत ऐरंडबीज, ऊपर उछलत महिमा लखीज ।
लख अगनिशिखा ऊपर विहार, यो कर्मबंध को क्षय निहार।७
८ धर्मास्तिकायको लख सुभाय, आकाश लोक आगैं न जाय
९ व्यवहार रूप आरज सुक्षेत्र, अरु काल चतुर्थम लख पवित्र८
मानुषगति लिंग पुलिंग जान, तीर्थङ्कर गणधर सुगुण खान
अरु यथाख्यात चारित्र धार, निजशक्ति जान प्रति बुधनिहार
परके उपदेश सु बुद्धि होय, जे लहै मोक्ष संशय न कोय ।
मतिज्ञान आदि इस्थिति निहार, फिर केवलज्ञान लहै सुसार१०
शत पांच धनुष उत्कृष्टि देह, अरु जघन हाथ त्रय अर्द्ध तेह
उत्कृष्टि समय छैमास जान, अरु जघन समय सो एक मान
लख जघन समय इक सिद्ध होय, उत्कृष्टि समय शत अष्टजोय
अल्पत्व बहुत्व सु भेद जान, इम साधन सिद्ध समूह मान।१२।
दोहा—तत्त्वारथ यह सूत्र है, मोक्षशास्त्र को मूल ।
दशाध्याय पूरण भयो, मिथ्यामति को शूल ।।१३।।

।। इति दशमोध्याय ।।

दोहा—स्वर पद अक्षर मात्रिका, जानो नहीं विराम ।
व्यंजन संधि रु रेफको, नहिं पहिचानो नाम ।।१।।
क्षमौ साधु मो अधमको, धारो क्षमा महान ।
शास्त्र समुद्र गम्भीर को, किनि अवगाहो जान ।।२।।

चौपई

तत्त्वारथ इस अध्याय माहिं, भाषो मुनिपुंगव शकसु बाहिं ।
जो नर भव धारि यह पढै, तासु उपाय सु फल लहि बढै ।३

दोहा—तत्त्वारथ इस सूत्र के, कर्ता उमा मुनीश ।
गृद्धपिच्छ लक्षित सु लख, बन्दौं स्वामिन ईश ॥४॥
अध्या पहिले चारलौं, पहिलो जीव बखान ।
पंचम अध्याये विषै, पुद्गल तत्त्व बखाव ॥५॥
आश्रव छट्टे सातमें, अष्टम बन्ध निदान ।
नवमे सवर निर्जरा, दशमें मोक्ष महान ॥६॥
वर्णन सातों तत्त्व को, दश अध्याये माँहि ।
यथाशक्ति अवधारियो, कियो सुनो शक नाँहि ॥७॥
धारनकी जो शक्ति नहि, सरधा करियो जान ।
सरधावान सु जीवड़ा, अजर अमर हू मान ॥८॥
तपकरना व्रतधारना, संयम शरण निहार ।
जीवदया व्रतपालना, अन्त समाधि सु सार ॥९॥
छोटेलाल या विध कहैं, मनवचतन निरधार ।
चारोंगति दुख मेटिकै, करै कर्म गति छार ॥१०॥

कविनाम ठाम वर्णन

दोहा—जिला अलीगढ़ जानियो, मेडू ग्राम सु ठाम ।
मोतीलाल सु पूत हौं, छोटेलाल सु नाम ॥१॥
जैसवार कुल जान मम, श्रेणी बीसा जान ।
वंश इक्ष्वाक महानमे, लयो जन्म भुवि आन ॥२॥
काशी नगर सु आयकै, शैली संगति पाय ।
सबको हित सु विचारकै, भाषा सूत्र कराय ॥३॥
उदयराज भाई लखो, शिखरचन्द गुणधाम ।
तिनप्रसाद भाषा करी, भाषासूत्र सु नाम ॥४॥

छन्द भेद जानो नहीं, और गणागण सोय ।
केवल भक्ति सु धर्मकी, वसी सु हृदये मोय ॥५॥
ता प्रभाव या सूत्रकी छन्द प्रतिज्ञा सिद्धि ।
भाई भविजन शोधियो, होवै जगत प्रसिद्धि ॥६॥
मगल श्री अरहंत हैं, सिद्ध साधु वृप सार ।
तिननुति मनवचकायकै, मेटौ विघन विकार ॥७॥
छन्दवद्ध श्रीसूत्र के, किये शुद्ध अनुसार ।
मूल ग्रन्थको देखकर, श्रीजिन हृदये धार ॥८॥
कुवारमास की अष्टमी, पहिलो पक्ष निहार ।
अडसठ ऊन सहस्र दो, सम्वतरीति विचार ॥९॥
जैसी पुस्तक मो मिली, तैसी छापी सोय ।
शुद्ध अशुद्ध जु होय कहुं, दोष न दीजै मोय ॥१०॥

॥ इति श्रीभाषा तत्त्वार्थसूत्र छन्दवद्ध सम्पूर्णम् ॥

बड़ी अठाई

आण[१] दिवाओ न आपणी महियो[२] करो न विचार ।
सिद्धचक्र व्रत आराधस्या, मन धर हो स्वामी निर्मल भाव
यो व्रत नित आराधस्या ॥ १ ॥
राय घरा दो ढीकरी[३] रूपां[४] घणी सरूप ।
एक राय हंस बोलिया, बच्चा कहो न थाका काईजी विचार
यो व्रत नित आराधस्या ॥ २ ॥
मैना हंस वतलाइया, सुन बाबुल[५] का बोल ।

---

१ सौगन्ध, २ सखियो, ३ छोकरी-पुत्री, ४ रूप में बहुत सुन्दरी थी
५ पिता के वचन ।

बाबाजी ऐसा न भाखियो, अब होसीजी म्हारो भाग्य विचार,
कर्म विचार, यो व्रत नित आराधस्या ।। ३ ।।
पहुपाल राजा मन मे डिगमग्या, सुन पुत्री का बोल ।
कुष्ट सहित वर हेरियो, अब यो वर मैना जोग,
पुत्री जोग ।। यो व्रत० ।। ४ ।।
लगन लिखाई जोशिया, सुगन सरोवर भांति ।
वरमाला बेगी रची, अब हरख्याजी कोढी भरतार,
यो व्रत नित आराधस्यां ।। ५ ।।
ऐन वहन दोइ उणमणी, जल मे दिवलो जोय ।
बाबाजी कूड उपाईयो, तूनै दोन्ही ओ बाई कोढी भरतार,
यो व्रत नित आराधस्यां ।। ६ ।।
सात सहेल्या मिल खेलती, भोली खेलणहार ।
सात सहेल्या मिल यो कहैं, तूनै दीन्ही भई दूरा दूर,
देस परदेस ।। यो व्रत० ।। ७ ।।
श्रीपाल राजा आयो परणवा, सातसै कोढीजी साथ ।
मांडलडो[1] विलख्यो हुयो, विलख्याजी नगरी का लोग,
सब परिवार ।। यो व्रत० ।। ८ ।।
पहुपाल राजा हरषिया, वर आयोजी मैना जोग ।
मैना मन हर्षी हुई, अब होसोजी म्हारो भाग्य विचार,
होसीजी कर्म विचार ।। यो व्रत० ।। ९ ।।
श्रीपाल राजा परणयो, अब कौरी[2] हो बाबुल दीनी छे दान ।

१–मांडा कै लोग (कन्यापक्ष के) २–पुत्री

मांगे रिद्ध सिद्ध सम्पदा, अब दीन्ही स्वामीजी पुन्य परणाय,

दो वरदान ॥ यो व्रत ॥ १० ॥

ढोल धमामा बाजता, गात पधारे हाय ।

नव यौवन नई गोरडी, बतलाई हो कांई भरतार

यो व्रत नित आराधस्या ॥ ११ ॥

गुण सुन्दरि म्हारी बीनती, विकसली म्हारी देह ।

हम सायर तुम मारडी, अब हम तुम होय रह्या दूरादूर

देश परदेश ॥ यो व्रत ॥ १२ ॥

ई सुन्दर थी देह को, ईंको कांईजी विचार ।

तुम सायर हम गोरडी, अब हम तुम हो स्वामी भोग विलास,

नया-नया भोग ॥ यो व्रत ॥ १३ ॥

जब मन दृढ कर राखियो तब हरख्यो श्रीपाल ।

आदिनाथ हृदय धरयो अब राखोजी सतगुरु का पांव ।

॥ यो व्रत नित० ॥ १४ ॥

ताबां की छः तालडी, गरदा को छेः भात ।

गुरु बिठाऊं आपणा, गुरु बैठ्याजी निर्मल भाव, सहज भाव,

॥ यो व्रत० ॥ १५ ॥

ढोल धमाका बाजता, जिन चैत्यालय जाय ।

प्रदक्षिणा दे गुरु पूछिया म्हाने हो स्वामी देस्या उपदेश ॥

॥ यो व्रत० ॥ १६ ॥

धरत बड़ो छै कोमली, कीजो भावानुसार ।

कर्म कटे काया फले, झड़स्यांजी थांका रोग विरोग ॥

॥ यो व्रत ॥ १७ ॥

चरण धोय गन्धोदक लियो, लीनो मस्तक चढाय ।
मिनखा से देवता हुआ अब सुवरणवर्णी होगई काय ॥
॥ यो व्रत० ॥१८॥

वलिहारी गुरु आपकी जहां दियो उपदेश ।
कोढी मे राजा हुए अब कंचनवर्णी हो गई देह ॥ यो व्रत० ॥१६॥
मैना सास पगा पडी, सासु म्हाने द्योजी असीस ।
खाज्यो पीज्यो विलमज्यो, थारा साहिब को राखो अविचल राज,
सदा ही सुहाग ॥ यो व्रत० ॥२०॥

मैना बाप वुलाईया, अपणा करमा जोग ।
ये दोन्ही कोडी घरा, अब देखोजी म्हारो भाग्य विचार
करम विचार ॥ यो व्रत ॥ २१ ॥
पहुपाल राजा आइयो, मस्तक मेल्यो हाथ ।
मैं तो कूढ कुमाईया अब हूज्योजी सदा ही सुहाग
अविचल राज ॥ यो व्रत० ॥२२॥
सियाला मे तो मी पडे, उन्हाले मे लू वाय ।
चौमासे जल बादली, हरियाली हो स्वामी पावन देह ॥
॥ यो व्रत० ॥ २३ ॥
सोनां थारो मू ंदडो, घड्यो निगोत्या भाव,
श्रीपालजी थांके कारणे, मैनावत रानी जावा न देय ।
॥ यो व्रत० ॥ २४ ॥
कूप चढ्यो राय वीनवै, रूढो लीनो हाथ ।
सारी रिद्ध सिद्ध छाडिके, ले गया स्वामी संजम धार ।
॥ यो व्रत० ॥ २५ ॥

मैना पूरी हुई थारी आश जो नन्दीश्वर ढोकियो ।
सारी गोठ्या को अविचल राज, जो नन्दीश्वर ढोकियो ॥
॥ यो व्रत० ॥ २६ ॥
गावा वाल्या ही सुखपाय, जो या हिल मिल गाइये ।
सुनवा वाल्या थे ही सुखपाय, जासे ध्यान लगाइये ॥यो व्रत॥२७॥

लाडू की विनती

पच परमगुरु वन्दस्या,सुमरो शारद माय,जिनेश्वर लाडूगायस्यांजी॥१॥
गुण गाऊ जी श्रावक तणा क्रिपा त्रेपनसार,जिनेश्वर लाडू ॥ २॥
जयपुर नगर सुहावनो बसे जहां महाजन लोग,जिनेश्वर लाडू० ॥ ३ ॥
आठ मूलगुण गेहुडा[1] जी समकित छाज पिछाट[2]जिनेश्वर लाडू ॥४॥
सात विसन रज दूर करि, सुवरण थाल विणाय जिनेश्वर लाडू ॥ ५॥
कोरे[3] खाले[4] भेयस्यां, प्रासुक पाणीजी धोय ॥ जिने ॥६॥
वासकी छवली छापस्या, तप तावडिया सुखाय ॥जिने ॥७॥
दोय प्रकार को घट्ल्यो[5], करुणा पीसणहार ॥जिने ॥८॥
बारह व्रत कर छानस्या, त्रेपन क्रियाजी पाल ॥जिने.॥९॥
रतन कचोले समेटस्या, बाईस परीषह छान ।· जिने० ॥ १० ॥
नन्दीश्वरी चूल्हो करचो आतम करी कढाहि[6] ॥ जिने० ॥ ११ ॥
बुद्धि विवेक चाटू करो, करुणा सेकनहार ॥ जिने० ॥ १२ ॥
ईन्धन चार कषाय को, ज्ञान अगनि परजाल ॥ जिने० ॥ १३ ॥
दरशन ज्ञान कर काठडो, करुणा मेलनहार ॥ जिने० ॥ १४ ॥
धीरत घालो गाय को, ज्यो भोजन पर खाड ॥ जिने० ॥ १५ ॥

---

१ गेहूँ, २. छाजले से पिछाट कर, ३ नवीन, ४. मटकी या मिट्टी का बरतन
५ छोटी चक्की ६. सेकने की कढाई,

इह विधि लाडू मेलस्या,घाल गिरि मिरच गूंद।। जिने०।। १६ ।।
कोको[1] मोरा देवी मायने, लाडू की वावनहार ।। जिने० ।। १७ ।।
तप सयम अजली करी, वाईस परीपह कर वांध ।।जिने०।। १८ ।।
सात जु लाडू निरमला, मुवरण थाल मिलाय ।। जिने० ।। १९ ।।
पूजाजी कीजो भाव सो, आठ दरव नित ल्याय ।। जिने० ।। २० ।।
उज्ज्वल वस्त्र पहिनल्यो, निरमल अग पखाल ।। जिने० ।। २१ ।।
सुवरण झारी जल भरी, द्यो चरणो जलधार ।। जिने० ।। २२ ।।
केसर घमल्यो भाव से, जिनजी के चरण चढाय ।।जिने०।। २३ ।।
अष्टद्रव्य ल्याओ ऊजला, जिनजी की पूजा रचाय ।।जिने.।।२४ ।।
आम जलेबी नारगी, फल नारेल चढाय ।। जिने० ।। २५ ।।
रत्न जडित की आरती, मुक्ताफल की वाति[2] ।। जिने० ।। २६ ।।
व्यामाजी हेलो पाडियो, मन्दिर आओ जुजमान ।।जिने० ।। २७ ।।
मरद जावेला देहरां, वाजत आवैला तूर[3] ।। जिने० । २८ ।।
मरदाजी पचरग पागडी, राण्याके नोरग घाट ।। जिने० ।। २९ ।।
पुत्र भलाजी जादूतणा, सेया छै गढ गिरनार ।। जिने० ।। ३० ।।
दीवाजी[4] देन्ती कामण्या, कर सोलह शृङ्गार ।। जिने० ।। ३१ ।।
हाथाजी मेहदी राचणी, सिर केसर की खोल ।। जिने० ।। ३२ ।।
फोयाजी[5]काजल घुल रह्यो, विंदली भाल गुलाल ।। जिने०।।३३।।
माहिजी चतरया देहरा, वाहर सुरगीजी साल ।।जिने० ।। ३४ ।।
थंभाजी[6] थभा पूतल्या, चौसठ घूघर माल ।। जिने० ।। ३५ ।।
आदिनाथजी पाटे विराजिया, हीरा कीसी ज्योति ।।जिने०।।३६।।
सामाजी वैठ्या सायवा, पाड्याजी करेला वखान ।।जिने०।।३७ ।।

---

१ बुलावा, २ वत्ती, ३ एक प्रकार का वाजा । ४ दीपक । ५ नेत्रो मे
६ मन्दिर मे थम्भो पर कपडे की खोलिया ।

लाडूजी द्यो पण्डितजी ने जाय चोटनहार ॥ जिने० ॥ ३८ ॥
पहलो लाडू कैलाश गिरि चढ्यो,स्वामी आदिनाथजीके दरबार॥जिने०।
दूजो लाडूजी सम्मेद शिखरजी चढ्यो स्वामी बीसतीर्थङ्कर दरबार।जिने
अगणू[1]लाडू चम्पापुर चढ्यो,स्वामी नेमिनाथजी के दरबार ॥जिने०॥
पाचवो लाडू पावापुरी चढ्यो,स्वामी महावीरजी के दरबार ॥जिने०॥
छठो लाडू विदेहा चढ्यो,स्वामी बीस तीर्थङ्कर दरबार ॥जिने०॥
सातवो लाडू सोनागिरि चढ्यो, चन्दाप्रभुजी के दरबार ॥ जिने० ।[2]
भोर उगन्ता यो कह्यो लाडू द्यो जी चढाय ॥जिने०॥
तेरस चौदस मावस्या, सै[3] दीवाली की रात ॥जिने०॥
दोय घडीजी तडको रह्यो स्वामी वर्धमान गया निर्वाण ॥जिने०॥
पौ[4] को जी तारो ऊगियो, उगन्ते परभान ॥जिने०॥
पान भलाजी पनवाडका, फूल भला अजमेर ॥जिने०॥
सगली[5] गोठ्या को अविचल राज,
सगला[6] पचाको अविचल राज होय ॥ जिने० ॥
चार दान द्यो भाव सो, सुपात्र कुपात्र ने जान ॥ जिने० ॥
लाडू चढाके घर गया, घर घर बूरा भात ॥ जिने० ॥
पण्डिता ने निर्मल धोवती, गुरा न औषध दान ॥ जिने० ॥
जो यो लाडू गायसी, ताके पढत सुनत सुख होय ॥जिने०॥
म्हैं गायोछै म्हाका भाव सो, म्हाके घर आनन्द उछाह ॥जिने०॥

---

१ तीसरा । २ यहा जयपुर मे ऐसा भी पाठ बोलते हैं —
सातवो लाडू जयपुर चढ्यो, सवाई जयपुर के मन्दिरा माँहि ॥जिने०॥
इसी प्रकार हरेक स्थान पर मूलनायक प्रतिमा का नाम बोलते हैं ।
३ ठीक । ४ प्रात काल का । ५–६ सब ।

बारह मासा राजुलजी का

राग मरहठी (झडी)

मैं लूंगी श्री अरहन्त, सिद्ध भगवन्त, साधु सिद्धान्त, चार का शरना,
निर्नेन नेम विन हमे जगत क्या करना ॥टेर॥

आषाढ मास (झडी

सखि आया आषाढ घनघोर, मोर चहु ओर, मचा रहे शोर, इन्हें समझाओ। मेरे प्रीतम की तुम पवन परीक्षा लाओ। हैं कहा बसे भरतार, कहा गिरनार, महाव्रत धार, बसे किस वन मे, क्यो बाध मोड दिया तोड क्या सोची मन मे ॥

झर्वंटे—जा जा रे पपैया जा रे, प्रीतम को दे समझारे।
रही नौभव सङ्ग तुम्हारे, क्यो छोड दई मझधारे ॥

(झडी)

क्यो विना दोष भये रोष नही सन्तोष,यही अफसोस बात नहि बूझी। दिये जादो छप्पन कोड छोड क्या सूझी। मोहि राखो शरण मझार, मेरे भर्तार,करो उद्धार, क्यो दे गये झुरना। निर्नेन नेम विन हमे जगत क्या करना ॥

श्रावण मास (झडी)

सखि श्रावण सवर करे, समन्दर भरे,दिगम्बर धरे, सखी क्या करिये। मेरे जी मे ऐसी आवे महाव्रत धरिये। सब तजूं साज शृङ्गार तजूं ससार क्यो भव मझार मैं जो भरमाऊं। क्यो पराधीन तिरिया का जन्म फिर पाऊं ॥

झर्वंटें—सब सुनलो राज दुलारी दुख पड गया हम पर भारी।
तुम तज दो प्रीति हमारी, करलो सयम की तय्यारी ॥

(झड़ी)

अब आ गया पावस काल, करो मत टाल भरे सब ताल महाजल बरसे। बिन परसे श्री भगवन्त मेरा जी तरसे। मैंने तज दई तोड़ सलोर, पलट गई पौन, मेरा है कौन, मुझे जग तरना। निर्नेम नेम बिन मुझे जगत क्या करना।

भादो मास (झड़ी)

सखि भादो भरे तालाब, मेरे चित चाव, करूंगी उछाह मे सोलह कारण। करूं दश लक्षण के व्रत से पाप निवारण। करूं रोट तीज उपवास पञ्चमी अकास, अष्टमी खास निशल्य मनाऊं, तपकर सुगन्ध दशमी का कर्म जलाऊं॥

झवटे—सखि दुद्धर रस की धारा, तजि चार प्रकार आहार।
करूं उग्र उग्र तप सारा, ज्यां होय मेरा निस्तारा॥

(झड़ी)

मैं रत्नत्रय व्रत धरू, चतुर्दशी करू, जगत से तिरू, करू पखवाड़ा। मैं सबसे क्षिमाऊ दोष तजू सब राड़ा। मै साता तत्त्व विचार, कि गाऊ मल्हार, तजा ससार, तें फिर क्या करना। निर्नेम नेम बिन हमे जगत क्या करना।

आसोज मास (झड़ी)

सखि आगया मास कुवार, लो भूषण तार, मुझे गिरनार की दे दो आज्ञा, मेरे प्राणिपात्र आहार की है प्रतिज्ञा। लो तार ये चूड़ामणि, रतन की कणी, सुनो सब जणी खोल दो वैनी, मुझको अवश्य परभात ही दीक्षा लेनी॥

झर्वटें—मेरे हेतु कमण्डल लाओ, इक पीछी नई मगावो।
मेरा मत ना जी भरमावो, मत सूते कर्म जगावो॥

(झडी) है जग मे असाता कर्म, बडा बेशर्म, मोह के मर्म से धर्म न सूझै। इनके वश अपना हित कल्याण न बूझै। जहाँ मृग तृष्णा को घूर, वहाँ पानी दूर, भटकना भूर, वहाँ जल भरना। निर्नेम नेम विन हमे जगत मे क्या करना॥

कार्तिक मास (झडी)

सखि कार्तिक काल अनन्त, श्री अरहन्त की सन्त महन्त ने आज्ञा पाली। धर योग यत्न भव भोग की तृष्णा टाली। सजे चौदह गुण अस्थान, स्वपर पहचान, तजे मक्कान महल दीवाली। लगा उन्हे मिष्ट जिन धर्म अमावस काली॥

झर्वटें—उन केवल ज्ञान उपाया, जग का अन्धेर मिटाया।
जिसमे सब विश्व समाया, तन धन सब अथिर बताया॥

(झडी) है अथिर जगत सम्बन्ध, अरी मति मन्द जगत का अन्ध है धुन्ध पसारा। मेरे प्रीतम ने सत जान के जगत बिसारा। मैं उनके चरण की चेरी, तू आज्ञा दे मा मेरी, है मुझे एक दिन मरना। निर्नेम नेम विन हमे जगत मे क्या करना॥

अगहन मास (झडी)

सखि अगहन ऐसी घडी, उदय मे पडी, मैं रह गई खडी, दरस नहि पाये। मैं सुकृत के दिन विरथा यो ही गवाये। नहि मिले हमारे पिया, न जप तप किया, न सयम लिया, अटक रही जग मे। पडी काल अनादि से पाप की बेडी पग मे॥

झर्वटें—मत भरियो माग हमारी, मेरे शील को लागे गारी।
मत डारो अ जन प्यारी, मैं योगन तुम संसारी॥

(झडी) हुए कन्त हमारे जती, मैं उनकी सती, पलट गई रति, तो

वीर, हरी सब पीर, बधाई धीर, पकर लिये चरना। निर्नेम नेम बिन हमे जगत क्या करना ।।

फागुन मास (झडी)

सखि आया फाग बडभाग, तो होरी त्याग, अठाई लाग के मैनासुन्दर। हरा श्रीपाल का कुष्ट कठोर उदम्बर। दिया धवल सेठ ने डार, उदधि की धार तो हो गये पार, वे उस ही पल मे। अरु जा परणी गुणमाल न डूबे जल मे।

झर्वटें—मिली रैन मजूषा प्यारी, निज ध्वजा शील की धारी।
परी सेठ पै मार करारी, गया नर्क मे पापाचारी ।।

(झडी) तुम लखो द्रोपदी सती, दोष नहि रती, कहे दुर्मती पद्म के बन्धन। हुआ धात की खण्ड जरूर शील इस खण्डन। उन फूटे घडे मझार। दिया जल डाल तो वे आधार थमा जल झरना। निर्नेम नेम विन हमे जगत मे क्या करना ।।

चैत्र मास (झडी)

सखी चैत्र मे चिन्ता करे न कारज सरे शील मे टरे कर्म की रेखा। मैंने शील से भील को होता जगत गुरु देखा। सखि शील में सुलसा तिरी सुतारा फिरी सलामी करी श्री रघुनन्दन। अरु मिली शील परताप पवन से अञ्जन ।।

झर्वटें—रावण ने कुमत उपाई, फिर गया विभीषण भाई।
छिन मे जा लक गमाई, कुछ भी नहि पार बसाई ।।

(झडी) सीता सती अग्नि मे पडी तो उस ही घडी वह शीतल पडी चढी जल धारा। खिल गये कमल भये गगन मे जय जयकारा। पद पूजे इन्द्र, धर्नेन्द्र, भई शीतेन्द्र, श्री जैनेन्द्र ने ऐसा वरना। निर्नेम नेम विन हमे जगत मे क्या करना।

वैशाख मास (झडी)

सखी आई वैशाखी मेख, लई मैं देख, ये ऊरध रेख पडी मेरे कर मे। मेरा हुआ जन्म यूं ही उग्रसेन के घर मे। नहि लिखा करम मे भोग, पडा है जोग, करो मत शोक, जाऊ गिरनारी। है मात पिता अरु भ्रात से क्षमा हमारी ।।

झर्वटें—मैं पुण्य प्रताप तुम्हारे, घर भोगे भोग अपारे।
जो विधि के अङ्क हमारे, नहि टरे किमी के टारे ॥
(झडी) मेरी सखी सहेली वीर, न हो दिलगीर, धरो चित धीर, मैं क्षमा कराऊं। मैं कुल को तुम्हारे कबहु न दाग लगाऊ। वह ले आज्ञा उठ खडी थी मगल घडी, जा वन मे पडी, सुगुरु के चरना। निर्नेम नेम बिन हमे जगत मे क्या करना ॥

जेठ मास (झडी)

अजी पडे जेठ की धूप, खडे सब भूप, वह कन्या रूप, सती बड भागन। कर सिद्धन को प्रणाम किया जग त्यागन। अजि त्यागे सब ससार चूडिया तार कमण्डलु धार, कै लई पिछौटी। अरु पहरकै साडी श्वेत उपाडी चोटी।
झर्वटे—उन महा उग्र तप कीना, फिर अच्युतयेन्द्र पद लीना।
है धन्य उन्ही का जीना, नही विषयन मे चित दीना ॥
(झडी) अजी त्रियावेद मिट गया, पाप कट गया, वढा पुरुपारथ। करे धर्म अरथ फल भोग रुचे परमारथ। वो स्वर्ग सम्पदा भुक्ति, जायगी मुक्ति, जैन की उक्ति मे निश्चय धरना। निर्नेम नेम बिन हमे जगत मे क्या करना ॥
जो पढे इसे नर नारि, बढे परिवार सबै ससार मे महिमा पावें। सुन सतियन शील कथान विघ्न मिट जावे। नहि रहे सुहागिन दुखी होय सब सुखी, मिटे बेरुखी पावे वे आदर। वे होय जगत मे महा सतियो की चादर।
झर्वटें—मै मानुप कुल मे आया, अरु जाति यती कहलाया।
है कर्म उदय की माया, बिन सयम जन्म गवाया ॥

झडी—ग्राम, सवत्, कवि, वश, नाम—

है दिल्ली नगर सुवास, वतन है खास, फाल्गुन मास, अठाई आठै। हो उनके नित कल्याण छपा कर बाटे। अजी विक्रम अब्द उनीस पै धर पैतीस, श्री जगदीश का ले लो शरणा। कहै दास नैनसुख दोष पै दृष्टि न धरना। मै लू गी श्री अरहन्त सिद्ध भगवन्त साधु सिद्धान्त चार का सरना, निर्नेम नेम बिन हमे जगत मे क्या करना ॥